CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

भोट-भारती ग्रन्थमाला - ५६

कातन्त्र तथा कच्चायन व्याकरण का समीक्षात्मक अध्ययन

ग्रन्थकार एवं सम्पादक

प्रो० जानकीप्रसाद द्विवेदी
व्याकरणाचार्य, एम० ए०,
पी-एच० डी०, डी० लिट्०

डॉ० सुरेन्द्र कुमार
एम० ए० (पालि-संस्कृत), पी-एच० डी०,
उपाचार्य, पालिविभाग

केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, वाराणसी

बुद्धाब्द : २५४८ खीस्ताब्द : २००४

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

BIBLIOTHECA INDO-TIBETICA SERIES - 56

A COMPARATIVE AND CRITICAL STUDY OF KĀTANTRA AND KACCĀYANA GRAMMARS

Author & Editor

Prof. Janaki Prasada Dwivedi
Vyākaraṇācārya, M. A.,
Ph-D., D. Litt.

Dr. Surendra Kumar
M. A. (Pali-Sanskrit), Ph-D.,
Reader, Deptt. of Pali

भोटविद्या संस्थानम्

CENTRAL INSTITUTE OF HIGHER TIBETAN STUDIES
SARNATH, VARANASI

B.E. 2548 C.E. 2004

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

भोट-भारती ग्रन्थमाला - ५६

कातन्त्र तथा कच्चायन व्याकरण का समीक्षात्मक अध्ययन

ग्रन्थकार एवं सम्पादक

प्रो० जानकीप्रसाद द्विवेदी
व्याकरणाचार्य, एम० ए०,
पी-एच० डी०, डी० लिट्०

डॉ० सुरेन्द्र कुमार
एम० ए० (पालि-संस्कृत), पी-एच० डी०,
उपाचार्य, पालिविभाग

भोट विद्या संस्थानम्

केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, वाराणसी

बुद्धाब्द : २५४८ खीस्ताब्द : २००४

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रकाशकीय

यह हर्ष का विषय है कि संस्थान के संस्कृत विभाग के भूतपूर्व आचार्य प्रो० जानकी प्रसाद द्विवेदी तथा पालि विभाग के डॉ० सुरेन्द्र कुमार ने 'संस्कृत के कातन्त्र व्याकरण और पालि के कच्चायन व्याकरण का तुलनात्मक अध्ययन' की योजना दो वर्ष पूर्व प्रारम्भ की। फलस्वरूप ''कातन्त्र और कच्चायन व्याकरण का समीक्षात्मक अध्ययन'' नाम से ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है। कातन्त्र व्याकरण की परम्परा यद्यपि भारतवर्ष में लुप्तप्राय है, तिब्बत में इसके अध्ययन-अध्यापन की परम्परा सैकड़ों साल से अविच्छिन्न रूप से चली आ रही है। इसपर प्रचुर मात्रा में वृत्ति, टीकादि तिब्बती विद्वानों द्वारा लिखी गई हैं।

इन दो व्याकरणों के लघु रूप एवं संरचना शैली की समानता को देखते हुए किसपर किसका प्रभाव पड़ा, इसमें विद्वानों में मतैक्य नहीं है। सिंहली परम्परा आदि के अनुसार कच्चायन व्याकरण का समय बुद्धकाल तक माना जाता है, जबकि अनेक मतों में परवर्ती माना जाता है।

मैं दोनों विद्वानों की इस महत्त्वपूर्ण कार्य के सम्पादन के लिये प्रशंसा करता हूँ और आशा करता हूँ कि इसका प्रकाशन दोनों व्याकरण परम्परा के अध्ययन के लिये लाभप्रद सिद्ध होगा।

सारनाथ, वाराणसी
७ जुलाई २००४

नवांग सम्तेन
निदेशक

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

भूमिका

वेद को परमेश्वर का निःश्वास कहा जाता है। उस सर्वज्ञानमय वेद के अर्थ का बोध कराने में प्रातिशाख्य-निरुक्त के अतिरिक्त व्याकरणशास्त्र विशेष सहायक होता है। इसलिए छान्दोग्योपनिषद् तथा सारसिद्धान्तकौमुदी आदि में उसे वेदों का वेद घोषित किया गया है। शिक्षा, कल्प, ज्योतिष तथा छन्द भी वेदार्थज्ञान में सहायक होने के कारण वेदाङ्ग माने गए हैं, परन्तु मुखस्थानीय व्याकरण ही ६ अङ्गों में प्रधानता को प्राप्त करता है—**"प्रधानं च षट्स्वङ्गेषु व्याकरणम्"** (म० भा०-पस्पशाह्निक)। इस प्रकार असन्दिग्धरूप में कहा जा सकता है कि अनादिसिद्ध वेद के अर्थावबोधहेतु प्रातिशाख्य-निरुक्त तथा व्याकरणशास्त्र की शब्दानुशासनपरम्परा प्राचीनकाल से ही प्रचलित रही है। इनमें से प्रातिशाख्य और निरुक्त तो वैदिकशब्दानुशासन का अंशतः ही आख्यान करते हैं, जबकि व्याकरणशास्त्र प्रकृति-प्रत्यय-आदेश-आगम आदि के माध्यम से वैदिक तथा लौकिक दोनों प्रकार के शब्दों का अनुशासन करने में समर्थ होता है।

व्याकरणशास्त्र की दो धाराएँ या परम्पराएँ प्रमुख मानी जाती हैं—**माहेश्वरपरम्परा** तथा **माहेन्द्रपरम्परा**। पाणिनीय-चान्द्र आदि व्याकरण माहेश्वरपरम्परा का अनुसरण करते हैं, परन्तु वर्तमान में माहेन्द्र परम्परा का परिपोषक व्याकरण तो केवल कातन्त्र को ही कहा जा सकता है। यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि माहेश्वर परम्परा में प्रत्याहारप्रक्रिया, कृत्रिम व्यवहार की अधिकता तथा शब्दलाघव का आश्रय लिया जाता है, जबकि माहेन्द्र परम्परा लोकव्यवहार, संक्षेप, सरलता एवं अर्थलाघव का अनुसरण करती है। इससे माहेन्द्र परम्परानुसारी कातन्त्र व्याकरण की ये चारों विशेषताएँ सिद्ध हो जाती हैं। ये चारों विशेषताएँ 'कातन्त्र' शब्द की व्युत्पत्ति तथा 'व्याख्यानप्रक्रिया' नामक लघु ग्रन्थ में आचार्य शशिदेव द्वारा बताए गए कातन्त्रीय प्रयोजनों से ध्वनित होती हैं। 'कातन्त्र' शब्द की व्युत्पत्ति है—कु=ईषत् संक्षिप्तं तन्त्रं व्याकरणमिति **कातन्त्रम्**। **व्याख्यानप्रक्रिया** में कहा गया है कि वैदिक, धनी, युवक, वणिक् तथा लोकयात्रादि कार्यों में निरन्तर व्यासक्त रहने वाले मनुष्यों को भी सरलता से अल्प समय में व्याकरण का बोध कराने के लिए ही कलाप=कातन्त्र की रचना हुई है।

छान्दसाः स्वल्पमतयः शास्त्रान्तररताश्च ये ।
ईश्वरा वाच्यनिरतास्तथालस्ययुताश्च ये ।।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

वणिजस्तृष्णादिसंसक्ता लोकयात्रादिषु स्थिता-
स्तेषां क्षिप्रं प्रबोधार्थमनेकार्थं कलापकम् ।।

इस व्याकरण के कातन्त्र, कलाप, कौमार, शार्ववर्मिक, दौर्गसिंह तथा मुष्टि नाम मिलते हैं। भगवान् शङ्कर से उपदेश प्राप्त करके स्वामिकार्त्तिकेय ने इसे मयूरपिच्छ पर लिखा था, इसलिए इसे **कलाप** कहते हैं—

शङ्करस्य मुखाद् वाणीं श्रुत्वा चैव षडाननः ।
लिलेख शिखिनः पिच्छे कलापमिति कथ्यते ।।

इससे यह भी कहा जा सकता है कि कातन्त्र व्याकरण स्वामिकार्त्तिकेय द्वारा प्रवर्तित होने के साथ ही भगवान् शङ्कर द्वारा अनुमोदित भी है। कुमार=कार्त्तिकेय द्वारा प्रवर्तित होने, कुमार=बालकों के लिए हितकारक होने तथा कुमारी-सरस्वती के द्वारा पढ़े जाने के कारण इसे **कौमार** नाम से अभिहित किया जाता है। सन्धि-नामचतुष्टय-आख्यातनामक तीन अध्यायों की रचना शर्ववर्मा ने की है। अतः इसे **शार्ववर्मिक** कहते हैं। दुर्गसिंह ने इसका परिष्कार किया है तथा वृत्ति-टीका-उणादिसूत्रवृत्ति-लिङ्गानुशासन-परिभाषावृत्ति आदि ग्रन्थों की रचना से इसका पर्याप्त उपकार भी किया है। इस कारण इसे दुर्गसिंह के नाम पर **दौर्गसिंह-दुर्गसिंहीय** भी कहा जाता है। मुष्टिपरिमित अल्प होने से इसका **मुष्टि** नाम भी मिलता है।

वस्तुतः इसकी रचना राजा **सातवाहन** को व्याकरण सिखाने के उद्देश्य से की गई थी। कथासरित्सागर में कहा गया है कि आन्ध्रदेशीय राजा सातवाहन वसन्त ऋतु में एक बार जब रानियों के साथ जलविहार कर रहे थे, तो पानी की बौछार से श्रान्त होकर उनकी ब्राह्मणजातीया महारानी ने प्रार्थना की—'**मोदकैर्मा ताडय**'। इस वचन का तात्पर्यार्थ था—'मुझ पर पानी मत फेंको'। किन्तु व्याकरणशास्त्रीय सन्धिविषयक ज्ञान से अनभिज्ञ होने के कारण राजा ने 'मुझे मोदक=लड्डुओं से मारो' यह अर्थ समझकर उस अनवसर में महारानी को मोदक समर्पित किए। तब उपहास करते हुए महारानी ने कहा था—'महाराज! जलाशय में मोदकों का क्या उपयोग'? मैंने तो आपसे कहा था—'मुझ पर पानी मत फेंको'। आप 'मा' और 'उदक' शब्दों की सन्धि भी नहीं जानते। जलक्रीडा का यह अवसर (प्रकरण) भी आपके ध्यान में नहीं आया, इसलिए आप मूर्ख ही कहे जा सकते हैं—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

सन्धिमात्रं न जानासि माशब्दोदकशब्दयोः ।
न च प्रकरणं वेत्सि मूर्खस्त्वं कथमीदृशः ।।

(क० स० सा० ७/११७)।

यह सुनकर राजा लज्जित हुए और व्याकरण सीखने की प्रतिज्ञा की। सभापण्डित शर्ववर्मा ने एक ऐसा व्याकरण बनाने की बात कही, जिसे पढ़कर व्यक्ति ६ महीने में ही व्याकरण सीख जाए। इसकी सफलता के लिए उन्होंने अपनी आराधना से स्वामिकार्त्तिकेय को प्रसन्न करके '**सिद्धो वर्णसमाम्नायः**' सूत्र प्राप्त किया, जिसके आधार पर तीन अध्यायों, १९ पादों तथा ८५५ सूत्रों में जो व्याकरण बनाया, उसे ही **कातन्त्र** कहते हैं। इसी भाव को 'कलापचन्द्र' नामक टीका के रचनाकार कविराज सुषेण विद्याभूषण ने इन शब्दों में अभिव्यक्त किया है—

राजा कश्चिन्महिष्या सह सलिलगतः खेलयन् पाणितोयैः
सिञ्चंस्तां व्याहृतोऽसावतिसलिलतया मोदकं देहि देव!
मूर्खत्वात् तन्न बुद्ध्वा स्वरघटितपदं मोदकस्तेन दत्तो
राज्ञी प्राज्ञी ततः सा नृपतिमपि पतिं मूर्खमेनं जगर्ह ।।

''पुरा किल श्रीसातवाहनाभिधानं वसुधाधिपं झटिति व्युत्पादयितुं प्रतिश्रुतवता भगवता शर्ववर्माचार्येण कुमाराभिधानो भगवान् भवानीसुतस्तपसा समाराधितः, स च तदाराधनाधीनतामुपगतः सन् निजव्याकरणज्ञानमाविर्भावयितुं पद्यपादरूपं सूत्रमिदमादिदेश—''सिद्धो वर्णसमाम्नाय इति'' (क० च० १/१/१)।

कातन्त्र के सम्बन्ध में '**काकलापं कलापम्, का चेदानीं मम वैयाकरणपारशवेषु कातन्त्रिकेष्वास्था**' इत्यादि अनेक आक्षेपवचन प्राप्त होते हैं, तथापि देवनागरी-बँगला-उत्कल-शारदा आदि विविध लिपियों में प्राप्त समृद्ध वाङ्मय, जैनाचार्यों की २७ टीकाओं, तिब्बतीभाषा की ४५ टीकाओं-१२ ग्रन्थों के तिब्बती अनुवाद तथा बङ्गाल-आसाम-कश्मीर-राजस्थान आदि प्रदेशों एवं नेपाल-भूटान-श्रीलङ्का आदि देशों में इसके प्रचलित अध्ययन से इसकी उपयोगिता-महत्त्व आदि को किसी भी प्रकार कम नहीं समझा जा सकता। तिब्बती विद्वान् आनन्दध्वज (कुङ्गा-ग्यलच्छन) ने अपने तिब्बती ग्रन्थ 'अहमष्टक की व्याख्या' में कातन्त्र को संस्कृत व्याकरणों में शिखामणि के समान कहा है।

वररुचि कात्यायन ने ६ पादों तथा ५४६ सूत्रों में कृत्प्रकरण की रचना की है। इसके धातुपाठ में लगभग १८०० धातुएँ उपलब्ध होती हैं। गणपाठ में २९

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

गण, उणादिपाठ में ६ पाद-३९९ सूत्र-२५५ प्रत्यय एवं लिङ्गानुशासन में ८७ कारिकाएँ पढ़ी गई हैं। इस प्रकार पाँचों अङ्गों के प्राप्त होने से इसे सर्वाङ्गपूर्ण=पञ्चाङ्ग व्याकरण कहा जा सकता है। श्रीपतिदत्त द्वारा रचित ७३० सूत्रों का कातन्त्रपरिशिष्ट, चन्द्रकातन्त्र तर्कालङ्कार द्वारा रचित ५२१ सूत्रों की छन्द:प्रक्रिया, दुर्गसिंह-भावमिश्र द्वारा व्याख्यात परिभाषाएँ, कातन्त्रविभ्रम, शिक्षासूत्र आदि ग्रन्थों ने इसकी श्रीवृद्धि में योगदान किया है। वर्तमान में मेरे द्वारा कातन्त्र के आठ ग्रन्थ तथा बीस शोधलेख प्रकाशित किए गए हैं, जिनमें ४ प्रमुख टीकाओं का सम्पादन, समीक्षा, मूलभूत वाङ्मय का पाठसंग्रह तथा तुलनात्मक अध्ययन द्वारा शोधकार्योपयोगी सामग्री देवनागरी लिपि में उपलब्ध कराई गई है। जैन साध्वी ज्ञानमती माता द्वारा कातन्त्ररूपमाला की हिन्दी व्याख्या, डॉ० रामसागर मिश्र द्वारा शारदालिपि से देवनागरी में लिप्यन्तर करके 'शिष्यहितावृत्ति-शिष्यहितान्यास' नामक दो ग्रन्थों का सम्पादन एवं डॉ० धर्मदत्त चतुर्वेदी द्वारा कातन्त्रोणादिसूत्रों का सम्पादन किया गया है।

इसे भोटदेशीय विद्वान् बौद्ध व्याकरण तथा दिगम्बर जैनमुनि पूज्य श्रीविद्यानन्द जी महाराज-श्रीनेमिचन्द्र शास्त्री-प्रो० राजाराम जैन आदि विद्वान् जैन व्याकरण मानते हैं। यह तभी सिद्ध हो सकता है जब रचनाकार शर्ववर्मा के जैन या बौद्ध आचार्य होने में प्रबल प्रमाणभूत सामग्री उपलब्ध हो जाए। परन्तु मुझे अभी तक ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिला है, जिसके आधार पर निश्चयेन इसे जैन या बौद्ध व्याकरण कहा जा सके। यदि रचनास्थल आन्ध्रप्रदेश में रहकर वहाँ के साहित्य का अध्ययन किया जाए तथा विद्वानों से स्थानीय व्याकरणपरम्परा का परिज्ञान किए जाए तो किसी निष्कर्ष पर अवश्य ही पहुँचा जा सकता है।

कातन्त्ररचनाकार आचार्य शर्ववर्मा के काल के सम्बन्ध में विद्वानों ने अनेक मत व्यक्त किए हैं। युधिष्ठिर मीमांसक ने शर्ववर्मा का काल विक्रम से पूर्व २००० वर्ष माना है। पतञ्जलि से पूर्ववर्ती होने के कारण प्रचलित धारणा के अनुसार विक्रम पूर्व २०० वर्ष तो कहने में कोई बाधा प्रतीत नहीं होती। सामान्यतया इसका रचनाकाल यीशवीय प्रथम शताब्दी प्रचलित है। पाणिनीय अष्टाध्यायी में एक सूत्र है—"**सूत्राच्च कोपधात्**" (४/२/६५)। इसके अनुसार संख्याप्रकृति, सूत्रवाची तथा ककारोपध शब्द से अध्येतृ-अर्थ में होने वाले प्रत्यय का लुक् होता है। जैसे 'अष्टौ अध्याया: परिमाणमस्येति अष्टकं पाणिनीयं व्याकरणम्, तद् अधीयते विदन्ति वा अष्टका: पाणिनीया:' = आठ अध्यायों वाले

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

पाणिनीय व्याकरण के अध्येता, ज्ञाता। यहाँ 'अण्' प्रत्यय का लुक् होता है। इसी प्रकार 'त्रयोऽध्यायाः परिमाणमस्येति त्रिकं काशकृत्स्नम्, तदधीयते विदन्ति वा त्रिकाः काशकृत्स्नाः' शब्द का भी साधुत्व उपपन्न होगा। यहाँ 'अष्टक, त्रिक' शब्द संख्याप्रकृतिक, सूत्रवाची तथा कोपध हैं। अर्थात् "सूत्राच्च कोपधात्" (अ० ४/२/६५) इस सूत्र में तथा कात्यायन के 'संख्याप्रकृतेरिति वक्तव्यम्' इस वार्तिक में जो लक्षण निर्दिष्ट हैं, वे सभी यहाँ प्राप्त होते हैं। फलतः सूत्रनिर्दिष्ट कार्य भी प्रवृत्त हो जाता है। उसी प्रकार 'दशका वैयाघ्रपद्याः' शब्दरूप भी निष्पन्न होगा। महाभाष्य में पतञ्जलि ने भी 'संख्याप्रकृतेरिति वक्तव्यम्' के दो प्रत्युदाहरण भी दिए हैं—'माहावार्त्तिकः, कालापकः'। इनके मूल शब्द=प्रातिपदिक हैं—महावार्त्तिक और कलापक। इनमें 'महावार्त्तिक' शब्द सूत्रवाची और कोपध तो है परन्तु संख्याप्रकृतिक नहीं है। इसलिए यहाँ अध्येतृ-प्रत्यय 'अण्' का लुक् भी प्रवृत्त नहीं होता है। 'कलापक' शब्द को भी इसी प्रकार सूत्रवाची तथा कोपध मानना ही पड़ेगा। केवल सङ्ख्याप्रकृतिक न होने के कारण अध्येतृ-प्रत्यय का लुक् कार्य प्रवृत्त नहीं होगा और 'कालापकः' प्रयोग बनेगा। कलाप या कलापक शब्द कातन्त्र के ही नामान्तर हैं। महर्षि पतञ्जलि द्वारा दर्शित होने से कातन्त्रकार का रचनाकाल पतञ्जलि से पूर्व ही मानना पड़ेगा। युधिष्ठिर मीमांसक का जो यह अभिमत है कि पतञ्जलि का काल विक्रम से २००० वर्ष पूर्व है तो तदनुसार शर्ववर्मा का काल उससे भी पूर्व सिद्ध होगा। उनके अनुसार पर्याप्त समीक्षा के अनन्तर पतञ्जलि को विक्रमपूर्व १२वीं शताब्दी से बाद का कथमपि सिद्ध नहीं किया जा सकता।

भाषा को अपभ्रंशदोष से मुक्त रखने के लिए शब्दसाधुत्व का जो सिद्धान्त अपनाया जाता है और तदर्थ जो व्याकरणशास्त्र की रचना की जाती है, उसके प्रथम प्रवक्ता प्रायः **ब्रह्मा** ही माने जाते हैं। इसके बाद देवगुरु **बृहस्पति** ने इन्द्र को जिस व्याकरण का उपदेश किया था, उसे **शब्दपारायण** के नाम से जाना जाता है। ऐसी मान्यता है कि यह व्याकरण प्रतिपदपाठरूप था, अर्थात् इसमें सभी पद पढ़े गए थे। इसी कारण इसका प्रवचन एक सहस्र दिव्य वर्षों में भी सम्पन्न नहीं हो सका। देवगुरु बृहस्पति उपदेशकर्ता हों, देवराज इन्द्र अध्येता रहे हों और अध्ययन की अवधि एक सहस्र दिव्य वर्षों की हो, फिर भी उसे पूर्णतया पढ़ा न जा सके तो उससे आश्चर्य होना स्वाभाविक है। इससे यह भी कहा जा सकता है कि बृहस्पति का व्याकरण मनुष्यों के लिए विशेष उपयोगी नहीं था। **तैत्तिरीय संहिता** (६/४/७) तथा उसके **सायणभाष्य** से यह विदित होता है कि देवताओं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

की प्रार्थना पर इन्द्र ने वाक्यों को पदरूप में तथा पदों को प्रकृतिप्रत्ययरूप में विभक्त किया था। इससे यह सिद्ध होता है कि सम्प्रति प्रचलित व्याकरण इन्द्र द्वारा परिष्कृत है। फलतः जिसके प्रथम प्रवक्ता ब्रह्मा और द्वितीय प्रवक्ता बृहस्पति थे, उस व्याकरण के प्रथम परिष्कारक इन्द्र सिद्ध होते हैं।

इन्द्र से पाणिनि तक अनेक ग्रन्थकार शाब्दिक आचार्य हुए। इनकी संख्या ८५ तक विविध ग्रन्थों में मिलती है। पाणिनि ने भी १० आचार्यों का स्मरण अष्टाध्यायी में किया है—१. आपिशलि, २. काश्यप, ३. गार्ग्य, ४. गालव, ५. चाक्रवर्मण, ६. भारद्वाज, ७. शाकटायन, ८. शाकल्य, ९. सेनक तथा १०. स्फोटायन। पाणिनि के पश्चात् भी लगभग ४५ व्याकरणों की रचना हुई, जिनमें प्रायः १५ व्याकरण मुद्रित भी हैं। कुछ ऐसे भी व्याकरण बने, जिनका अध्ययन-अध्यापन बिल्कुल ही नहीं हुआ या कुछ समय तक किसी स्थानविशेष में ही हुआ, परन्तु पाणिनि-परवर्ती व्याकरणों में समय की दृष्टि से कातन्त्र व्याकरण को प्रथम तथा वाङ्मय-उपयोगिता-प्रचार-प्रसार की दृष्टि से उत्कृष्ट कहा जा सकता है।

इन्द्र, चन्द्र, काशकृत्स्न, आपिशलि, शाकटायन, पाणिनि, अमरसिंह तथा जैनेन्द्र (द्र०, कविकल्पद्रुम) इन ८ आदिशाब्दिकों में यद्यपि कातन्त्र के रचयिता का नाम नहीं लिया गया है, तथापि उसे ऐन्द्रसम्प्रदायानुसारी मानकर सम्बन्ध जोड़ा जा सकता है। तत्त्वनिधि नामक ग्रन्थ में परिगणित ९ व्याकरणों के अन्तर्गत कौमार व्याकरण की चर्चा की गई है, जो कातन्त्र का ही नामान्तर है। पञ्चधा, अष्टधा तथा नवधा व्याकरणों का उल्लेख अनेकत्र प्राप्त होता है। यह उल्लेख शब्दसाधुत्व के लिए अपनाई जाने वाली भिन्न-भिन्न परन्तु मान्य प्रक्रियाओं का परिचायक है। कातन्त्र व्याकरण की भी प्रक्रिया पाणिनीय आदि व्याकरणों से प्रायः भिन्न ही है। अतः इसे उक्त परिधि में मानना निर्बाध प्रतीत होता है।

महाकरुणा के सागर तथागत बुद्ध का उपदेश उस भाषा में हुआ जो प्रारम्भ में मागधी तथा बाद में पालि कहलायी। उसकी साहित्यिक अभिवृद्धि निरन्तर होती चली आ रही है। यद्यपि भारतीय संस्कृति की वाहिनी पालि-भाषा दीर्घकाल तक अपने ही देश में लुप्त-प्राय सी रही, परन्तु प्रज्ञावान् भिक्षुओं ने पुनः इसे अपने स्थान पर प्रतिष्ठित किया जिससे अध्ययन-अध्यापन इत्यादि का कार्य प्रारम्भ हो सका। आज यह अपने प्रभाव से चतुर्दिक् को प्रकाशित कर रहा है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

यह सर्वविदित है कि तथागत बुद्ध के उपदेश मौखिक थे, परन्तु वे उपदेश मौखिक होते हुए भी व्याकरण के नियमों के अनुसार ही होते थे। बुद्ध तथा उनके शिष्यों द्वारा वाक्यों का प्रयोग शब्दविद्या के नियमों के अनुसार ही होता था। बुद्ध ने युवावस्था में ही वेद, वेदाङ्ग, शब्दशास्त्र आदि का अध्ययन पूर्ण कर लिया था। उनके समय में अठारह भाषाएँ प्रचलित थीं, जो बृहत्तर भूखण्ड पर दमिल, किरात, सवर आदि अनेक जातियों द्वारा बोली जाती थीं। बुद्ध ने उन सभी भाषाओं को उपदेश के उपयुक्त नहीं पाया। क्योंकि उन भाषाओं में स्वर-व्यञ्जन की पूर्णता का अभाव था, जबकि बुद्ध के वाक्य ह्रस्व-दीर्घ, प्रकृति-प्रत्यय, निग्गहीत, लोप-वृद्धि आदि नियमों से पूर्ण हुआ करते थे। वे सर्वज्ञ थे अतः उनके वाक्यों में किसी प्रकार का दोष आ ही नहीं सकता था।

पालि सम्पूर्ण मध्यदेश में सभ्य समुदाय द्वारा बड़े गौरव से बोली जाती थी। सभी बुद्ध इसी भाषा में उपदेश करते हैं—इसलिए इसे 'तन्ति-धर' अर्थात् बुद्धवचन का (परम्परा) धारक कहा जाता है (वि० म० दी०-पृ० २७)। बुद्ध के गम्भीर उपदेशों को ग्रहण करने के बाद भिक्षुओं को चार प्रतिसम्भिदाओं का ज्ञान प्राप्त होता था। उनमें से एक थी निरुक्ति-प्रतिसम्भिदा। वहाँ निरुक्ति से अभिप्राय था—शब्दपरिभाषा, व्याकरणविश्लेषण तथा लिपि। इनमें दक्षता प्राप्त होने पर ही कोई भिक्षु **अर्हत्**-पद प्राप्त कर पाता था (ध० प० २४/१९)। इससे यह विदित होता है कि बुद्ध तथा उनके शिष्य शब्दविद्या के प्रति अत्यन्त गम्भीर थे। भिक्षुओं के लिए शब्दविद्या का ज्ञान परम आवश्यक था। व्याकरण की आवश्यकता भाषा की शुद्धि एवं वास्तविक अर्थावबोध के लिए होती है। यद्यपि व्यवहार में एक भाषा का प्रयोग था फिर भी अलग-अलग स्थानों से आएं भिक्षु अपने क्षेत्र की भाषा का मिश्रण कर ही देते थे। इन भिन्नताओं के कारण अर्थावबोध में जटिलता उत्पन्न हो जाती थी। व्याकरण-दोष उत्पन्न हो जाता था। अतः जिससे कि वे उपदेश ग्रहण करते समय व्याकरण के नियमों का भलीभाँति पालन कर सकें इसलिए इनका ज्ञान आवश्यक था। अतः यह कहा जा सकता है कि बुद्धकाल में ही पालि-भाषा के व्याकरण नियम प्रचलित थे और उनके अनेक विद्वान् भी हुए, जिन्हें पालि-साहित्य में **'अक्खर चिन्तका'** नाम से सम्बोधित किया गया है (सु० नि०-अ० क० भाग २, पृ० १६, २३, ३२१ इत्यादि)। प्रसिद्ध अट्ठकथाकार आचार्य बुद्धघोष ने भी पालि शब्द शास्त्र के अनुसार ही बुद्धवचन के अर्थों को समझने की सलाह दी है, जिससे विदित होता है कि उनके समय तक पालि शब्दशास्त्र के प्राचीन ग्रन्थ उपलब्ध थे। (द्र०-वि० म०, भाग २)

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट हो जाता है कि पालि-व्याकरण की अपनी स्वतन्त्र प्राचीन परम्परा रही है, जो आज तक प्रचलित है। इस क्रम में पालि के पाँच व्याकरणों का नामोल्लेख प्राप्त होता है—(१) बोधिसत्त्व व्याकरण, (२) कच्चायन व्याकरण, (३) सब्बगुणाकर व्याकरण, (४) मोग्गल्लान व्याकरण, (५) सद्दनीति व्याकरण। इन पाँच व्याकरणों में से आज कच्चायन व्याकरण का स्थान प्राचीनता की दृष्टि से सर्वोपरि है। बोधिसत्त्व व्याकरण आज उपलब्ध नहीं है। अत: उसके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता। कच्चायन व्याकरण मुख्य रूप से चार भागों में विभक्त है—सन्धि कप्पो, नाम कप्पो, आख्यात कप्पो तथा किब्बिधान कप्पो। नाम कप्पो के अन्तर्गत ही कारक, समास तथा तद्धित का समावेश किया गया है। किब्बिधान कप्पो का अन्तिम खण्ड उणादिकप्पो के रूप में है। कच्चायन की सूत्र-संख्या के सम्बन्ध में मतभेद है, परन्तु प्रकाशित ग्रन्थ में ६७५ सूत्र उपलब्ध हैं। कच्चायन व्याकरण को 'सुसन्धि कप्पो, कच्चायन गन्ध' जैसे नामों से भी अभिहित किया गया है। परन्तु कच्चायन द्वारा रचित होने के कारण 'कच्चायन व्याकरण' नाम अधिक ख्यातिप्राप्त हुआ।

इति कच्चोसपुत्तो तु तस्स कच्चायनो मतो ।
तेनेव कतसत्थम्पि कच्चायनन्ति ञायति ।
कच्चायनस्सिदं सत्थं तिमिना वचनत्थतो ।। (कच्चायन भेद)

यह तो सर्वविदित है कि महास्थविर महाकच्चायन तथागत गौतम बुद्ध के अस्सी महाश्रावकों में से एक थे। 'अङ्गुत्तर निकाय' के एतदग्गसुत्त में इनका उल्लेख विशेषताओं के साथ किया गया है (भाग १, पृ० २४)। ये तथागत के वचनों को अर्थ और व्यञ्जन दोनों प्रकार से समझकर उसकी व्याख्या प्रस्तुत करते थे, जबकि अन्य भिक्षु मात्र अर्थ अथवा व्यञ्जन ही कर पाते थे—''अञ्ञे किर तथागतस्स संखेपवचनं अत्थवसेन वा पूरेतुं सक्कोन्ति व्यञ्जनवसेन वा, अयं पन थेरो उभयवसेन पि सक्कोति, तस्मा अग्गो ति'' (अङ्गु० नि०-अट्ठ०, भाग १, पृ० २०५, नेत्तिप्पकरण)। उनके द्वारा उपदिष्ट कई सूत्र त्रिपिटक में संगृहीत हैं। उपदेश के एक अवसर पर उनके बारे में स्वयं बुद्ध का कथन है कि—'भिक्षुओ! महाकच्चायन पण्डित है, महाप्रज्ञ है महाकच्चायन भिक्षुओं। मुझसे भी यदि पूछते तो मैं भी वही अर्थ बतलाता जो महाकच्चायन ने बतलाया। यही अर्थ सही है, इसे ही धारण करो' (म० नि०-भाग १, पृ० १५२)। बौद्ध शासन में जिस प्रकार स्थविर सारिपुत्र धर्मज्ञान में अग्र तथा स्थविर उपालि विनय ज्ञान में अग्र थे उसी प्रकार स्थविर महाकच्चायन शब्दशास्त्र में अग्रणी थे—''एतदग्गं, भिक्खवे, मम

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

सावकानं, भिक्खूनं संखित्तेन भासितस्स वित्थारेन अत्थं विभजन्तानं, यदिदं महाकच्चायनो ति'' (म० नि०-भाग १, पृ० २४)।

'अपदान पालि' से यह ज्ञात होता है कि गौतम बुद्ध के समय में 'तिरिटिवच्छ' अथवा 'तिदिववच्छ' नाम का एक कच्चायन गोत्रीय ब्राह्मण था, जो अवन्ति जनपद के राजा चण्डपज्जोत का प्रधान पुरोहित था। उनके घर में एक पुत्र ने जन्म लिया जिसका नाम उन्होंने कच्चायन रखा, यह सोचकर कि कच्चायन-गोत्र की परम्परा को यह आगे बढ़ायेगा (अप०-भाग २, पृ० १०९)। अट्ठकथाओं में भी 'कच्चायन' गोत्र का उल्लेख है (कच्चायन ति गोत्तं-सु० वि० भाग १, पृ० १६५, सो गोत्तवसेन कच्चानो नाम जातो-अ० नि०, अट्ठ० भाग १, पृ० २२३)। युवावस्था में उन्होंने भारतीय परम्परा की सभी विद्याओं में दक्षता प्राप्त कर ली और पिता की मृत्यु के बाद राजा ने उन्हें प्रधान पुरोहित के पद पर प्रतिष्ठित किया। बौद्धसंघ में प्रवेश के बाद उन्होंने अवन्ति महाविहार की स्थापना की। इस परम्परा के भिक्षुओं को धार्मिक सिद्धान्तों तथा विनय के नियमों में विवाद उपस्थित होने पर निर्णय देने के लिए आमन्त्रित किया जाता था, जो द्वितीय संगीति अर्थात् बुद्ध निर्वाण से १०० वर्षों बाद तक प्रामाणिक रूप से दृष्टिगत होता है।

कच्चायन व्याकरण के रचनाकार के सम्बन्ध में अनेक मत प्रचलित हैं, परन्तु परम्परा से जो सर्वमान्य है, उसे स्पष्ट करते हुए शास्त्र में एक प्रसंग उपस्थित किया गया है। 'यह सूत्र किसने कहा? कहाँ कहा?' इनके उत्तर में यह बतलाया गया है कि—यम और उप्पल नाम के दो ब्राह्मण क्षय-व्यय कर्मस्थान को ग्रहण कर जाते हुए नदी के किनारे 'क्षय-व्यय, क्षय-व्यय' इस प्रकार ध्यान एकाग्र करते हुए एक ने जल में मछली को पकड़ने के लिए घूमते हुए बक को देखकर 'उदकबको' यह शब्द जोर से कहा, दूसरे ने घड़े पर (बंधे) कपड़े को देखकर 'घटपटो' यह शब्द जोर से कहा। उस समय भगवान् ने प्रकाश को मुक्त कर 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' अर्थात् सभी वचनों का अर्थ अक्षर से अवगत होता है। अक्षरों के हेर-फेर से अर्थ का समझना कठिन हो जाता है। यह सूत्रवचन प्रस्तुत किया और उनका कर्मस्थान प्रतिष्ठित किया। इसलिए भगवान् ने (यह सूत्र) कहा है (ऐसा) माना जाता है। उसे जानकर महाकच्चायन ने भगवान् से याचना कर हिमालय में जाकर मन:शिलातल पर दक्षिणदिशा की ओर शिर कर पूर्वदिशा की ओर अभिमुख होकर 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' से प्रारम्भ कर कच्चायन सूत्रों की रचना की (क० व०, भाग १, पृ० १०-११)।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्राचीनकाल से यह परम्परा में विद्यमान रहा है कि आचार्य शास्त्र के नियमों को, मन्त्रों को या अन्य किन्हीं विशेष सिद्धान्तों को भावी परम्परा के लिए सुरक्षित रखने की कामना से 'सूत्र' रूप में सृजित कर देते हैं और उपदेश के समय उसकी व्याख्या की जाती है। यद्यपि इस पद्धति में न जाने कितने ही सूत्र लुप्त हो गये, फिर भी इसका प्रचलन रुका नहीं। बौद्ध परम्परा में भी शिष्यों ने अपने आचार्यों से या प्रधान श्रावकों से उपदेशों को कण्ठस्थ रखने की दृष्टि से सूत्र रूप में इसे ग्रहण किया। यह बुद्ध के उपदेश की भी प्रामाणिक परम्परा रही है। इस परम्परा से भी यह दृष्टिगत होता है कि बुद्ध द्वारा कहे गये प्रथम सूत्र के आधार पर ही प्रारम्भ कर स्थविर कच्चायन ने पूर्ण व्याकरण के सूत्रों की रचना की। परम्परा से कच्चायन व्याकरण के रचनाकार के रूप में महाकच्चायन को ही मान्यता प्राप्त है। न्यासकार ने भी इस व्याकरण के कर्त्ता बुद्ध के प्रमुख शिष्य महाकच्चायन को बतलाते हुए यही उद्धृत किया—'कत्ता नाम एतदग्गं, भिक्खवे मम सावकानं. . .भगवता एतदग्गे ठपितो आयस्मा महाकच्चायनो' (पृ० ६)। अन्य उदाहरणों से भी यही स्पष्ट होता है। यथा—

कच्चानेन कतो योगो वुत्ति च सङ्घनन्दिनो ।
पयोगो ब्रह्मदत्तेन न्यासो विमलबुद्धिना ।।

इस गाथा के अनुसार कच्चायन ने सूत्र बनाये तथा सङ्घनन्दि ने वृत्ति एवं ब्रह्मदत्त ने उदाहरण बनाये। सङ्घनन्दि और ब्रह्मदत्त स्थविर कच्चायन के शिष्य थे, जो अवन्ति महाविहार परम्परा के थे। यह कार्य भी स्थविर कच्चायन की देख-रेख में ही हुआ। टीकाकारों का भी स्पष्ट मत है कि स्थविर महाकच्चायन ही इस ग्रन्थ के रचयिता हैं—''आचरिया पन लक्खणवुत्ति उदाहरणसंखातं इमं कच्चायनगन्धं कच्चायन थेरेन कतं ति वदन्ति'' (कच्चायनभेद टीका)।

परम्परा से चली आ रही इस प्रकार की मान्यता जिसे अनेक आचार्यों ने समय-समय पर अपनी लेखनी से विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत किया, उसे झुठलाना सम्भव नहीं प्रतीत होता। पाश्चात्य विद्वानों में से अधिकांश ने भी इसी मान्यता को प्रामाणिक माना है (जेम्स एलविस, मोरिश इत्यादि)।

कच्चायन व्याकरण को आधार बनाकर अनेक आचार्यों ने टीका एवं अनुटीका-ग्रन्थों की रचना की। उनमें से कुछ ग्रन्थों के नाम उपलब्ध होते हैं, जो निम्नलिखित हैं—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्र०सं०	ग्रन्थ	रचनाकार
१.	कच्चायन न्यास अथवा मुखमत्तदीपनी	विमलबुद्धि
२.	न्यास–पदीप	आचार्य छपद
३.	निरुत्तिसार मञ्जूसा	भिक्षु दाठानाग
४.	सुत्त निद्देस	आचार्य छपद
५.	सम्बन्धचिन्ता	स्थविर संघरक्खित
६.	कारिका	धम्मसेनापति
७.	सद्दत्थभेदचिन्ता	स्थविर सधम्मसिरि
८.	रूपसिद्धि	बुद्धप्पिय दीपङ्कर
९.	बालावतारो	धम्मकित्ति
१०.	सद्दसारत्थजालिनी	भदन्त नागित
११.	सारमञ्जूसा टीका	,, ,,
१२.	कच्चायनभेद	महायस
१३.	सारत्थविकासिनी टीका	,,
१४.	कच्चायनभेद महाटीका	,,
१५.	कच्चायनसार	धम्मानन्द अथवा महायस
१६.	कच्चायनसार पोराणटीका	महायस
१७.	सम्मोहविनासिनी	सद्धम्मविलास
१८.	सद्दबिन्दु	राजा क्यच्वा
१९.	कच्चायनवण्णना	महाविजितावी
२०.	वाचकोपदेस	,, ,,
२१.	अभिनवचूळनिरुत्ति	सिरिसद्धम्मालंकार
२२.	धातुमञ्जूसा	सीलवंस
२३.	बालप्पबोधन	अज्ञात

उपरोक्त व्याकरण ग्रन्थों में से कुछ ही देवनागरी में संपादित हो पाए हैं। यथा डॉ० भिक्षु सत्यपाल द्वारा कच्चायनन्यास का सन्धि प्रकरण सम्पादित होकर प्रकाशित है। 'बालावतारो' स्वामी द्वारका दास शास्त्री द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित है। 'सद्दबिन्दु' (टीका सहित) डॉ० सुरेन्द्र कुमार द्वारा सम्पादित एवं सं० सं० वि० वि० वाराणसी से प्रकाशित है। 'कच्चायन वण्णना का सन्धिकप्पो प्रो० लक्ष्मीनारायण तिवारी द्वारा सम्पादित एवं सं० सं० वि० वि० वाराणसी से प्रकाशित है। शेष सम्भवतः प्रकाशन से आज तक वञ्चित हैं। कच्चायन व्याकरण

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

के अतिरिक्त मोग्गल्लान व्याकरण और सद्दनीति व्याकरण की भी अपनी एक प्रौढ परम्परा है, जिसमें अनेक ग्रन्थ हैं, परन्तु देवनागरी में अब तक शायद ही कोई प्रकाशित हो पाया है।

ज्ञातव्य है कि हम दोनों व्यक्तियों ने '**शब्दविद्या** की माहेन्द्र परम्परा पर ग्रन्थलेखन-अनुवाद-सम्पादन-प्रकाशन की योजना' दि० १३/२/२००१ को तिब्बती संस्थान में प्रस्तुत की थी। इसमें कातन्त्र (संस्कृतव्याकरण), कच्चायन (पालिव्याकरण), मोग्गलान, प्रातिशाख्य (वैदिक व्याकरण) तथा तोलकाप्पियम्-नानूल (तमिल व्याकरण) ग्रन्थों का समावेश किया गया था। इस योजना में अभी तक कोई प्रगति नहीं हुई, परन्तु हम दोनों के द्वारा संक्षिप्त विवरण तथा समीक्षा के साथ ३० महीनों में जो अध्ययन किया गया है, वह यहाँ प्रस्तुत है।

विषय को सुविधा की दृष्टि से १३ शीर्षकों में विभक्त किया गया है—१. सञ्ज्ञा, २. परिभाषा, ३. विधि-निषेध, ४. नियम, ५. अतिदेश, ६. अधिकार, ७. सन्धि, ८. विभक्ति, ९. प्रत्यय, १०. आदेश, ११. आगम, १२. विकरण तथा १३. लोकव्यवहार। चौदहवें शीर्षक में इन १३ विषयों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है। क्रमसंख्या के अनुसार ३०१ विषयों की समीक्षा की गई है, किन्तु कुछ विषय ऐसे हैं, जिनकी क्रमसंख्या तो एक ही है, परन्तु उसमें प्रकरण आदि के भेद से २ से ५ तक विकरण प्रस्तुत किए गए हैं। अतः समीक्षित विषयों की कुल संख्या ३६० समझनी चाहिए। इस प्रकार कच्चायन के ६७५ सूत्रों में यदि ३६० सूत्र कातन्त्र से समानता रखते हैं तो दो भाषाओं के व्याकरणों में महती समानता का प्रबल आदर्श कहा जा सकता है। कृत्प्रकरण के विषयों में अपेक्षाकृत अधिक समानता देखे जाने के कारण यह सम्भावना की जा सकती है कि कातन्त्रव्याकरण के अन्तर्गत कृत्सूत्रों के रचनाकार कात्यायन ने ही पालिकच्चायन व्याकरण की भी रचना की हो। परन्तु यह गवेषणात्मक अध्ययन से ही स्पष्ट हो सकता है। युधिष्ठिर मीमांसक ने संभावना व्यक्त की है कि विक्रमादित्य की सभा के ९ रत्नों में अन्यतम वररुचि ही कातन्त्रीय कृत्सूत्रों के रचनाकार थे।

वस्तुतः इन दोनों व्याकरणों का विस्तृत समीक्षात्मक अध्ययन किया जाना चाहिए। इसके निदर्शनार्थ प्रथम परिशिष्ट में 'वर्णसमाम्नाय, स्वर, व्यञ्जन' इन तीन सञ्ज्ञाओं की विस्तृत समीक्षा प्रस्तुत की गई है। द्वितीय परिशिष्ट के अन्तर्गत ३६० विषयों की 'समानता-भिन्नता' इन शब्दों में समीक्षा की एक झलक दी गई है। भाषा तथा अनुबन्ध का भेद रहने पर भी उसका समावेश 'समानता' में ही किया गया है तथा भिन्नता के अन्तर्गत संक्षेप-विस्तार, लाघव-गौरव, उत्कर्ष-

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपकर्ष तथा सञ्ज्ञा-अतिदेश आदि में दृष्ट विविधता को लिया गया है। इसके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

समानता

	कातन्त्र		कच्चायन		कातन्त्र		कच्चायन
१.	अद्यतनी	-	अज्जतनी	१०.	आयनण्	-	णायन
२.	कर्म	-	कम्म	११.	इकण्	-	णिक
३.	परोक्षा	-	परोक्खा	१२.	क्त	-	त
४.	दानीम्	-	दानि	१३.	घञ्	-	ण
५.	र्हि	-	रहि	१४.	तवेन्	-	तवे
६.	स्वर	-	सर	१५.	वुण्	-	ण्वु
७.	ह्रस्व	-	रस्स	१६.	घ्यण्	-	ण्य
८.	तीय	-	तियो	१७.	यन्	-	य
९.	अण्	-	ण	१८.	खश्	-	अ

भिन्नता

	कातन्त्र		कच्चायन
१.	अधिकरण	-	ओकास।
२.	अनुस्वार	-	निग्गहीत।
३.	नदीसंज्ञा	-	प-सञ्ज्ञा।
४.	सिलोप	-	'इदं अदुं' आदेश।
५.	नदीवद्भाव	-	आकारादेश।
६.	अण् प्रत्यय	-	णव प्रत्यय।
७.	आनश् प्रत्यय	-	मान प्रत्यय।
८.	इन् प्रत्यय	-	णय प्रत्यय।
९.	ईयन्सु	-	इय प्रत्यय।
१०.	घ्-आदेश	-	घात आदेश।
११.	उ-प्रत्यय	-	रू-प्रत्यय।
१२.	म-प्रत्यय	-	रम्मो प्रत्यय।
१३.	शन्तृङ्	-	न्तु प्रत्यय।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१४. ह - हं प्रत्यय।
१५. स्मात् - म्हा प्रत्यय।
१६. मु-आगम - अं आदेश।
१७. क-प्रत्यय - क-आगम
१८. शि - चत्तारि।

१३ शीर्षकों में विभक्त विषयों की संख्या के परिज्ञानार्थ सारिणी दी जा रही है—

क्रम-संख्या	विषय	विषयसंख्या	अन्तर्गत विषयसंख्या
१.	सञ्ज्ञाएँ	४६	–
२.	परिभाषाएँ	०३	–
३.	विधियाँ	२४	–
३/अ	निषेध	०३	०९
४.	नियम	०४	–
५.	अतिदेश	०२	–
६.	अधिकार	०२	–
७.	सन्धियाँ	०८	०१
८.	प्रत्यय	९१	१५
९.	विभक्ति	१४	०३
१०.	विकरण	०६	–
११.	आदेश	८२	२९
१२.	आगम	१२	०२
१३	लोकव्यवहार	०४	–
१३		३०१	५९ = ३६०

उक्त सारिणी के अनुसार ३०१ मुख्य विषय हैं, जिनमें किसी न किसी रूप में 'कातन्त्र-कच्चायन' दोनों व्याकरणों में समानता कही जा सकती है। इनके अन्तर्गत ५९ ऐसे भी विषय हैं, जिन्हें स्वतन्त्र रूप में न दिखाकर मुख्य विषय के

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

ही साथ जोड़ दिया गया है। इस प्रकार वस्तुतः ३०१+५९=३६० विषयों की संख्या समझनी चाहिए। ५९ विषयों के सन्दर्भ अग्रिम सारिणी में द्रष्टव्य हैं—

क्रम-संख्या	ग्रन्थ-क्र०सं०	विषय-संख्या	विषय	अधिक विषयसंख्या
१.	५०	३	अकारलोप	२
२.	५९	५	नकारलोप	४
३.	७१	३	सि-लोप	२
४.	७६	२	सर्वनामकार्यनिषेध	१
५.	९०	२	प्रकृतिभाव	१
६.	९४	३	अण् प्रत्यय	२
७.	११८	२	उणादि प्रत्यय	१
८.	१२७	५	क्त-प्रत्यय	४
९.	१३८	२	ड-प्रत्यय	१
१०.	१५०	२	तुम्-प्रत्यय	१
११.	१५७	२	थक्-प्रत्यय	१
१२.	१६४	३	म-प्रत्यय	२
१३.	१७२	३	यु-प्रत्यय	२
१४.	१८०	२	शन्तृङ् प्रत्यय	१
१५.	१८६	२	चतुर्थी विभक्ति	१
१६.	१८९	२	पञ्चमी विभक्ति	१
१७.	१९५	२	सप्तमी विभक्ति	१
१८.	२०४	२	अकारादेश	१
१९.	२१६	३	आकारादेश	२
२०.	२१९	२	आयादेश	१
२१.	२२३	६	इवर्णादेश	५
२२.	२२६	२	इयादेश	१
२३.	२२९	४	उकारादेश	३
२४.	२३२	६	एकादेश	५
२५.	२३४	२	ओकारादेश	१

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२६.	२३५	३	ककारादेश	२
२७.	२४०	२	गकारादेश	१
२८.	२५४	२	तृतीयवर्णादेश	१
२९.	२५९	४	दीर्घादेश	३
३०.	२७०	३	यकारादेश	२
३१.	२८५	२	ह्रस्वादेश	१
३२.	२८८	२	इडागम	१
३३.	२९२	२	नु-आगम	१
				योग-५९

इन ३६० विषयों में से लगभग २८५ अंशों में उभयत्र येन केनापि रूपेण समानता तथा ६७ अंशों में किसी दृष्टि से भिन्नता कही जा सकती है। ३ अंशों में कातन्त्रीय अन्वर्थता तथा ३ अंशों में कच्चायनीय साङ्केतिकता के अतिरिक्त २ स्थानों में कच्चायनकार द्वारा समादृत प्रक्रिया का अन्तर द्रष्टव्य है।

एतदर्थ संस्थान के निदेशक प्रो० गेशे ङ्वङ् समतेन तथा विषय से सम्बद्ध अन्य सभी विद्वान् / अधिकारी धन्यवाद के पात्र हैं। वर्तमान प्रकाशनप्रभारी भिक्षु लोसङ् नोर्बू शास्त्री तथा उनके सभी प्रकाशन सहयोगियों को भी हम दोनों साधुवाद देना चाहते हैं, जिनकी तत्परता से ग्रन्थ के शीघ्र मुद्रण-प्रकाशन में सहायता मिली है।

प्रो० जानकीप्रसाद द्विवेदी
डॉ० सुरेन्द्र कुमार

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषयानुक्रमणिका

विषय **पृ० सं०**

प्रकाशकीय वक्तव्य (निदेशक) v

सम्पादकीय भूमिका - प्रो० जानकीप्रसाद द्विवेदी vii-xxii
डॉ० सुरेन्द्र कुमार

विषयानुक्रमणिका xxiii-xxix

१. सञ्ज्ञाओं का समीक्षात्मक अध्ययन १-२२

१. अग्नि संज्ञा-१
२. अघोष संज्ञा-१
३. अद्यतनी संज्ञा-२
४. अधिकरण संज्ञा-२
५. अनुस्वार संज्ञा-३
६. अपादान संज्ञा-३
७. अभ्यास संज्ञा-४
८. अव्ययीभाव संज्ञा-४
९. आत्मनेपद संज्ञा-५
१०. करण संज्ञा-५
११. कर्ता संज्ञा-५
१२. कर्म संज्ञा-६
१३. कर्मधारय संज्ञा-६
१४. कृत् संज्ञा-६
१५. कृत संज्ञा-६
१६. कृत्य संज्ञा-७
१७. क्रियातिपत्ति संज्ञा-७
१८. गुरु संज्ञा-८
१९. घोष संज्ञा-८
२०. तत्पुरुष संज्ञा-९
२१. दीर्घ संज्ञा-९
२२. द्वन्द्व संज्ञा-१०
२३. द्विगु संज्ञा-१०
२४. धातु संज्ञा-११
२५. नदी संज्ञा-११
२६. पञ्चमी संज्ञा-१२
२७. परस्मैपद संज्ञा-१२
२८. परोक्षा विभक्ति संज्ञा-१३
२९. पुरुष संज्ञा-१३
३०. बहुव्रीहि संज्ञा-१३
३१. भविष्यन्ती संज्ञा-१४
३२. लिङ्ग संज्ञा-१४
३३. वर्ग संज्ञा-१५
३४. वर्णसमाम्नाय संज्ञा-१६
३५. वर्तमाना विभक्ति संज्ञा-१६
३६. विभक्ति संज्ञा-१७
३७. व्यञ्जन संज्ञा-१७
३८. श्रद्धा संज्ञा-१८
३९. संबुद्धि संज्ञा १८
४०. सप्तमी संज्ञा-१९
४१. समास संज्ञा-१९
४२. सम्प्रदान संज्ञा-२०
४३. सार्वधातुक संज्ञा-२०
४४. स्वर संज्ञा-२१

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

४५. हेतु संज्ञा-२१
४६. ह्यस्तनी संज्ञा-२२
४७. ह्रस्व संज्ञा-२२

२. परिभाषाओं का समीक्षात्मक अध्ययन **२३-२४**

१. अनुबन्धों का प्रयोगाभाव-२३
२. वर्णवियोजन का निर्णय-२३
३. व्यञ्जन का स्वर से संयोजन-२४

३. विधियों का समीक्षात्मक अध्ययन **२५-३७**

१. 'अ' का लोप-२४-२५
२. 'अन्' का लोप-२५
३. 'अम्' का लोप-२६
४. आत्मनेपदविधान-२६
५. उत्तम पुरुष का विधान-२७
६. एकवचन का विधान-२७
७. 'जस्' का लोप-२७
८. त्रैकालिक प्रत्ययों का विधान-२८
९. नपुंसकलिङ्ग का विधान-२८
१०. नलोपादेश-२९-३०
११. परस्मैपदविधान-३१
१२. प्रथम पुरुष का विधान-३१
१३. मध्यम पुरुष का विधान-३१
१४. मकारलोप-३२
१५. लोपविधि-३२
१६. विभक्तिलुक्-३३
१७. विभक्तिलोप-३३
१८. वृद्धि-विधान-३४
१९. 'शस्' प्रत्यय का लुक्-३४
२०. सम्प्रसारणविधि-३४
२१. सकारलोप-३५
२२. 'सि' प्रत्यय का लोप-३५
२३. स्यादि विभक्तियों का लुक्-३६
२४. 'हि' का लोप-३६-३७

३-अ. निषेधरूप विधियों का समीक्षात्मक अध्ययन **३७-३८**

२५. 'ते' आदेश का निषेध-३७
२६. 'मे' आदेश का निषेध-३७
२७. सर्वनामसम्बन्धी कार्यों का निषेध-३८

४. नियमों का समीक्षात्मक अध्ययन **३९-४०**

१. कृत्प्रत्ययार्थ-३९
२. कृत्यादिप्रत्ययार्थ-३९
३. नाम आख्यात प्रत्ययों का स्थान-३९
४. पुरुषों में परवर्ती का विधान-४०

५. अतिदेश का समीक्षात्मक अध्ययन **४०-४१**

१. नदीवद्भाव-४०
२. पुंवद्भाव-४१

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

६. अधिकार का समीक्षात्मक अध्ययन **४२**

१. कालाधिकार-४२
२. द्विर्वचनाधिकार-४२

७. सन्धियों का समीक्षात्मक अध्ययन **४३-४७**

१. अनुस्वारसन्धि-४३
२. गुणसन्धि (एकारादेश)-४३
३. गुणसन्धि (ओकारादेश)-४४
४. द्वित्वसन्धि-४४
५. परसवर्णसन्धि-४४-४५
६. प्रकृतिभावसन्धि-४५
७. स्वरसन्धि (यकारादेश)-४६
८. स्वरसन्धि (वकारादेश)-४६-४७

८. प्रत्ययों का समीक्षात्मक अध्ययन **४७-८७**

१. 'अ' प्रत्यय समासान्त-४७
२. 'अण्' प्रत्यय तद्धितकृत-४७-४९
३. 'अत्' प्रत्यय-४९
४. 'अथु' प्रत्यय-४९
५. 'अधुना' प्रत्यय-५०
६. 'अनीय' प्रत्यय-५०
७. 'अम' प्रत्यय-५१
८. 'अल' प्रत्यय-५१
९. 'आ' प्रत्यय-५१
१०. 'आनश्' प्रत्यय (वर्तमान अर्थ में)-५२
११. 'आनश्' प्रत्यय (भविष्यत् अर्थ में)-५२
१२. 'आयनण्' प्रत्यय-५३
१३. 'आयि' प्रत्यय-५३
१४. 'आलु' प्रत्यय-५४
१५. 'इकण्' प्रत्यय-५४
१६. 'इत्रन्' प्रत्यय-५५
१७. 'इन' प्रत्यय-५५
१८. 'इन्' प्रत्यय (तद्धित)-५६
१९. 'इन्' प्रत्यय (कृत्)-५६
२०. 'इष्ठ' प्रत्यय-५७
२१. 'ई' प्रत्यय-५७
२२. 'ईय' प्रत्यय-५७
२३. 'ईयन्सु' प्रत्यय-५८
२४. 'उ' प्रत्यय-५८
२५. 'उकञ्' प्रत्यय-५८
२६. 'उणादि' प्रत्यय (भूत-वर्तमान-भविष्यत् अर्थों में)-५९
२७. 'उष' प्रत्यय-६०
२८. 'उष्य' प्रत्यय-६०
२९. 'ऊर' प्रत्यय-६०
३०. 'एयण्' प्रत्यय-६१
३१. 'क' प्रत्यय-६१
३२. 'कल' प्रत्यय-६२
३३. 'कि' प्रत्यय (कृत्)-६२
३४. 'कि' प्रत्यय (उपपद कृत्)-६२

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

३५. 'क्त' प्रत्यय (भूतकाल-कर्ता आदि अर्थों में)-६२-६४
३६. 'क्तवन्तु' प्रत्यय-६४
३७. 'क्ति' प्रत्यय-६५
३८. 'क्त्वा' प्रत्यय-६५
३९. 'क्यप्' प्रत्यय-६५
४०. 'क्विप्' प्रत्यय-६६
४१. 'खल्' प्रत्यय-६६
४२. 'खश्' प्रत्यय-६७
४३. 'घञ्' प्रत्यय-६७
४४. 'घ्यण्' प्रत्यय-६७
४५. 'ट' प्रत्यय-६८
४६. 'ड' प्रत्यय-६८-६९
४७. 'णिनि' प्रत्यय-६९
४८. 'णिन्' प्रत्यय-६९
४९. 'त' प्रत्यय-७०
५०. 'तम' (तमाम्) प्रत्यय-७०
५१. 'तर' (तराम्) प्रत्यय-७०
५२. 'तवेन्' प्रत्यय-७१
५३. 'तव्य' प्रत्यय-७१
५४. 'तस्' प्रत्यय-७१
५५. 'तीय' प्रत्यय-७२
५६. 'तुन्' प्रत्यय-७२
५७. 'तुम्' प्रत्यय-७२
५८. 'तुम्' प्रत्यय-७३
५९. 'तृच्' प्रत्यय-७४
६०. 'त्र' प्रत्यय-७४
६१. 'त्रि' प्रत्यय-७४
६२. 'त्रिमक्' प्रत्यय-७५
६३. 'त्व' प्रत्यय-७५
६४. 'थ' प्रत्यय-७५
६५. 'थक्' प्रत्यय-७६
६६. 'थमु' प्रत्यय-७६
६७. 'था' प्रत्यय-७७
६८. 'दा' प्रत्यय-७७
६९. 'दानीम्' प्रत्यय-७७
७०. 'धा' प्रत्यय-७८
७१. 'नु' प्रत्यय-७८
७२. 'म' प्रत्यय-७८-७९
७३. 'मन्' प्रत्यय-७९
७४. 'मन्तु' प्रत्यय-८०
७५. 'मयट्' प्रत्यय-८०
७६. 'य' प्रत्यय-८०
७७. 'यण्' (तद्धित) प्रत्यय-८१
७८. 'यण्' (कृत) प्रत्यय-८१
७९. 'यिन्' प्रत्यय-८१
८०. 'यु' प्रत्यय-८२-८३
८१. 'र' प्रत्यय-८३
८२. 'रक्' प्रत्यय-८४
८३. 'र्हि' प्रत्यय-८४
८४. 'वन्तु' प्रत्यय-८४
८५. 'विन्' प्रत्यय-८५
८६. 'वुण्' (कृत्) प्रत्यय-८५
८७. 'वुण्' (उपपद कृत) प्रत्यय-८५
८८. 'शन्तृङ्' प्रत्यय-८६
८९. 'ष्ट्रन' प्रत्यय-८६
९०. 'सन्' प्रत्यय-८७
९१. 'ह' प्रत्यय-८७

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

९. विभक्तियों का समीक्षात्मक अध्ययन ८८-९५.

१. अद्यतनी विभक्ति का विधान-८८
२. क्रियातिपत्ति विभक्ति का विधान-८८
३. चतुर्थी विभक्ति का विधान-८८-८९
४. द्वितीया विभक्ति का विधान-८९-९०
५. तृतीया विभक्ति का विधान-९०
६. पञ्चमी विभक्ति-९१
७. परोक्षा विभक्ति का विधान-९१
८. प्रथमा विभक्ति का विधान-९२
९. भविष्यन्ती विभक्ति का विधान-९२
१०. वर्तमाना विभक्ति का विधान-९२
११. षष्ठी विभक्ति का विधान-९३
१२. सप्तमी विभक्ति का विधान-९३
१३. सामान्य विभक्ति का विधान-९४
१४. ह्यस्तनी विभक्ति का विधान-९५

१०. विकरणों का समीक्षात्मक अध्ययन ९६-९८

१. 'अन्' विकरण-९६
२. 'उ' विकरण-९६
३. 'न' विकरण-९७
४. 'ना' विकरण-९७
५. 'नु' विकरण-९८
६. 'यन्' विकरण-९८

११. आदेशों का समीक्षात्मक अध्ययन ९९-१३९

१. 'अ' आदेश-९९
२. 'अ' आदेश-९९-१००
३. 'अत्' आदेश-१००
४. 'अन' आदेश-१००
५. अनुस्वार आदेश-१०१
६. 'अन' आदेश-१०१
७. 'अम्' आदेश-१०२
८. 'अय्' आदेश-१०२
९. 'अयम्' आदेश-१०३
१०. 'अर्' आदेश-१०३
११. 'अव्' आदेश-१०३
१२. 'अहम्' आदेश-१०४
१३. 'आ' आदेश-१०४-५
१४. 'आकम्' आदेश-१०५
१५. 'आयि' आदेश-१०५
१६. 'आय्' आदेश-१०६
१७. 'आर्' आदेश-१०६
१८. 'आव्' आदेश-१०७
१९. 'आव्' आदेश-१०७
२०. 'इ' आदेश-१०८-९
२१. 'इत्' आदेश-११०
२२. 'इन' आदेश-११०
२३. 'इय्' आदेश-१११
२४. 'इर्' आदेश-१११
२५. 'ई' आदेश-११२
२६. 'उ' आदेश-११२-१३
२७. 'उव्' आदेश-११३
२८. 'ऊ' आदेश-११४

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२९. 'ए' आदेश-११४-१६
३०. 'एत' आदेश-११६
३१. 'ओ' आदेश-११७
३२. 'क' आदेश-११८
३३. 'कत्' आदेश-११९
३४. 'का' आदेश-११९
३५. 'कु' आदेश-११९
३६. 'क्व' आदेश-१२०
३७. 'ग्' आदेश-१२०
३८. 'घ' आदेश-१२१
३९. 'च्' आदेश-१२१
४०. 'चतसृ' आदेश-१२१
४१. चवर्ग आदेश-१२२
४२. 'छ्' आदेश-१२२
४३. 'ज्' आदेश-१२२
४४. 'जा' आदेश-१२३
४५. 'ण्' आदेश-१२३
४६. 'त्' आदेश-१२३
४७. 'तव' आदेश-१२४
४८. 'तिष्ठ' आदेश-१२४
४९. 'तिसृ' आदेश-१२४
५०. 'तुभ्यम्' आदेश-१२५
५१. तृतीयवर्ण आदेश-१२५
५२. 'ते' आदेश-१२६
५३. 'त्रय' आदेश-१२६
५४. 'त्वम्' आदेश-१२६
५५. दीर्घ आदेश-१२७
५६. दीर्घ आदेश-१२७-२८
५७. 'ध्' आदेश-१२९
५८. 'न्' आदेश-१२९
५९. 'नस्' आदेश-१२९
६०. 'पश्य' आदेश-१३०
६१. 'पिब' आदेश-१३०
६२. प्रथमवर्णादेश-१३०
६३. 'भू' आदेश-१३१
६४. 'मम' आदेश-१३१
६५. 'मह्यम्' आदेश-१३१
६६. 'मे' आदेश-१३२
६७. 'य्' आदेश-१३२-३३
६८. 'यप्' आदेश-१३३
६९. 'याम्' आदेश-१३३
७०. 'वध्' आदेश-१३४
७१. 'वस्' आदेश-१३४
७२. 'व्' आदेश-१३५
७३. 'शि' आदेश-१३५
७४. 'स्' आदेश-१३५
७५. 'स' आदेश-१३६
७६. 'सि' लोपादेश-१३६
७७. 'सीद' आदेश-१३७
७८. 'स्मात्' आदेश-१३७
७९. 'स्मिन्' आदेश-१३७
८०. 'स्याम्' आदेश-१३८
८१. 'स्यास्' आदेश-१३८
८२. 'ह्रस्व' आदेश-१३८-३९

१२. आगमों का समीक्षात्मक अध्ययन १३९-४४

१. 'अट्' आगम-१३९
२. अनुस्वार आगम-१४०
३. 'इट्' आगम-१४०
४. 'ईट्' आगम-१४१

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

५. 'क' आगम-१४१
६. 'थ' आगम-१४२
७. 'नु' आगम-१४२
८. 'मु' आगम-१४३
९. 'व्' आगम-१४३
१०. वर्णागम आदि-१४३-४४
११. 'वृद्धि' आगम-१४४
१२. 'सु' आगम-१४४

१३. व्याकरणशास्त्र में लोकव्यवहार के समादर का समीक्षात्मक अध्ययन **१४५-४७**

१. अनुक्त शब्दों की सिद्धि का उपाय-१४५
२. लोकव्यवहार पर आधारित शब्दसाधुत्व की प्रामाणिकता-१४६
३. शब्दसाधुत्व में लोकव्यवहार (निपातन) की प्रामाणिकता-१४६
४. लोकव्यवहार के आधार पर शब्दसाधुत्व-१४७

१४. समीक्षित १३ विषयों का परिचय **१४८-१६०**

१. सञ्ज्ञा-१४८
२. परिभाषा-१४९
३. विधि-निषेध-१५०
४. नियम-१५१
५. अतिदेश-१५१-५२
६. अधिकार-१५२-५३
७. सन्धि-१५३-५४
८. विभक्ति-१५४-५५
९. प्रत्यय-१५५-५६
१०. आदेश-१५६-५७
११. आगम-१५७
१२. विकरण-१५८
१३. लोकव्यवहार-१५८-६०

परिशिष्ट-१ **१६१-६७**

विस्तृत समीक्षात्मक अध्ययन के तीन उदाहरण—

१. वर्णसमाम्नाय-१६१-६४
२. स्वरसंज्ञा-१६४
३. व्यञ्जनसंज्ञा-१६६-६७

परिशिष्ट-२ **१६८-९४**

समीक्षात्मक अध्ययन का सिंहावलोकन

[३०१+५९=३६० विषयों में समानता-भिन्नता का दिग्दर्शन, १६८-९४]

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

वीततण्हो अनादानो निरुत्तिपदकोविदो ।
अक्खरानं सन्निपातं जञ्ञा पुब्बापरानि च ।
स वे अन्तिमसारीरो महापञ्ञो'ति वुच्चति ॥

धम्मपद–२४/१९

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्रीः

कातन्त्र तथा कच्चायन व्याकरण का समीक्षात्मक अध्ययन

कातन्त्रं विश्रुतं लोके कौमारं शार्ववर्मिकम् ।
पालिकच्चायनं ख्यातं बौद्धवाङ्मयशासकम् ।। १।

तस्माद् यद् दृश्यते साम्यमुभयत्र समीक्षया ।
प्रत्ययादेशविध्यादेः संक्षेपात् तन्निबध्यते ।। २।

१. सञ्ज्ञाओं का समीक्षात्मक अध्ययन

१. अग्नि सञ्ज्ञा

कातन्त्र इदुदग्निः (२/१/८)।

इकार-उकार वर्णों या इवर्णान्त-उवर्णान्त शब्दों की अग्निसंज्ञा होती है। जैसे—'अग्निम्, पटुम्' इत्यादि।

कच्चायन इवण्णुवण्णाज्झला (२/१/७)।

इवर्ण तथा उवर्ण की क्रमशः 'झ' तथा 'ल' संज्ञा होती है। जैसे—'अग्गि, भिक्खु' इत्यादि।

समीक्षा इवर्णान्त-उवर्णान्त शब्दों की पाणिनि ने 'घि' संज्ञा, कातन्त्रकार ने 'अग्नि' संज्ञा तथा कच्चायनकार ने 'झ-ल' सञ्ज्ञाएँ की हैं। पाणिनि-कच्चायन की संज्ञाएँ सांकेतिक हैं, जबकि कातन्त्रकार की अग्निसंज्ञा अन्वर्थ कही जा सकती है।। १।

२. अघोष संज्ञा

कातन्त्र वर्गाणां प्रथमद्वितीयाः शषसाश्चाघोषाः (१/१/११)।

कवर्गादि ५ वर्गों के प्रथम-द्वितीय वर्णों की तथा 'श्-ष्-स्' इन तीन वर्णों की भी अघोष संज्ञा होती है। अघोषसंज्ञक १३ वर्ण हैं—

क् ख्, च् छ्, ट् ठ्, त् थ्, प् फ्, श् ष् स्।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **परसमञ्ञा पयोगे (१/१/९)।**

'क' इत्यादि ११ वर्णों की अघोष संज्ञा होती है—

'क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ, स'।

समीक्षा शिक्षाग्रन्थों में इसे बाह्य प्रयत्न के रूप में बताया गया है। पाणिनि ने इन वर्णों के लिए 'खर्' प्रत्याहार का प्रयोग किया है। याज्ञवल्क्यशिक्षा आदि में भी इसका प्रयोग हुआ है।। २।

३. अद्यतनी संज्ञा

कातन्त्र **एवमेवाद्यतनी (३/१/२८)।**

'दि-ताम्-अन्, सि-तम्-त, अम्-व-म, त-आताम्-अन्त, थास्-आथाम्-ध्वम्, इ-वहि-महि' इन १८ प्रत्ययों की अद्यतनी संज्ञा होती है।

कच्चायन **अज्जतनी ई-उं, ओ-त्थ, इं-म्हा; आ-ऊ, से-व्हं, अ-म्हे (३/१/२३)।**

सूत्रपठित 'ई' इत्यादि १२ प्रत्ययों की अज्जतनी संज्ञा होती है।

समीक्षा पालि भाषा में द्विवचन का प्रयोग न होने से प्रत्यय-संख्या में भेद है। अतः सामान्यतया समानता ही है।। ३।

४. अधिकरण संज्ञा

कातन्त्र **य आधारस्तदधिकरणम् (२/४/११)।**

क्रिया के आधार की अधिकरणसंज्ञा होती है। जैसे 'तिलेषु तैलम्, गङ्गायां घोषः' इत्यादि।

कच्चायन **योधारो तमोकासं (२/६/८)।**

आधार की ओकास (अवकाश) संज्ञा होती है। जैसे—'तिलेसु तेलं, गङ्गायं घोसो तिट्ठति' इत्यादि।

समीक्षा संज्ञा में शब्दभेद रहने पर भी अर्थविधान की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है।। ४।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

५. अनुस्वार संज्ञा

कातन्त्र अं इत्यनुस्वारः (१/१/१९)।

एक बिन्दुरूप वर्ण की अनुस्वार संज्ञा होती है। इसका उच्चारण स्वर के साथ किया जाता है। व्याकरणविषयक कार्य की दृष्टि से इसे स्वरात्मक तथा व्यञ्जनात्मक उभयविध माना जाता है।

कच्चायन अं इति निग्गहीतं (१/१/८)।

स्वर से सम्बद्ध एक बिन्दु की निग्गहीत संज्ञा होती है।

समीक्षा स्वर के साथ मिलकर इसका उच्चारण होता है। इसलिए इसे अनुस्वार कहते हैं—'अनुस्वर्यते संलीनं शब्द्यते इत्यनुस्वारः'। इसे कहीं अर्धचन्द्राकार (ँ) भी माना जाता है। इसे पाणिनीय आदि व्याकरणों में अयोगवाह तथा कातन्त्र में योगवाह माना गया है।। ५।

६. अपादान संज्ञा

कातन्त्र यतोऽपैति भयमादत्ते वा तदपादानम्, ईप्सितं च रक्षार्थानाम् (२/४/८,९)।

जिससे विभाग, भय अथवा ग्रहण होता है, उस कारक की तथा रक्षार्थक धातुओं के प्रयोग में ईप्सित-अनीप्सित की अपादान संज्ञा होती है। जैसे—'वृक्षात् पर्णं पतति, अध्ययनात् पराजयते, यवेभ्यो गां रक्षति' इत्यादि।

कच्चायन यस्मादपेति भयमादत्ते वा तदपादानं, रक्खणत्थानमिच्छितं (२/६/१,३)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे 'गामा अपेन्ति मुनयो, चोरा भयं जायते, काके रक्खन्ति तण्डुला' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद से शब्दरूपों में भेद होने पर भी प्रक्रियाविधान की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है। कच्चायन में तीन अन्य सूत्रों द्वारा भी की गई अपादान संज्ञा द्रष्टव्य है (२/६/२, ४, ५)।। ६।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

७. अभ्यास संज्ञा

कातन्त्र **पूर्वोऽभ्यासः** (३/३/४)।

धातु के द्विर्वचन वाले रूप में पूर्ववर्ती रूप की अभ्याससंज्ञा होती है। जैसे—'पपाच, जुहोति' इत्यादि।

कच्चायन **पुब्बोब्भासो** (३/३/२)।

द्वित्वभूत धातु के पूर्व की अब्भास (अभ्यास) संज्ञा होती है। जैसे—'ददाति, दधाति' इत्यादि।

समीक्षा संज्ञा-संज्ञी आदि की दृष्टि से दोनों में पूर्ण समानता है।। ७।

८. अव्ययीभाव संज्ञा

कातन्त्र **पूर्वं वाच्यं भवेद् यस्य सोऽव्ययीभाव इष्यते** (२/५/१४)।

जिस समास में पूर्व पदार्थ विशेष्य के रूप में प्रतीत होता है, उसकी अव्ययीभाव संज्ञा होती है। जैसे—'उपकुम्भम्, निर्मक्षिकम्' इत्यादि।

कच्चायन **उपसग्गनिपातपुब्बको अव्ययीभावो** (२/७/४)।

उपसर्ग तथा निपातपूर्वक समास की अव्ययीभाव संज्ञा होती है। जैसे—'उपनगरं, अधिचित्तं' इत्यादि।

समीक्षा अव्ययीभाव समास की अनेक परिभाषाएँ प्राप्त होती हैं। दो परिभाषाएँ तो यहाँ दोनों व्याकरणों में भिन्न-भिन्न रूप में दृष्ट हैं। तृतीय परिभाषा के अनुसार अव्ययीभाव उसे कहते हैं, जिसका पूर्वपद अव्यय होता है। तीनों परिभाषाओं में आंशिक दोष होने से उसका समाधान किया जाता है कि अव्ययीभाव के अधिकार में पठित की अव्ययीभाव संज्ञा होती है—'अव्ययीभावाधिकारपठितत्वमव्ययीभावत्वम्'। किन्तु कातन्त्र और कच्चायन व्याकरणों में अधिकार की अलग-अलग व्यवस्था न होने से भिन्न लक्षण किए गये हैं। अव्ययीभाव समास-विशिष्ट पद नपुंसकलिङ्ग होता है—

स नपुंसकलिङ्गं स्यात् (कात० २/५/१५)।

सो नपुंसकलिङ्गो (कच्चा० २/७/५)।। ८।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

९. आत्मनेपद संज्ञा

कातन्त्र **नव पराण्यात्मने** (३/१/२)।

कालबोधक वर्तमाना आदि संज्ञाओं के अठारह-अठारह प्रत्ययों में से परवर्ती नौ-नौ प्रत्ययों की आत्मनेपद संज्ञा होती है। जैसे—'ते, आते, अन्ते' इत्यादि।

कच्चायन **परान्यत्तनोपदानि** (३/१/२)।

सभी विभक्तियों में बाद वाली ६-६ विभक्तियों की आत्मनेपद संज्ञा होती है। जैसे—'ते, अन्ते' इत्यादि।

समीक्षा वचनों की भिन्न-भिन्न मान्यता को छोड़कर अन्य सभी प्रकार की दोनों में समानता ही है।। ९।

१०. करण संज्ञा

कातन्त्र **येन क्रियते तत् करणम्** (२/४/१२)।

कर्त्ता जिसके द्वारा कोई क्रिया करता है, उसकी करण संज्ञा होती है। जैसे—'दात्रेण धान्यं लुनाति, मनसा मेरुं गच्छति' इत्यादि।

कच्चायन **येन वा कयिरते तं करणं** (२/६/९)।

जिसके द्वारा किया, देखा या सुना जाय उस कारक की करण संज्ञा होती है। जैसे—'दात्तेन वीहिं लुनाति, फरसुना रुक्खं छिन्दति, सोतेन सद्दं सुनाति' इत्यादि।

समीक्षा शब्दभेद तथा व्याख्यावैविध्य होने पर भी अर्थ-विधान की दृष्टि से दोनों व्याकरणों में समानता है।। १०।

११. कर्ता संज्ञा

कातन्त्र **यः करोति स कर्ता** (२/४/१४)।

क्रियानिष्पादक, क्रियासाधक या क्रियानिर्वर्तक की 'कर्ता' संज्ञा होती है। जैसे—'छात्रेण हन्यते, चैत्रेण कृतम्' इत्यादि।

कच्चायन **यो करोति स कत्ता** (२/६/११)।

जो करता है उसकी कर्तृसंज्ञा होती है। जैसे—'बुद्धेन जितो मारो, उपगुत्तेन बद्धो मारो' इत्यादि।

समीक्षा अर्थ-विधान की दृष्टि से उभयत्र सर्वथा समानता ही है।। ११।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१२. कर्म संज्ञा

कातन्त्र **यत् क्रियते तत् कर्म** (२/४/१३)।

कर्ता की क्रिया से उत्पन्न होने वाले फल के आश्रय की कर्म संज्ञा होती है। जैसे—'ओदनं पचति, आदित्यं पश्यति, गां दोग्धि पयः, कटं करोति' इत्यादि।

कच्चायन **यं करोति तं कम्मं** (२/६/१०)।

जिसको किया, देखा या सुना जाय उस कारक की कर्म संज्ञा होती है। जैसे—'कटं करोति, रूपं पस्सति, सद्दं सुनाति' इत्यादि।

समीक्षा शब्दभेद तथा व्याख्यावैविध्य होने पर भी अर्थविधान की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। १२।

१३. कर्मधारय संज्ञा

कातन्त्र **पदे तुल्याधिकरणे विज्ञेयः कर्मधारयः** (२/५/५)।

जिस समास में दो विशेष्य-विशेषण पद हों, उसकी कर्मधारय संज्ञा होती है। जैसे—'नीलोत्पलम्, नवोदकम्' इत्यादि।

कच्चायन **द्विपदे तुल्याधिकरणे कम्मधारयो** (२/७/९)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'लोहितचन्दनं, ब्राह्मणदारिका' इत्यादि।

समीक्षा यह कहीं पर नित्य होता है और कहीं पर होता ही नहीं है। कहीं उपमानभूत विशेषण पूर्व में रहता है तो कहीं पर उत्तर में। कुछ आचार्य 'कर्म' शब्द का अर्थ धर्म भी करते हैं। कच्चायन और कातन्त्र में प्रक्रिया आदि की दृष्टि से समानता ही है।। १३।

१४. कृत् संज्ञा

कातन्त्र **कर्तरि कृत्** (४/२/७)।

कर्ता अर्थ में धातुओं से होने वाले सभी प्रत्ययों की 'कृत्' संज्ञा होती है। जैसे—'कारकः, कर्ता, जनार्दनः, कुम्भकारः' इत्यादि।

कच्चायन **अञ्ञे कितं** (४/१/२३)।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कृत्यसंज्ञक प्रत्ययों से अतिरिक्त प्रत्ययों की कित (कृत्) संज्ञा होती है। जैसे—'नन्दनं, जेतुं, छिन्नो, भिन्नो' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ संज्ञा-संज्ञी आदि की दृष्टि से उभयत्र पूर्ण समानता है।। १४।

१५. कृत्य संज्ञा

कातन्त्र **ते कृत्याः (४/२/४६)।**

'तव्य, अनीय, क्यप्, घ्यण्, य' इन पाँच प्रत्ययों की 'कृत्य' संज्ञा होती है। जैसे—'भवितव्यम्, कार्यम्' इत्यादि।

कच्चायन **ते किच्चा (४/१/२२)।**

'तब्ब, अनीय, ण्य, रिच्च' इन चार प्रत्ययों की किच्च (कृत्य) संज्ञा होती है। जैसे—'किच्चं, कारियं' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण होने वाले शब्दभेद से यहाँ प्रत्ययों की संख्या में तथा शब्दरूपों में भेद है, परन्तु अर्थ की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है।। १५।

१६. क्रियातिपत्ति संज्ञा

कातन्त्र **द्यादीनि क्रियातिपत्तिः (३/१/३३)।**

'स्यत्-स्यताम्-स्यन्, स्यस्-स्यतम्-स्यत, स्यम्-स्याव-स्याम। स्यत-स्येताम्-स्यन्त, स्यथास्-स्येथाम्-स्यध्वम्, स्ये-स्यावहि-स्यामहि' इन अठारह प्रत्ययों की 'क्रियातिपत्ति' संज्ञा होती है।

कच्चायन **कालातिपत्ति स्सा स्संसु, स्से स्सथ, स्सं स्सम्हा; स्सथ स्सिंसु, स्ससे स्सव्हे, स्सं स्साम्हसे (३/१/२५)।**

सूत्रपठित 'स्सा' आदि बारह प्रत्ययों की 'कालातिपत्ति' संज्ञा होती है।

समीक्षा पालि में द्विवचन न होने से प्रत्ययसंख्या में भेद है। सामान्यतया तो उभयत्र समानता ही है।। १६।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१७. गुरु संज्ञा

कातन्त्र **नाम्यादेर्गुरुमतोऽनृच्छः** (३/२/१९)।

नामिसंज्ञक वर्ण जिसके आदि में हो तथा जिसमें गुरुसंज्ञक वर्ण हो उस धातु से परोक्षा विभक्ति में 'आम्' प्रत्यय होता है। जैसे—'ईहाञ्चक्रे, उञ्छाञ्चकार' इत्यादि।

कच्चायन **दुम्हि गरु, दीघो च** (४/४/१३, १४)।

संयोगसंज्ञक अक्षरों से पूर्व आने वाले अक्षर की तथा दीर्घ स्वर की गुरु संज्ञा होती है। जैसे—'जित्वा, नदी' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने गुरुसंज्ञा-विधायक सूत्र तो नहीं बनाये, परन्तु उक्त सूत्र में उसका प्रयोग किया है। वृत्तिकार द्वारा दिये गये उदाहरणों से उन्हीं वर्णों की गुरु संज्ञा सिद्ध होती है, जिन वर्णों की गुरु संज्ञा कच्चायनकार ने की है। अतः सूत्रविधान के अतिरिक्त प्रयोग की दृष्टि से उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। १७।

१८. घोष संज्ञा

कातन्त्र **घोषवन्तोऽन्ये** (१/१/१२)।

बीस व्यञ्जन वर्णों की घोष संज्ञा होती है—'ग्, घ्, ङ्, ज्, झ्, ञ्, ड्, ढ्, ण्, द्, ध्, न्, ब्, भ्, म्, य्, र्, ल्, व्, ह्'।

कच्चायन **परसमञ्ञा पयोगे** (१/१/९)।

ग इत्यादि २१ वर्णों की घोष संज्ञा होती है—ग, घ, ङ, ज, झ ञ, ड, ढ, ण, द, ध, न, ब, भ, म, य, र, ल, व, ह, ळ।

समीक्षा जिन वर्णों के उच्चारण में वायु के वेग से नाद-ईषन्नाद दोनों ही सुनाई पड़ते हैं, अर्थात् घोष=ध्वनि वाले वर्णों को घोषवान् वर्ण कहा जाता है—'घोषो विद्यते येषां ते घोषवन्तः'। पाणिनि ने इन बीस वर्णों का बोध 'हस्' प्रत्याहार से कराया है।। १८।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१९. तत्पुरुष संज्ञा

कातन्त्र **तत्पुरुषावुभौ,**

विभक्तयो द्वितीयाद्या नाम्ना परपदेन तु ।

समस्यन्ते समासो हि ज्ञेयस्तत्पुरुषः स च ।। (२/५/७,८)।

कर्मधारय-द्विगु की तथा परवर्ती पदों के साथ होने वाले द्वितीयादि विभक्तियों के समास की 'तत्पुरुष' संज्ञा होती है। यथा—'महाराजः, सुखप्राप्तः, खट्वारूढो जाल्मः' इत्यादि।

कच्चायन **उभे तप्पुरिसा, अमादयो परपदेहि (२/७/११,१२)।**

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'अब्राह्मणो, पञ्चगावी, राजभयं' इत्यादि।

समीक्षा कर्मधारय और द्विगु समास, ये दोनों ही तत्पुरुष के भेद आचार्यों ने माने हैं। यहाँ कातन्त्रकार और कच्चायनकार ने उन दोनों की तो 'तत्पुरुष' संज्ञा की ही है, इसके अतिरिक्त द्वितीयादि विभक्तियों का परवर्ती नाम-पदों के साथ जो समास होता है, उसकी भी दोनों आचार्यों ने समानरूप में तत्पुरुष संज्ञा स्वीकार की है। अतः उभयत्र समानता है।। १९।

२०. दीर्घ संज्ञा

कातन्त्र **परो दीर्घः (१/१/६)।**

द्विमात्रिक स्वर वर्णों की दीर्घ संज्ञा की गई है—आ, ई, ऊ, ॠ, ॡ (ए, ऐ, ओ, औ=९)। उदात्त आदि भेद से यह ६ प्रकार का होता है।

कच्चायन **अञ्ञे दीघा (१/१/५)।**

'आ' इत्यादि ५ वर्णों की दीर्घ संज्ञा होती है—आ, ई, ऊ, ए, ओ।

समीक्षा 'ऋक्प्रातिशाख्य, ऋक्तन्त्र, गोपथब्राह्मण' आदि प्राचीन ग्रन्थों में तथा 'चान्द्र व्याकरण' आदि अर्वाचीन ग्रन्थों में इस संज्ञा का उल्लेख मिलता है। कातन्त्रकार आचार्य शर्ववर्मा ने सवर्णसंज्ञक दो-दो वर्णों में से पूर्ववर्ती वर्णों की ह्रस्व संज्ञा तथा परवर्ती वर्णों की दीर्घ संज्ञा की है। इस विषय में क्षितीशचन्द्र चटर्जी के ग्रन्थ— Technical terms

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

and technic of Sanskrit grammar, Vol. I, P. 192 पर एक श्लोक उद्धृत है—

पूर्वो ह्रस्वः परो दीर्घः सतां स्नेहो निरन्तरम् ।
असतां विपरीतस्तु पूर्वो दीर्घः परो लघुः ।।

दीर्घ की गुरु संज्ञा भी की जाती है।। २०।

२१. द्वन्द्व संज्ञा

कातन्त्र द्वन्द्वः समुच्चयो नाम्नोर्बहूनां वापि यो भवेत् (२/५/११)।

जिस समास में दो अथवा बहुत पदों का समुच्चय होता है, उसकी द्वन्द्व संज्ञा होती है। जैसे—'देवदत्तयज्ञदत्तौ, धवखदिरपलाशाः' इत्यादि।

कच्चायन नामानं समुच्चयो द्वन्दो (२/७/१४)।

एक विभक्ति वाले नामों के समुच्चय की द्वन्द संज्ञा होती है। जैसे—'समणब्राह्मणा, कुवेरवासवा' इत्यादि।

समीक्षा जिस अर्थ के लिए कातन्त्रकार तथा कच्चायनकार ने समुच्चय शब्द का प्रयोग किया है, उसे पाणिनि ने 'च' का अर्थ बताया है। उनका सूत्र है—''चार्थे द्वन्द्वः'' (अ० २/२/२९)। इस प्रकार कातन्त्र और कच्चायन में शब्द-अर्थ तथा संज्ञा की दृष्टि से पूर्ण समानता है।। २१।

२२. द्विगु संज्ञा

कातन्त्र संख्यापूर्वो द्विगुरिति ज्ञेयः (२/५/६)।

तद्धितार्थ, उत्तरपद तथा समाहार में संख्यापूर्वक कर्मधारय समास की द्विगु संज्ञा होती है। जैसे—'पञ्चकपालः ओदनः' इत्यादि।

कच्चायन सङ्ख्यापुब्बो दिगु (२/७/१०)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'तिलोकं, सत्तगोदावरं' इत्यादि।

समीक्षा अर्थ, संज्ञा तथा क्रम की दृष्टि से दोनों में समानता है।। २२।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२३. धातु संज्ञा

कातन्त्र **क्रियाभावो धातुः, ते धातवः** (३/१/९; २/१६)।

'भू-पच्' आदि जो शब्द सत्ता-पाकादिरूप क्रिया का बोध कराते हैं, उनकी तथा 'सन्' इत्यादि सात प्रत्ययों में से किसी के भी अन्त में रहने पर निष्पन्न होने वाले शब्दों की धातु संज्ञा होती है। जैसे—'भवति, पचति, चिकीर्षति' इत्यादि।

कच्चायन **भूवादयो धातवो** (३/२/२६)।

'भू' आदि शब्दगणों की धातु संज्ञा होती है। जैसे—'भवन्ति, पचन्ति' इत्यादि।

समीक्षा धातुएँ तीन प्रकार की मानी जाती हैं—गणपठित, नामधातु तथा कण्ड्वादिगणपठित। गणपठित धातुसूत्रों में प्रायः एक-एक प्रधान अर्थ का निर्देश किया गया है, इसलिए प्रयोगानुसार धातुएँ अनेकार्थक मानी जाती हैं—

क्रियावाचित्वमाख्यातुमेकैकोऽर्थः प्रदर्शितः ।
प्रयोगतोऽनुसर्तव्या अनेकार्था हि धातवः ।। (क्षीर०-चु० ३९२)।

गोपथब्राह्मण आदि प्राचीन ग्रन्थों तथा अभिनव शाकटायन व्याकरण आदि अर्वाचीन ग्रन्थों में भी धातु संज्ञा का प्रयोग किया गया है। कच्चायनकार ने 'भू' आदि शब्दगणों की धातु संज्ञा की है, सन् आदि प्रत्ययान्त शब्दों की नहीं।। २३।

२४. नदी संज्ञा

कातन्त्र **ईदूत् स्त्र्याख्यौ नदी** (२/१/९)।

नित्य स्त्रीलिङ्ग वाले शब्दों में दीर्घ ईकार तथा दीर्घ ऊकार की अथवा ईकारान्त-ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग वाले शब्दों की नदी संज्ञा होती है। जैसे—'नद्यै, वध्वै' इत्यादि।

कच्चायन **ते इत्थिख्या पो** (२/१/८)।

इवर्ण तथा उवर्ण की स्त्रीलिङ्ग में प-संज्ञा होती है। जैसे—'इत्थी, वधू' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा यहाँ कातन्त्र और कच्चायन में अन्तर यह है कि कातन्त्र में नदी संज्ञा दीर्घ ईकारान्त तथा दीर्घ ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग वाले शब्दों की होती है, जबकि कच्चायन में यह संज्ञा ह्रस्व-दीर्घ दोनों प्रकार के शब्दों की की गई है।। २४।

२५. पञ्चमी संज्ञा

कातन्त्र **पञ्चमी** (३/१/२६)।

'तु-ताम्-अन्तु, हि-तम्-त, आनि-आव-आम। ताम्-आताम्-अन्ताम्, स्व-आथाम्-ध्वम्, ऐ-आवहे-आमहे' इन १८ प्रत्ययों की पञ्चमी संज्ञा होती है।

कच्चायन **'पञ्चमी तु-अन्तु, हि-थ, मि-म; तं-अन्तं, स्सु-व्हो, ए-आमसे'** (३/१/१९)।

सूत्रपठित 'तु' आदि १२ प्रत्ययों की पञ्चमी संज्ञा होती है।

समीक्षा यहाँ भी पालि भाषा में द्विवचन न मानने के कारण १२ प्रत्यय और कातन्त्र में द्विवचन मानने के कारण १८ प्रत्यय पञ्चमीसंज्ञक स्वीकार किए गये हैं।। २५।

२६. परस्मैपद संज्ञा

कातन्त्र **अथ परस्मैपदानि** (३/१/१)।

धातुविहित 'ति' से 'स्याम' तक ९० प्रत्ययों की परस्मैपद संज्ञा होती है।

कच्चायन **अथ पुब्बानि विभत्तीनं छ परस्सपदानि** (३/१/१)।

प्रत्येक विभक्ति के प्रारम्भिक ६ प्रत्ययों की परस्मैपद संज्ञा होती है। जैसे—'ति, न्ति' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र व्याकरण में कालबोधक दस तथा कच्चायन में आठ विभक्तियाँ मानी गई हैं। प्रत्येक विभक्ति में तीन पुरुष होते हैं। कातन्त्र में एकवचन-द्विवचन-बहुवचन के अनुसार प्रत्येक विभक्ति के प्रारम्भिक ९ प्रत्ययों की तथा कच्चायन में एकवचन-बहुवचन के अनुसार ६-६ प्रत्ययों की विभक्ति संज्ञा होती है।। २६।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२७. परोक्षा विभक्ति संज्ञा

कातन्त्र परोक्षा (३/१/२९)।

'अट्-अतुस्-उस्, थल्-अथुस्-अ, अट्-व-म। ए-आते-इरे, से-आथे-ध्वे, ए-वहे-महे' इन १८ प्रत्ययों की परोक्षा संज्ञा होती है।

कच्चायन परोक्खा अ-उ, ए-त्थ, अ-म्ह; त्थ-रे, त्थो-व्हो, इ-म्हे (३/१/२१)।

सूत्रपठित 'अ' इत्यादि १२ प्रत्ययों की परोक्खा संज्ञा होती है।

समीक्षा भाषागत शब्दभेद तथा वचनभेद की मान्यता के कारण उभयत्र प्रत्ययों में भेद देखा जाता है।। २७।

२८. पुरुष संज्ञा

कातन्त्र त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः (३/१/३)।

परस्मैपदसंज्ञक तथा आत्मनेपदसंज्ञक त्यादि ९-९ वचनों में से क्रमशः ३-३ वचनों की प्रथम-मध्यम तथा उत्तम पुरुष संज्ञाएँ होती हैं। जैसे—'ति, तस् अन्ति' प्रत्ययों की प्रथमपुरुष संज्ञा इत्यादि।

कच्चायन द्वे द्वे पठममज्झिमुत्तमपुरिसा (३/१/३)।

परस्मैपद तथा आत्मनेपद विभक्ति के २-२ वचनों की प्रथम-मध्यम तथा उत्तम पुरुष संज्ञाएँ होतीं हैं। जैसे—'ति, न्ति' प्रत्ययों की प्रथम-पुरुष संज्ञा।

समीक्षा कातन्त्र में द्विवचन की मान्यता को छोड़कर अन्य सभी प्रकार की दोनों व्याकरणों में समानता ही है।। २८।

२९. बहुव्रीहि संज्ञा

कातन्त्र स्यातां यदि पदे द्वे तु यदि वा स्युर्बहून्यपि ।
तान्यन्यस्य पदस्यार्थे बहुव्रीहिः, विदिक् तथा ।। (२/५/९,१०)।

विशेष्य-विशेषणभावापन्न तथा अन्य पदार्थ को कहने वाले दो अथवा अधिक पदों के समास की एवं अन्तरालवर्तिनी दिशा के अन्त में दो-दो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

मुख्य दिशाओं के वाचक शब्दों के समास की बहुव्रीहि संज्ञा होती है। जैसे—'बहूदका नदी, दक्षिणपूर्वा दिक्' इत्यादि।

कच्चायन **अञ्ञपदत्थेसु बहुब्बीहि** (२/७/१३)।

अन्य पदों के अर्थ में नामों के समास की बहुव्रीहि संज्ञा होती है। जैसे—'आगतसमणो सङ्घारामो, जितिन्द्रियो समणो' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने एक स्वतन्त्र सूत्र बनाकर अन्तरालवर्तिनी दिशाओं का समास किया है। एक-एक प्रमुख सूत्र की दृष्टि से दोनों में समानता है।। २९।

३०. भविष्यन्ती संज्ञा

कातन्त्र **स्यसंहितानि त्यादीनि भविष्यन्ती** (३/१/३२)।

'स्यति-स्यतस्-स्यन्ति, स्यसि-स्यथस्-स्यथ, स्यामि-स्यावस्-स्यामस्। स्यते-स्येते-स्यन्ते, स्यसे-स्येथे-स्यध्वे, स्ये-स्यावहे-स्यामहे' इन १८ प्रत्ययों की भविष्यन्ती संज्ञा होती है।

कच्चायन **भविस्सन्ती स्सति-स्सन्ति, स्ससि-स्सथ, स्सामि-स्साम; स्सते-स्सन्ते, स्ससे-स्सव्हे, स्सं-स्साम्हे** (३/१/२४)।

सूत्रपठित 'स्सति' आदि १२ प्रत्ययों की भविस्सन्ती संज्ञा होती है।

समीक्षा भाषागत शब्दभेद तथा वचनभेद की मान्यता के कारण उभयत्र प्रत्ययों में भेद देखा जाता है।। ३०।

३१. लिङ्ग संज्ञा

कातन्त्र **धातुविभक्तिवर्जमर्थवल्लिङ्गम्** (२/१/१)।

'भू' आदि धातुओं तथा 'सि' आदि विभक्तियों से भिन्न अर्थवान् शब्द की लिङ्ग संज्ञा होती है। जैसे—'वृक्षः' में वृक्ष शब्द की।

कच्चायन **लिङ्गञ्च निपच्चते, तदनुपरोधेन** (२/१/२, ५)।

कच्चायन में भी लिङ्ग संज्ञा मानी गई है, परन्तु ये लिङ्गसंज्ञक शब्द जिस रूप में भगवान् बुद्ध के उपदेशों में प्राप्त होते हैं, वैसे ही स्वीकार किए जाते हैं। जैसे—'ब्रह्मा' आदि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा स्यादि तथा तद्धित प्रत्ययों की प्रकृति को पाणिनि ने प्रातिपदिक नाम दिया है (अ० १/२/४५-४६)। परन्तु कातन्त्रकार शर्ववर्मा ने लिङ्ग संज्ञा की है। इस लिङ्ग संज्ञा का प्रयोग पूर्वाचार्यों ने भी किया था। अर्थवान् शब्द की संज्ञा होने के कारण 'वृक्ष' शब्द में 'व्' आदि की लिङ्ग संज्ञा नहीं होती। लिङ्ग को एक अन्वर्थ संज्ञा माना जाता है—'लिङ्ग्यते चित्र्यतेऽनेनैकदेशेनार्थो गम्यते'।। ३१।

३२. वर्ग संज्ञा

कातन्त्र **ते वर्गाः पञ्च पञ्च पञ्च (१/१/१०)।**

क् से लेकर म् तक के २५ वर्णों में से क्रमशः ५-५ वर्णों की वर्ग संज्ञा होती है। ये संख्या में पाँच होते हैं—कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग—

कवर्ग	-	क्	ख्	ग्	घ्	ङ्।
चवर्ग	-	च्	छ्	ज्	झ्	ञ्।
टवर्ग	-	ट्	ठ्	ड्	ढ्	ण्।
तवर्ग	-	त्	थ्	द्	ध्	न्।
पवर्ग	-	प्	फ्	ब्	भ्	म्।

कच्चायन **वग्गा पञ्चपञ्चसोमन्ता (१/१/७)।**

यहाँ भी ५ वर्ग माने गये हैं—

कवर्ग	-	क	ख	ग	घ	ङ।
चवर्ग	-	च	छ	ज	झ	ञ।
टवर्ग	-	ट	ठ	ड	ढ	ण।
तवर्ग	-	त	थ	द	ध	न।
पवर्ग	-	प	फ	ब	भ	म।

समीक्षा ऋक्प्रातिशाख्य आदि प्राचीन ग्रन्थों में इस संज्ञा का प्रयोग किया गया है। वाजसनेयिप्रातिशाख्य के अनुसार वर्ग के पाँच-पाँच वर्णों में प्रथम वर्ण से ही वर्ग का बोध होता है, अन्य वर्णों से नहीं—''प्रथमग्रहणे वर्गम्'' (१/६४)। पाणिनि ने इनका व्यवहार 'उदित्' पद से किया है—''अणुदित् सवर्णस्य चाप्रत्ययः'' (अ० १/१/६९)।। ३२।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

३३. वर्णसमाम्नाय सञ्ज्ञा

कातन्त्र **सिद्धो वर्णसमाम्नायः (१/१/१)।**

शाब्दिक आचार्यों द्वारा जो वर्ण जिस क्रम से स्वीकार किए गये हैं, उनके क्रमिक पाठ को वर्णसमाम्नाय, अक्षरसमाम्नाय अथवा वाक्-समाम्नाय कहते हैं। कातन्त्रीय वर्णसमाम्नाय इस प्रकार है—

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ। ॰ - ॅ (अनुस्वार), : (विसर्ग), × (जिह्वामूलीय), ✕ (उपध्मानीय)। क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ। ट ठ ड ढ ण। त थ द ध न। प फ ब भ म। य र ल व। श ष स ह। क्ष, प्लुत (५३)। लोकप्रसिद्ध वर्णसमाम्नाय ही यहाँ स्वीकार किया गया है। संस्करणभेद से इसमें ४८, ५० अथवा ५३ वर्णों का पाठ मिलता है।

कच्चायन **अक्खरापादयो एकचत्तालिसं (१/१/२)।**

इसमें 'अ' इत्यादि ४१ वर्ण पढ़े गये हैं—

अ आ इ ई उ ऊ ए ओ। क ख ग घ ङ।
च छ ज झ ञ। ट ठ ड ढ ण। त थ द ध न।
प फ ब भ म। य र ल व। स ह ळ ॰ (अं=निग्गहीतं)।

समीक्षा समग्र वाङ्मय की दृष्टि से नित्याषोडशिकार्णव तन्त्र में १६, पाणिनीय व्याकरण में ४२, वेदों में ६३-६४, यजुःप्रातिशाख्य में ६५ तथा वशिष्ठशिक्षा में ६८ वर्ण भी माने गये हैं। इस वर्णसमाम्नाय की उपदेशपरम्परा ब्रह्मा से ब्राह्मणों तक मानी जाती है—'ब्रह्मा-बृहस्पति-इन्द्र-भरद्वाज-ऋषि-ब्राह्मण'। इस वर्णसमाम्नाय के ज्ञान से सभी वेदों के अध्ययन का पुण्य प्राप्त होता है तथा उस व्यक्ति के माता-पिता स्वर्गलोक में पूजनीय होते हैं।। ३३।

३४. वर्तमाना सञ्ज्ञा

कातन्त्र **वर्तमाना (३/१/२४)।**

'ति-तस्-अन्ति, सि-थस्-थ, मि-वस्-मस्। ते-आते-अन्ते, से-आथे-ध्वे, ए-वहे-महे' इन अठारह प्रत्ययों की वर्तमाना संज्ञा होती है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **वत्तमाना ति-अन्ति, सि-थ, मि-म; ते-अन्ते, से-व्हे, ए-म्हे** (३/१/१८)।

सूत्र-पठित 'ति' आदि बारह प्रत्ययों की वत्तमाना संज्ञा होती है।

समीक्षा पालि में द्विवचन की मान्यता न होने से परस्मैपदसंज्ञक ६ प्रत्यय तथा आत्मनेपदसंज्ञक ६ प्रत्यय = कुल १२ प्रत्यय ही वर्तमानासंज्ञक कहे गये हैं, जबकि संस्कृत में द्विवचन की मान्यता होने से १८ प्रत्ययों की वर्तमाना संज्ञा होती है।। ३४।

३५. विभक्ति संज्ञा

कातन्त्र **विभक्तिसंज्ञा विज्ञेया वक्ष्यन्तेऽतः परं तु ये ।**
अद्व्यादेः सर्वनाम्नस्ते बहोश्चैव पराः स्मृताः ।। (२/६/२४)।

सर्वनामसंज्ञक तथा 'बहु' शब्द से परवर्ती प्रत्ययों की विभक्ति संज्ञा होती है। जैसे—'इदानीम्, इत्थम्' इत्यादि।

कच्चायन **त्वादयो विभत्तिसञ्ञायो** (२/५/१)।

'तो' आदि प्रत्ययों की विभत्ति संज्ञा होती है। जैसे—'सब्बतो, यदा' इत्यादि।

समीक्षा भाषा-भेद से प्रत्ययों तथा शब्दों के रूप में भेद देखा जाता है। सामान्यतया उभयत्र समानता ही कही जाएगी।। ३५।

३६. व्यञ्जन संज्ञा

कातन्त्र **कादीनि व्यञ्जनानि** (१/१/९)।

स्वरों का अनुसरण करने के कारण अथवा स्वरप्रतिपाद्य अर्थों को द्योतित करने के कारण 'क्' से लेकर 'ह्' या 'क्ष्' तक वर्णों की व्यञ्जन संज्ञा की जाती है—'व्यज्यन्ते एभिरिति व्यञ्जनानि'। व्यञ्जन वर्ण हैं—

क् ख् ग् घ् ङ्। च् छ् ज् झ् ञ्। ट् ठ् ड् ढ् ण्।
त् थ् द् ध् न्। प् फ् ब् भ् म्।
य् र् ल् व्। श् ष् स् ह्। क्ष् (३४)।

कच्चायन **सेसा व्यञ्जना** (१/१/६)।

'क' इत्यादि ३३ वर्णों की व्यञ्जन संज्ञा होती है—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ। ट ठ ड ढ ण।
त थ द ध न। प फ ब भ म। य र ल व। स ह ळ अं (३३)।

समीक्षा ऋक्प्रातिशाख्य, गोपथब्राह्मण, नाट्यशास्त्र आदि प्राचीन ग्रन्थों में पूर्वाचार्यों द्वारा इस संज्ञा का व्यवहार किया गया है। ऋक्प्रातिशाख्य के उव्वटभाष्य में व्यञ्जन की परिभाषा की गई है— ''व्यञ्जयन्ति प्रकटान् कुर्वन्त्यर्थानिति व्यञ्जनानि'' (ऋ०प्रा०-उ०भा०१/६)।

पाणिनि आदि आचार्यों ने इसके लिए 'हल्' प्रत्याहार का व्यवहार किया है। कातन्त्रकार ने व्यञ्जन वर्णों से निष्पन्न होने वाले वर्णों के निदर्शनार्थ 'क्ष्' वर्ण को भी स्वीकार किया है। इसका समर्थन शङ्कराचार्य के 'आदिक्षान्तसमस्तवर्णनिकरी' इस अन्नपूर्णास्तोत्र-वचन से होता है।। ३६।

३७. श्रद्धा संज्ञा

कातन्त्र **आ श्रद्धा** (२/१/१०)।

नित्य स्त्रीलिङ्गवाची आकार की अथवा आकारान्त स्त्रीलिङ्ग वाले शब्दों की श्रद्धा संज्ञा होती है। जैसे—'श्रद्धा, माला' इत्यादि।

कच्चायन **आ घो** (२/१/९)।

इसके अनुसार स्त्रीवाचक आकार की 'घ' संज्ञा होती है। जैसे— 'करुणा, कञ्ञा' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र तथा कच्चायन के संज्ञाशब्दों में भिन्नता तो है ही, उसके अतिरिक्त कच्चायन की 'घ' संज्ञा सांकेतिक कही जाएगी, परन्तु कातन्त्र की श्रद्धा संज्ञा उपलक्षण के रूप में अन्वर्थ हो सकती है। पाणिनि ने इस प्रकार के शब्दों की कोई संज्ञा नहीं की है।। ३७।

३८. संबुद्धि संज्ञा

कातन्त्र **आमन्त्रिते सिः सम्बुद्धिः** (२/१/५)।

आमन्त्रित=प्रसिद्ध वस्तु का अभिमुखीकरण (कार्योन्मुखीकरण) अर्थ में विहित प्रथमा विभक्ति-एकवचन 'सि' प्रत्यय की संबुद्धि संज्ञा होती है। जैसे—'हे वृक्ष! हे अम्ब!' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **आलपने सि गसञ्ञो (२/१/६)।**

सम्बोधन के अर्थ में 'सि' विभक्ति की 'ग' संज्ञा होती है। जैसे—'भोति अय्ये' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने 'आमन्त्रित' सञ्ज्ञाशब्द के लिए कोई सूत्र नहीं बनाया, परन्तु पाणिनि का एतदर्थ सूत्र है—'साऽऽमन्त्रितम्' (अ० २/३/४८)। कातन्त्रकार ने इस आमन्त्रित को यौगिक मानकर संज्ञासूत्र बनाने की आवश्यकता नहीं समझी। यह ज्ञातव्य है कि विद्यमान का ही सम्बोधन होता है, अविद्यमान का नहीं। कातन्त्रीय संबुद्धि संज्ञा के लिए कच्चायन ने 'ग' संज्ञा की है, जिसे सांकेतिक कहा जा सकता है। स्थानी-अर्थ की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है।। ३८।

३९. सप्तमी विभक्ति संज्ञा

कातन्त्र **सप्तमी (३/१/२५)।**

'यात्-याताम्-युस्, यास्-यातम्-यात, याम्-याव-याम। ईत-ईयाताम्-ईरन्, ईथास्-ईयाथाम्-ईध्वम्, ईय-ईवहि-ईमहि' इन १८ प्रत्ययों की सप्तमी संज्ञा होती है।

कच्चायन **सत्तमी एय्य-एय्युं, एय्यासि-एय्याथ, एय्यामि-एय्याम; एथ-एरं, एथो-एय्यव्हो, एय्यं-एय्याम्हे (३/१/२०)।**

सूत्रपठित 'एय्य' इत्यादि १२ प्रत्ययों की सत्तमी संज्ञा होती है।

समीक्षा पालिभाषा में द्विवचन की मान्यता न होने से प्रत्ययों की संख्या में भिन्नता है।। ३९।

४०. समास संज्ञा

कातन्त्र **नाम्नां समासो युक्तार्थः (२/५/१)।**

वस्तुवाची दो अथवा उससे अधिक नामपदों के एकत्र मिल जाने=संक्षिप्त हो जाने की समास संज्ञा होती है। जैसे—'नीलोत्पलम्, राजपुरुषः' इत्यादि।

कच्चायन **नामानं समासो युत्तत्थो (२/७/१)।**

नामों का अर्थात् प्रयुज्यमान पदार्थों का युक्तार्थ समाससंज्ञक होता है। जैसे—'कठिनदुस्स' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा दोनों व्याकरणों की शब्दावली समान होने के कारण अर्थ तथा संज्ञा की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है। सामान्य जन हो या विद्वान् कभी वह किसी विषय को विस्तार से कहता है तो कभी संक्षेप में, क्योंकि यह सभी की प्रवृत्ति होती है। कृष्णद्वैपायन व्यास ने कहा है—

विस्तीर्य हि महज्ज्ञानमृषिः संक्षेपतोऽब्रवीत् ।
इष्टं हि विदुषां लोके समासव्यासधारणम् ।। (महाभारत १/५/१)।

समास के द्वन्द्व आदि ६ नाम तो अत्यन्त प्रसिद्ध हैं, इसके अतिरिक्त विद्वानों ने प्रकारान्तर से भी ६ प्रकार के समास माने हैं—

सुपां सुपा तिङा नाम्ना धातुनाऽथ तिङां तिङा ।
सुबन्तेनेति विज्ञेयः समासः षड्विधो बुधैः ।।

(वै० भू० सा०-समासप्रकरण-१) ।। ४० ।

४१ सम्प्रदान संज्ञा

कातन्त्र **यस्मै दित्सा रोचते धारयते वा तत् सम्प्रदानम्** (२/४/१०)।

जिसे देने की इच्छा हो, जिसे रुचिकर मालूम पड़े तथा जिसके लिए कुछ धारण किया जाय, उस कारक की सम्प्रदान संज्ञा होती है। जैसे—'ब्राह्मणाय गां ददाति, देवदत्ताय रोचते मोदकः, विष्णुमित्राय गां धारयते' इत्यादि।

कच्चायन **यस्स दातुकामो रोचते धारयते वा तं सम्पदानं** (२/६/६)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'समणस्स चीवरं ददाति, समणस्स रोचते सच्चं, देवदत्तस्स सुवण्णच्छत्तं धारयते यञ्ञदत्तो' इत्यादि।

समीक्षा प्रक्रिया-विधान की दृष्टि से उभयत्र समानता है। कच्चायन में इसके अतिरिक्त भी एक सूत्र "सिलाघहनु.........सत्तम्यत्थेसु च" (२/६/७) द्रष्टव्य है।। ४१।

४२. सार्वधातुक संज्ञा

कातन्त्र **षडाद्याः सार्वधातुकम्** (३/१/३४)।

'वर्तमाना, सप्तमी, पञ्चमी, ह्यस्तनी' इन प्रारम्भिक चार विभक्तियों की सार्वधातुक संज्ञा होती है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **हीयत्तनीसत्तमीपञ्चमीवत्तमाना सब्बधातुकं** (३/१/२६)।

'हीयत्तनी, सत्तमी, पञ्चमी, वत्तमाना' इन चार विभक्तियों की सार्वधातुक संज्ञा होती है।

समीक्षा संज्ञा और विभक्तिसंख्या की दृष्टि से उभयत्र पूर्ण समानता है।। ४२।

४३. स्वर संज्ञा

कातन्त्र **तत्र चतुर्दशादौ स्वराः** (१/१/२)।

वर्णसमाम्नाय के प्रारम्भिक १४ वर्णों की स्वर संज्ञा होती है। स्वरसंज्ञक वर्ण हैं—
'अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ, ॡ, ए, ऐ, ओ, औ'।

कच्चायन **तत्थोदन्ता सरा अट्ठ** (१/१/३)।

'अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ओ' इन आठ वर्णों की स्वर संज्ञा होती है।

समीक्षा भिन्न-भिन्न व्याकरणों में ह्रस्व-दीर्घ-प्लुत आदि के भेद से इनकी संख्या में भिन्नता देखी जाती है। दो प्रकार के प्रमुख वर्णों में स्वर वर्ण वे होते हैं, जिनके उच्चारण में अन्य की अपेक्षा नहीं होती—'स्वयं राजन्ते इति स्वराः'। पाणिनीय वर्णसमाम्नाय में ९ वर्ण अच् (स्वर) माने गए हैं। कहीं- कहीं पर अनुस्वार-विसर्ग को भी जोड़ लेने पर स्वरवर्णों की संख्या १६ हो जाती है।। ४३।

४४. हेतु संज्ञा

कातन्त्र **कारयति यः स हेतुश्च** (२/४/१५)।

स्वतन्त्र कर्ता को किसी कार्य में नियुक्त या प्रेरित करने वाले की हेतु संज्ञा होती है। जैसे—'हारयति, पावयति' इत्यादि।

कच्चायन **यो कारेति स हेतु** (२/६/१२)।

जो कर्ता से किसी काम को करवाता है, उसकी हेतु संज्ञा होती है। जैसे—'हारेति, धारेति' इत्यादि।

समीक्षा अर्थ-विधान तथा संज्ञाशब्द की दृष्टि से उभयत्र पूर्ण समानता है। इस हेतु की कर्ता संज्ञा भी स्वीकार की जाती है।। ४४।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

४५. ह्यस्तनी संज्ञा

कातन्त्र ह्यस्तनी (३/१/२७)।

'दि-ताम्-अन्, सि-तम्-त, अम्-व-म। त-आताम्-अन्त, थास्-आथाम्-ध्वम्, इ-वहि-महि' इन १८ प्रत्ययों की ह्यस्तनी संज्ञा होती है।

कच्चायन हीयत्तनी आ-ऊ, ओ-त्थ, अ-म्हा; त्थ-त्थुं, से-व्हं, इं-म्हसे (३/१/२२)।

सूत्रपठित 'आ' इत्यादि १२ प्रत्ययों की हीयत्तनी संज्ञा होती है।

समीक्षा कच्चायन व्याकरण में द्विवचन न होने से संख्या में भिन्नता है। इसके अतिरिक्त तो उभयत्र समानता ही है।। ४५।

४६. ह्रस्व संज्ञा

कातन्त्र पूर्वो ह्रस्वः (१/१/५)।

एकमात्रिक स्वर वर्णों की ह्रस्व संज्ञा होती है। ह्रस्वसंज्ञक वर्ण हैं—'अ, इ, उ, ऋ, लृ'।

कच्चायन लहुमत्ता तयो रस्सा (१/१/४)।

लघुसंज्ञक वर्णों की ह्रस्वसंज्ञा होती है। ह्रस्वसंज्ञक वर्ण हैं—अ, इ, उ।

समीक्षा निरुक्त, गोपथब्राह्मण, ऋक्प्रातिशाख्य आदि प्राचीन ग्रन्थों में यह संज्ञा उपलब्ध होती है। अर्वाचीन चान्द्र व्याकरण आदि में भी यह संज्ञा की गई है। इसकी लघु संज्ञा भी की जाती है। उदात्त-अनुदात्त आदि के भेद से यह ६ प्रकार का होता है।। ४६।

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२. परिभाषाओं का समीक्षात्मक अध्ययन

४७. अनुबन्धों का प्रयोगाभाव (१)

कातन्त्र **योऽनुबन्धोऽप्रयोगी** (३/८/३१)।

प्रत्यय आदि के साथ संयुक्त अनुबन्ध का प्रयोग नहीं होता है। अर्थात् शब्दरूप में उसका उच्चारण नहीं किया जाता है। जैसे—'वृत्रहा, अग्निचित्' इत्यादि में 'क्विप्' प्रत्यय-घटित ककार आदि का।

कच्चायन **क्विलोपो च** (४/६/१६)।

'भू' आदि धातुओं से हुए 'क्वि' प्रत्यय का लोप होता है। जैसे—'सयम्भू, सभा, सङ्घो, वियो, तुरगो' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने ''क्विब् ब्रह्मभ्रूणवृत्रेषु'' (४/३/८३) इत्यादि अनेक सूत्रों द्वारा क्विप् प्रत्यय का विधान किया है, परन्तु 'क्विप्'-लोप के लिए कोई साक्षात् सूत्र नहीं बनाया है। कातन्त्रीय प्रक्रिया के अनुसार क्विप् प्रत्यय-घटित 'क्-व्-इ-प्' ये चारों वर्ण अनुबन्ध माने जाते हैं, इसलिए (३/८/३१) सूत्र द्वारा उसका किसी भी शब्दरूप में प्रयोग नहीं होता है, परन्तु कच्चायनकार ने अपनी प्रक्रिया के अनुसार 'क्वि' प्रत्यय के लोप का विधान किया है। इस प्रकार प्रक्रियाभेद होने पर भी फल की दृष्टि से समानता ही है।। ४७।

४८. वर्णवियोजन (विच्छेद) का निर्णय (२)

कातन्त्र **अनतिक्रमयन् विश्लेषयेत्** (१/१/२२)।

सम्मिलित वर्णों का विश्लेषण विना ही अतिक्रमण किए अर्थात् क्रमबद्ध रूप में करना चाहिए। जैसे—'वैयाकरणः, उच्चकैः' इत्यादि।

कच्चायन **पुब्बमधोठितमस्सरं सरेन वियोजये** (१/१/१०)।

सन्धि-कार्य की इच्छा से स्वर-रहित पूर्व व्यञ्जन को नीचे स्थित कर और स्वर को ऊपर करके स्वर से वियोजित करे। जैसे—'तत्रायं' इत्यादि।

समीक्षा लोकव्यवहार में 'कातन्त्र-कच्चायन' दोनों व्याकरणों द्वारा मान्य इस अर्थ का निर्देश सूत्र द्वारा किया गया है। 'वैयाकरण' शब्द का

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

पूर्व रूप 'व्+याकरण' माना जाता है। 'ऐ' का आगम बाद में होता है। परन्तु इस परिभाषा के अनुसार 'व्' के बाद ही इसका उच्चारण किया जायगा। पाणिनि आदि ने इस लोकप्रसिद्ध अर्थ को बताने के लिए सूत्र बनाना आवश्यक नहीं समझा।। ४८।

४९. व्यञ्जन का स्वर से संयोजन (३)

कातन्त्र **व्यञ्जनमस्वरं परं वर्णं नयेत्** (१/१/२१)।

स्वर और व्यञ्जन वर्णों में से किसको किसके साथ सम्बद्ध किया जाना चाहिए, इस प्रश्न का समाधान करते हुए कातन्त्र में कहा गया है कि व्यञ्जन वर्ण को परवर्ती वर्ण से सम्बद्ध करना चाहिए।

कच्चायन **नये परं युत्ते** (१/१/११)।

इसके अनुसार स्वररहित व्यञ्जन को योजनीय दूसरे अक्षर में ले जाकर जोड़ने की बात कही गई है। इससे 'अक्कोच्छि मं' में निग्गहीत का परनयन नहीं होता।

समीक्षा वस्तुतः व्यञ्जन वर्ण पश्चाद्वर्ती होने के कारण परतन्त्र होते हैं। अतः इस परिभाषा की आवश्यकता नहीं है। फिर भी इसे सुखार्थ या स्वरूपाख्यानपरक समझना चाहिए।। ४९।

* * *

३. विधियों का समीक्षात्मक अध्ययन

५०/(१) 'अ' का लोप (१)

कातन्त्र **ईङ्योर्वा** (२/२/५४)।

'ई-ङि' प्रत्ययों के परे रहते 'अन्' के अकार का विकल्प से लोप होता है। जैसे—'राज्ञी, राज्ञि, सामनी, साम्नि' इत्यादि।

कच्चायन **स्मिम्हि रञ्ञे राजिनि** (२/२/१९)।

'स्मिं' विभक्ति की परता में विभक्तिसहित सम्पूर्ण 'राज' शब्द को 'रञ्ञे' तथा 'राजिनि' आदेश होते हैं। जैसे—'रञ्ञे, राजिनि'।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा भाषाभेद से यहाँ शब्दरूपों में भिन्नता होने के कारण प्रक्रियाभेद अपनाया गया है।। ५०/१।

५०(२) **कातन्त्र** **अस्तेरादेः** (३/४/४१)।

'अस्' धातु के आदि में पठित अकार का लोप होता है। जैसे—'स्तः, सन्ति, स्वः, स्मः' इत्यादि।

कच्चायन **सब्बत्थासस्सादिलोपो च** (३/४/२५)।

सभी विभक्तियों तथा प्रत्ययों की परता में 'अस्' धातु के आदि अकार का लोप होता है। जैसे—'सन्ति, समानो, सिया' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ कार्यविधान की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। ५०/२।

५०(३) **कातन्त्र** **अम्शसोरादिर्लोपम्** (२/१/४७)।

नदीसंज्ञक शब्दों से परवर्ती द्वितीयाविभक्ति-एकवचन 'अम्' प्रत्यय तथा द्वितीया-बहुवचन 'शस्' प्रत्यय के आदि अकार का लोप होता है। जैसे—'नदीम्, लक्ष्मीम्, वधूः' इत्यादि।

कच्चायन **सरलोपोमादेसप्पच्चयादिम्हि सरलोपे तु पकति** (२/१/३२)।

'अं' विभक्ति, आदेश तथा प्रत्ययादि की परता में पूर्ववर्ती स्वर का लोप होता है तथा प्रकृतिभाव भी होता है। जैसे—'पुरिसं, पापियो' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार 'अम्-शस्' प्रत्ययों के आदि अकार का तथा कच्चायनकार 'अं' आदि विभक्तियों से पूर्ववर्ती शब्द के अन्तिम स्वर का जो लोपविधान करते हैं, वह अपनी-अपनी व्याकरणप्रक्रिया के अनुसार है। कार्य तथा शब्दरूप आदि की दृष्टि से प्रायः समानता ही है।। ५०/३।

५१. 'अन्' का लोप (२)

कातन्त्र **पुंसोऽन्शब्दलोपः** (२/२/४०)।

कुछ स्वर तथा व्यञ्जन वर्णों के परे रहते 'पुमन्स्' शब्द-घटित 'अन्'-भाग का लोप होता है। जैसे—'पुम्भ्याम्' इत्यादि।

कच्चायन **पुमस्स लिङ्गादिसु समासेसु** (२/४/१२)।

लिङ्गादि पदों के साथ समास होने पर 'पुम' शब्द के अन्तिम वर्ण अकार का लोप होता है। जैसे—'पुंल्लिङ्ग, पुम्भावो' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा 'पुमन्स्-पुम' इन शब्दों के भेद से आदेशों में भी आंशिक भेद उभयत्र देखा जाता है।। ५१।

५२. 'अम्' का लोप (३)

कातन्त्र **व्यञ्जनाच्च; नपुंसकात् स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्** (२/१/४९; २/६)।

व्यञ्जनसंज्ञक वर्ण से तथा नपुंसकलिङ्गवाले शब्दों से परवर्ती 'अम्' प्रत्यय का लोप होता है। जैसे—'पयः, यशः, मनः' इत्यादि।

कच्चायन **इमस्सिदमंसिसु नपुंसके, अमुस्सादुं** (२/२/१०-११)।

अं-विभक्ति की परता में नपुंसकलिङ्ग में विद्यमान विभक्ति के सहित सम्पूर्ण 'इम-अमु' शब्दों के 'इदं-अदुं' आदेश हो जाते हैं। जैसे—'इदं, अदुं'।

समीक्षा अपने-अपने व्याकरण की प्रक्रिया के अनुसार भिन्न-भिन्न आदेश किये गये हैं, परन्तु कच्चायन का प्रक्रियालाघव विशेष सरलता का बोधक कहा जा सकता है।। ५२।

५३. आत्मनेपदविधान (४)

कातन्त्र **आत्मनेपदानि भावकर्मणोः, कर्त्तरि रुचादिङानुबन्धेभ्यः, चेक्रीयितान्तात्, आय्यन्ताच्च** (३/२/४०, ४२, ४३, ४४)।

भाववाच्य-कर्मवाच्य अर्थ में, रुचादिगणपठित 'ङ्' अनुबन्ध वाली धातुओं से, चेक्रीयितप्रत्ययान्त धातु से तथा 'आयि'-प्रत्ययान्त धातुओं से कर्तृवाच्य में आत्मनेपद होता है। जैसे—'शय्यते भवता, क्रियते कटः, रोचते, शेते, पापच्यते, हंसायते' इत्यादि।

कच्चायन **अत्तनोपदानि भावे च कम्मनि, कत्तरि च** (३/२/२२, २३)।

भाव, कर्म तथा कर्त्ता अर्थ में आत्मनेपदसंज्ञक प्रत्ययों का विधान होता है। जैसे—'उच्चते, कय्यते, मञ्जते, रोचते' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ सूत्रसंख्या की दृष्टि से कच्चायन में लाघव कहा जा सकता है, लेकिन कातन्त्र में विविध गणों तथा भिन्न-भिन्न प्रत्ययों का विधान किये जाने से उनका स्पष्टीकरण अनेक सूत्रों में किया गया है। अतः सामान्यतेया उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। ५३।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

५४. उत्तम पुरुष का विधान (५)

कातन्त्र **अस्मद्युत्तमः** (३/१/७)।

विशेष्य रूप में 'अस्मद्' शब्द के प्रयुक्त या अप्रयुक्त होने पर भी उत्तम पुरुष का विधान होता है। जैसे—'वयं पचामः, पचामः' इत्यादि।

कच्चायन **अम्हे उत्तमो** (३/१/७)।

'अम्ह' शब्द के प्रयुज्यमान अथवा अप्रयुज्यमान रहने पर भी उत्तम पुरुष का विधान होता है। जैसे—'मयं यजाम, यजाम' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ पर उभयत्र पूर्ण समानता है।। ५४।

५५. एकवचन का विधान (६)

कातन्त्र **द्वन्द्वैकत्वम्, तथा द्विगोः** (२/५/१६, १७)।

समाहार द्वन्द्व तथा समाहार द्विगु में एकवचन प्रवृत्त होता है। जैसे—'अहिनकुलम्, गङ्गाशोणम्, पञ्चगवम्, चतुष्पथम्' इत्यादि।

कच्चायन **दिगुस्सेकत्तं, तथा द्वन्दे पाणितुरिययोग्गसेनङ्गखुद्दजन्तुकविविध-विरुद्धविसभागत्थादीनञ्च, विभासा रुक्खतिणपसुधनधञ्ञ-जनपदादीनञ्च** (२/७/६, ७, ८)।

द्विगु तथा द्वन्द्व समास में एकत्व होता है। 'वृक्ष' आदि शब्दों के द्वन्द्व समास में यह कार्य विकल्प से होगा। जैसे—'तिलोकं, सीलपञ्ञं, अस्सत्थकपित्थं, कासिकोसलं' इत्यादि।

समीक्षा वस्तुओं के एकत्र समूह या समुदाय को समाहार कहते हैं। इसीलिए इसमें एकवचन का विधान संगत होता है। कच्चायनकार ने द्वन्द्व समास में अनेक शब्दों का दो सूत्रों में पाठ किया है, जबकि कातन्त्रकार ने इन्हें सूत्र में नहीं पढ़ा है, परन्तु इसका स्पष्टीकरण व्याख्याकार करते हैं। अतः उभयत्र समानता ही है।। ५५।

५६. जस् का लोप (७)

कातन्त्र **कतेश्च जस्शसोर्लुक्** (२/१/७६)।

संख्यासंज्ञक षकारान्त-नकारान्त शब्दों से परवर्ती 'जस्-शस्' प्रत्ययों का लोप होता है। जैसे—'षट्, पञ्च, सप्त, दश' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **पञ्चादीनमकारो** (२/२/१५)।

'यो' विभक्ति की परता में संख्यावाचक 'पञ्च' आदि शब्दों के अन्तिम स्वर का विभक्ति-सहित अकारादेश हो जाता है सभी लिङ्गों में। जैसे—'पञ्च इत्थी, नव जना' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायनकार का प्रक्रियालाघव द्रष्टव्य है।। ५६।

५७. त्रैकालिक प्रत्ययों का विधान (८)

कातन्त्र **धातुसम्बन्धे प्रत्ययाः** (४/५/११३)।

मूलतः अन्य कालों में निर्दिष्ट प्रत्यय उनसे भिन्न कालों में भी साधु (प्रमाण) माने जाते हैं। जैसे—'अग्निष्टोमयाजी पुत्रोऽस्य जनिता, कृतः कटः श्वो भविता' इत्यादि।

कच्चायन **णादयो तेकालिका** (४/२/१)।

'ण' से लेकर यु-पर्यन्त प्रत्यय तीनों कालों में होते हैं। जैसे—'कुम्भकारो, रथकारो' इत्यादि।

समीक्षा तात्पर्यार्थ की शब्दावली में भिन्नता होने पर भी कार्यविधान की दृष्टि से तो समानता ही है। लेकिन कच्चायन के शब्दप्रयोग में अपेक्षाकृत सरलता प्रतीत होती है।। ५७।

५८. नपुंसकलिङ्ग का विधान (९)

कातन्त्र **द्वन्द्वैकत्वम्, तथा द्विगोः** (२/५/१६-१७)।

समाहार द्वन्द्व तथा समाहार द्विगु में नपुंसकलिङ्ग प्रवृत्त होता है। जैसे—'अहिनकुलम्, पञ्चगवम्' इत्यादि।

कच्चायन **दिगुस्सेकत्तं, तथा द्वन्दे पाणितुरिययोग्गसेनङ्गखुद्दजन्तुकविविध-विरुद्धविसभागत्थादीनञ्च, विभासा रुक्खतिणपसुधनधञ्जजन-पदादीनञ्च** (२/७/६-८)।

द्विगु तथा द्वन्द्व समास में नपुंसकलिङ्ग होता है। 'वृक्ष' आदि शब्दों के द्वन्द्व समास में यह कार्य विकल्प से होगा। जैसे—'तिलोकं, सीलपञ्ञं, कासिकोसलं' इत्यादि।

समीक्षा समाहार=समुदाय में प्रायः सभी लिङ्गवाले शब्दों का समावेश होता है। अतः 'सामान्ये नपुंसकम्' के नियमानुसार

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

नपुंसकलिङ्ग का विधान उचित माना जाता है। कच्चायनकार ने द्वन्द्व समास में अनेक शब्दों का दो सूत्रों में पाठ किया है, जबकि कातन्त्रकार ने इन्हें सूत्र में नहीं पढ़ा है, परन्तु इसका स्पष्टीकरण कातन्त्र के व्याख्याकार करते हैं। अतः उभयत्र समानता ही है।। ५८।

५९/(१) नलोपादेश (१०)

कातन्त्र **अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्** (२/२/३९)।

घुट्भिन्न स्वर तथा व्यञ्जन के परे रहने पर अनुषङ्गसंज्ञक नकार का लोप होता है। जैसे—'विदुषः, शीलवतः, बुद्धिमतः' इत्यादि।

कच्चायन **तोतिता सस्मिंनासु** (२/२/८)।

'स, स्मिं' तथा 'ना' विभक्तियों की परता में विभक्तिसहित सम्पूर्ण 'न्तु' प्रत्यय के स्थान में क्रमशः 'तो, ति' तथा 'ता' आदेश विकल्प से होता है। जैसे—'गुणवतो, गुणवति, गुणवता' इत्यादि।

समीक्षा अपने-अपने व्याकरण की प्रक्रिया के अनुसार यहाँ भिन्न-भिन्न आदेश किए गये हैं। परन्तु कच्चायन का प्रक्रियालाघव विशेष सुविधाजनक कहा जा सकता है।। ५९/१।

५९/(२) **कातन्त्र** **लिङ्गान्तनकारस्य** (२/२/५६)।

लिङ्गसंज्ञक शब्द के अन्त में विद्यमान नकार का लोप होता है। जैसे—'सखा, राजा' इत्यादि।

कच्चायन **न्तुस्स तमीकारे, भवतो भोतो, आकारो वा** (२/४/३१, ३२, ३८)।

'न्तु' प्रत्यय का वैकल्पिक तकार, भवन्त शब्द का 'भोत' आदेश तथा आकार को वैकल्पिक ह्रस्व होता है। जैसे—'भोति, भो राज' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र में जिस नकार का लोप स्पष्ट रूप में किया गया है, उस नकार के अभाव को कच्चायन में प्रकारान्तर से बताया गया है। जैसे—'न्तु' को तकारादेश होने पर तथा 'भवन्तु' को 'भोत' आदेश होने पर नकार समाप्त हो जाता है। इस प्रकार प्रक्रिया की दृष्टि से भिन्नता होने पर भी निष्कर्ष की दृष्टि से उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। ५९/२।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

५९/(३) **कातन्त्र** **नस्य तत्पुरुषे लोप्यः** (२/५/२२)।

नञ् से प्रारम्भ किये जाने वाले तत्पुरुष समास में नञ्-घटित नकार का लोप होता है। जैसे—'असवर्णः, अघोषः' इत्यादि।

कच्चायन **अत्तन्नस्स तप्पुरिसे** (२/७/१८)।

तत्पुरुष समास में उत्तरपद के परे रहते 'न' को 'अ' हो जाता है। जैसे—'अब्राह्मणो, अवसलो' इत्यादि।

समीक्षा विधि अंश में उभयत्र समानता है, लेकिन कातन्त्रकार ने 'अनजः' इत्यादि में 'न' तथा 'अ' का विपर्यास किया है— ''स्वरेऽक्षर-विपर्ययः'' (२/५/२३)। जबकि कच्चायनकार ने 'अनस्सो' इत्यादि में 'न' को 'अन' आदेश किया है—'सरे अनं' (२/७/१९)।। ५९/३।

५९/(४) **कातन्त्र** **वनतितनोत्यादिप्रतिषिद्धेटां धुटि पञ्चमोऽच्चातः, यममनतनगमां क्वौ** (४/१/५९, ६९)।

'वन-यम' इत्यादि धातुओं में वर्गीय पञ्चम वर्ण का लोप होता है, धुडादि तथा क्विप् प्रत्यय के परे रहते। जैसे—'हतवान्, सम्मतः' इत्यादि।

कच्चायन **गमखनहनरमादीनमन्तो** (४/३/१६)।

'त' तथा 'ति' प्रत्यय की परता में 'गम' आदि धातुओं के अन्तिम व्यञ्जन का लोप होता है। जैसे—'मति, उपहतं' इत्यादि।

समीक्षा सूत्रसंख्या तथा सूत्रपठित धातुओं में पर्याप्त समानता न होने पर भी कार्य और निमित्त की दृष्टि से प्रायः उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। ५९/४।

५९/(५) **कातन्त्र** **रञ्जेर्भावकरणयोः** (४/१/६६)।

भाव-करण अर्थ में विहित 'घञ्' प्रत्यय के परे रहते 'रन्ज्' धातु में नकार का लोप होता है। जैसे—'रागः' इत्यादि।

कच्चायन **णम्हि रन्जस्स जो भावकरणेसु** (४/४/१)।

'ण' प्रत्यय की परता में 'रन्ज' धातु के अन्तर्गत 'न्ज' को विकल्प से 'ज' आदेश होता है भाव-करण अर्थ में। जैसे—'रागो' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा विधि में भेद होने पर भी अर्थ तथा प्रयोग आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता ही प्रतीत होती है।। ५९/५।

६०. परस्मैपदविधान (११)

कातन्त्र **शेषात् कर्तरि परस्मैपदम्** (३/२/४७)।

आत्मनेपद-विधान को छोड़कर शेष धातुओं से कर्तृवाच्य में परस्मैपद होता है। जैसे—'भवति, जुहोति, दीव्यति, क्रीणाति' इत्यादि।

कच्चायन **(१) कत्तरि परस्सपदं** (३/२/२५)।

कर्ता अर्थ में परस्मैपद होता है। जैसे—'करोति, गच्छति' इत्यादि।

(२) अत्तनोपदानि परस्सपदत्तं (३/४/३७)।

कहीं-कहीं आत्मनेपद को परस्मैपद हो जाता है। जैसे—'पच्चति, कुच्चति, लब्भति, सिज्झति' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण विधान-सम्बन्धी भिन्नता देखे जाने पर भी शब्दरूप आदि की दृष्टि से प्रायः समानता ही कही जा सकती है।। ६०।

६१. प्रथम पुरुष का विधान (१२)

कातन्त्र **नाम्नि प्रयुज्यमानेऽपि प्रथमः** (३/१/५)।

'युष्मद्-अस्मद्' से भिन्न स्याद्यन्त पद के प्रयुक्त होने तथा प्रयुक्त न होने पर भी प्रथम पुरुष का विधान होता है। जैसे—'ते पचन्ति, पचन्ति, कुम्भकारेण पच्यते घटः, पच्यते घटः' इत्यादि।

कच्चायन **नामम्हि पयुज्जमाने पि तुल्याधिकरणे पठमो** (३/१/५)।

नाम के प्रयुज्यमान तथा अप्रयुज्यमान होने पर भी तुल्य अधिकरण में प्रथम पुरुष होता है। जैसे—'ते गच्छन्ति, गच्छन्ति' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ दोनों व्याकरणों में पूर्ण रूपेण समानता है।। ६१।

६२. मध्यम पुरुष का विधान (१३)

कातन्त्र **युष्मदि मध्यमः** (३/१/६)।

'युष्मद्' शब्द का प्रयोग होने पर अथवा न होने पर भी मध्यम पुरुष का विधान होता है। जैसे—'त्वं पचसि, पचसि' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **तुम्हे मज्झिमो (३/१/६)।**

'तुम्ह' शब्द के प्रयुज्यमान अथवा अप्रयुज्यमान रहने पर भी मध्यम पुरुष का विधान होता है। जैसे—'त्वं यासि, यासि' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ पर भी विधि तथा शब्दरूप आदि की दृष्टि से उभयत्र पूर्ण समानता देखी जाती है।। ६२।

६३. 'म्'-लोप (१४)

कातन्त्र **यममनतनगमां क्वौ (४/१/६९)।**

'क्विप्' प्रत्यय के परे रहते 'यम्' इत्यादि धातुओं में विद्यमान वर्गीय पञ्चम वर्ण का लोप होता है। जैसे—'संगतः, संयतः' इत्यादि।

कच्चायन **गमखनहनरमादीनमन्तो (४/३/१६)।**

'त' तथा 'ति' प्रत्ययों की परता में 'गम' आदि धातुओं के अन्तिम व्यञ्जन वर्ण का लोप होता है। जैसे—'सुगतो, अभिरति' इत्यादि।

समीक्षा सूत्रपठित धातुओं में पर्याप्त समानता न होने पर भी कार्य और निमित्त की दृष्टि से प्रायः उभयत्र समानता ही है।। ६३।

६४. लोपविधि (१५)

कातन्त्र **आदिलोपोऽन्तलोपश्च मध्यलोपस्तथैव च ।**
विभक्तिपदवर्णानां दृश्यते शार्ववर्मिके ।।

(कात० दु० टी०, क० च० १/२/१२)।

आचार्य शर्ववर्मा द्वारा रचित कातन्त्र व्याकरण में आदि-मध्य-अन्त के वर्णों का लोप होता है। जैसे—'श्रिया इन्दुः' इत्यादि।

कच्चायन **तेसु वुद्धिलोपागमविकारविपरीतादेसा च (२/८/६१)।**

बुद्धवचन के अनुसार कहीं-कहीं आदि, मध्य तथा अन्त में स्वरों का लोप होता है। जैसे—'तालीसं, कत्तुकामो, भिक्खु' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायनकार ने सूत्र-द्वारा लोपविधान किया है, जबकि कातन्त्र में इसका निर्देश व्याख्याकारों द्वारा किया गया है। विधि की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है।। ६४।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

६५. विभक्तिलुक् (१६)

कातन्त्र **अन्यस्माल्लुक्, अव्ययाच्च** (२/४/३, ४)।

अव्ययीभाव समास में अकारान्त-भिन्न शब्द से तथा अव्ययसंज्ञक शब्दों से विभक्तियों का लुक् होता है। जैसे—'उपवधु, अनुविष्णु, प्रातः, च' इत्यादि।

कच्चायन **अञ्ञस्मा लोपो च** (२/७/२८)।

अव्ययीभाव समास में अकारान्त-भिन्न शब्दों से विभक्तियों का लोप होता है। जैसे—'अधिकुमारि, अधित्थि' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ लुक्-लोप संज्ञाओं में तो अन्तर है ही, इसके अतिरिक्त कातन्त्रकार ने अव्ययसंज्ञक शब्दों से भी विभक्तिलुक् दिखाया है, जो कच्चायन में 'उपसर्ग-निपात' शब्दों से देखा जाता है—द्र०, सूत्र ''सब्बासमावुसोपसग्गनिपातादीहि च'' (२/४/११)।। ६५।

६६. विभक्तिलोप (१७)

कातन्त्र **तत्स्था लोप्या विभक्तयः** (२/५/२)।

युक्तार्थ (समास) मात्र में प्रयुक्त 'सि, औ, जस्' आदि विभक्तियों का लोप होता है। जैसे—'नीलोत्पलम्, राजपुरुषः' इत्यादि।

कच्चायन **तेसं विभत्तियो लोपा च** (२/७/२)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'कठिनदुस्सं, आगन्तुकभत्तं' इत्यादि।

समीक्षा शब्दावली तथा अर्थ में साम्य होने के कारण उभयत्र समानता ही कही जायगी। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि कहीं-कहीं विभक्तियों का लोप नहीं भी होता है। लोप के निषेधार्थ पाणिनि ने २४ सूत्र बनाये हैं, परन्तु कातन्त्रकार तथा कच्चायनकार ने इसके लिए सूत्र नहीं बनाये। इसका स्पष्टीकरण यथास्थान व्याख्याकारों द्वारा किया गया है।। ६६।

६७. वृद्धिविधान (१८)

कातन्त्र **वृद्धिरादौ सणे** (२/६/४९)।

तद्धितसंज्ञक णकारानुबन्ध वाले प्रत्यय के परे रहने पर पूर्ववर्ती शब्द में आदि स्वर को वृद्धि आदेश होता है। जैसे—'शैवः, औपगवः' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **वुद्धादिसरस्स वासंयोगन्तस्स सणे च** (२/८/५७)।

णकारयुक्त प्रत्ययों की परता में आदि स्वर की अथवा असंयोगान्त आदि व्यञ्जन के स्वर की वृद्धि होती है। जैसे—'आभिधम्मिको, वासिट्ठो' इत्यादि।

समीक्षा प्रायः उभयत्र समानता ही है, केवल सरलता के लिए कच्चायनकार ने 'असंयोगन्तस्स' पद का भी पाठ कर दिया है। यह भी ज्ञातव्य है कि कच्चायनकार ने वृद्धि संज्ञा नहीं की है।। ६७।

६८. 'शस्' प्रत्यय का लुक् (१९)

कातन्त्र **कतेश्च जस्शसोर्लुक्** (२/१/७६)।

संख्यासंज्ञक षकारान्त-नकारान्त शब्दों से परवर्ती 'शस्' प्रत्यय का लोप होता है। जैसे—'षट्, पञ्च, नव, दश' इत्यादि।

कच्चायन **पञ्चादीनमकारो** (२/२/१५)।

'यो' विभक्ति की परता में संख्यावाचक 'पञ्च' आदि शब्दों के अन्तिम स्वर का विभक्ति-सहित अकारादेश हो जाता है सभी लिङ्गों में। जैसे—'पञ्च, नव' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ कच्चायनकार का प्रक्रियालाघव द्रष्टव्य है।। ६८।

६९. सम्प्रसारणविधि (२०)

कातन्त्र **स्वपिवचियजादीनां यण्परोक्षाशीःषु** (३/४/३)।

'यण्' प्रत्यय तथा 'परोक्षा-आशीः'-विभक्तिसंज्ञक प्रत्ययों के परे रहते स्वपादि धातुओं में सम्प्रसारण होता है। जैसे—'सुप्यते, उच्यते, उवाच, इज्यते, इज्यात्' इत्यादि।

कच्चायन **वचवसवहादीनमुकारो वस्स ये, यजस्सादिस्सि** (३/४/६, २२)।

'वच, वस, वह' धातुओं के वकार को उकार तथा 'यज' धातु के यकार को इकारादेश होता है। जैसे—'उच्चते, इज्जते' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायनकार ने इकार-उकार की सम्प्रसारण संज्ञा नहीं की है। इसलिए उन्होंने इन्हीं आदेशों का सूत्र द्वारा विधान किया है, जबकि कातन्त्रकार इकार-उकार की सम्प्रसारण संज्ञा करने के कारण

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

सम्प्रसारणविधि का निर्देश करते हैं। इस प्रकार फल की दृष्टि से उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। ६९।

७०. 'स्' का लोप (२१)

कातन्त्र **अस्तेः सौ** (३/६/३९)।

'सि' विभक्ति के परे रहते 'अस् भुवि' (२/२८) धातु के सकार का लोप होता है। जैसे—'असि'।

कच्चायन **सिम्हि च** (३/४/१५)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'असि'।

समीक्षा धातु, प्रत्यय, कार्य तथा उदाहरण की दृष्टि से उभयत्र पूर्ण समानता प्रतीत होती है।। ७०।

७१/(१) 'सि' प्रत्यय का लोप (२२)

कातन्त्र **व्यञ्जनाच्च; नपुंसकात् स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्** (२/१/४९; २/६)।

व्यञ्जनसंज्ञक वर्ण से तथा नपुंसकलिङ्ग वाले शब्दों से परवर्ती 'सि' प्रत्यय का लोप होता है। जैसे—'वाक्, पयः' इत्यादि।

कच्चायन **इमस्सिदमंसिसु नपुंसके, अमुस्सादुं** (२/२/१०-११)।

'सि' विभक्ति की परता में नपुंसकलिङ्ग में विद्यमान विभक्ति के सहित सम्पूर्ण 'इम-अमु' शब्दों के 'इदं-अदुं' आदेश हो जाते हैं। जैसे—इदं, अदुं।

समीक्षा अपने-अपने व्याकरण की प्रक्रिया के अनुसार भिन्न-भिन्न आदेश किए गये हैं, परन्तु कच्चायन का प्रक्रियालाघव विशेष सरलता का बोधक है।। ७१/१।

७१/(२) कातन्त्र **ह्रस्वनदीश्रद्धाभ्यः सिर्लोपम्** (२/१/७१)।

ह्रस्व-नदी-श्रद्धासंज्ञक लिङ्ग से परवर्ती 'सि' प्रत्यय का लोप हो जाता है। जैसे—'हे वृक्ष, हे अग्ने, हे श्रद्धे' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन सेसतो लोपं गसिपि (२/४/१०)।

अकारान्त नपुंसकभिन्न शब्दों के पश्चात् आने वाली सम्बोधन तथा प्रथमा विभक्ति के एकवचन में 'सि' विभक्ति का लोप होता है। जैसे—'भो राजा' इत्यादि।

समीक्षा शब्दभेद होने पर भी आदेश में उभयत्र समानता है।। ७१/२।

७१/(३) **कातन्त्र** अकारादसम्बुद्धौ मुश्च (२/२/७)।

नपुंसकलिङ्ग वाले अकारान्त शब्द से परवर्ती 'सि' प्रत्यय का लोप होता है। जैसे—'कुण्डम्, अतिजरम्' इत्यादि।

कच्चायन सिं (२/४/९)।

अकारान्त नपुंसकलिङ्ग वाले शब्दों के पश्चात् आने वाली 'सि' विभक्ति को 'अं' आदेश होता है। जैसे—'सब्बं' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार के द्वारा 'मु' आगम तथा 'सि'-लोप करने की अपेक्षा कच्चायन में किये गये 'अं' आदेश से प्रक्रिया में सुगमता होती है।। ७१/३।

७२. स्यादि विभक्तियों का लुक् (२३)

कातन्त्र अव्ययाच्च (२/४/४)।

अव्ययसंज्ञक शब्दों से परवर्ती स्यादि विभक्तियों का लुक् होता है। जैसे—'अधि, प्रातः, एव, च' इत्यादि।

कच्चायन सब्बासमावुसोपसग्गनिपातादीहि च (२/४/११)।

उपसर्ग तथा निपातों के पश्चात् आने वाली सभी विभक्तियों का लोप होता है। जैसे—'अधि, यथा, खलु' इत्यादि।

समीक्षा पद-नामों में भेद होने पर भी आदेश में उभयत्र समानता देखी जाती है।। ७२।

७३. 'हि' का लोप (२४)

कातन्त्र हेरकारादहन्तेः, नोश्च विकरणादसंयोगात्, उकाराच्च (३/४/३३, ३४, ३५)।

अवर्ण, नु-विकरण तथा उ-विकरण से परवर्ती 'हि' प्रत्यय का लोप होता है। जैसे—'गच्छ, चिनु, कुरु' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन हि लोपं वा (३/३/२२)।

हि-विभक्ति का विकल्प से लोप हो जाता है। जैसे—'गच्छ, गमय' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने विशेष स्पष्टीकरण के उद्देश्य से 'हि'-लोप के लिए तीन सूत्र बनाए हैं, परन्तु कच्चायनकार ने एक ही सूत्र में उसका निर्देश करके लाघव प्रदर्शित किया है।। ७३।

* * *

३.अ निषेधरूप विधियों का समीक्षात्मक अध्ययन

७४. 'ते' आदेश का निषेध (२५)

कातन्त्र न पादादौ (२/३/४)। द्र०-चादियोगे च (२/३/५)।

श्लोकपाद के आदि में रहने पर 'तव' आदि के स्थान में 'ते' आदेश नहीं होता है। जैसे—'तवाप्यभिमतः शिवः' इत्यादि।

कच्चायन नाम्हि (२/२/३०)।

'अं' विभक्ति की परता में पद के पश्चात् 'ते' आदेश नहीं होता है। जैसे—'पस्सेय्य तं' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार श्लोकपाद के आदि में पठित 'तव' आदि को 'ते' आदेश का निषेध करते हैं, जबकि कच्चायनकार ने किसी पद के बाद में आने वाले 'तं' के स्थान में 'ते' आदेश का निषेध किया है। यह भेद भाषागत प्रयोगभेद के कारण कहा जा सकता है।। ७४।

७५. 'मे' आदेश का निषेध (२६)

कातन्त्र न पादादौ (२/३/४)। द्र०-चादियोगे च (२/३/५)।

श्लोकपाद के आदि में रहने पर 'मम' आदि के स्थान में 'मे' आदेश नहीं होता है। जैसे—'ममास्ते कुलदेवो यः' इत्यादि।

कच्चायन नाम्हि (२/२/३०)।

'अं' विभक्ति की परता में पद के पश्चात् 'मे' आदेश नहीं होता है। जैसे—'सो मं ब्रुवि' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा द्र०-'ते' आदेश के निषेध की समीक्षा, क्रम सं०-७४।। ७५।

७६/(१) सर्वनाम-सम्बन्धी कार्यों का निषेध (२७)

कातन्त्र **नान्यत् सार्वनामिकम्, तृतीयासमासे च, बहुव्रीहौ** (२/१/३३-३५)।

द्वन्द्व, तृतीया तथा बहुव्रीहि समास में सर्वनाम-सम्बन्धी कार्य नहीं होते हैं। जैसे—'पूर्वापराय, मासपूर्वाय, वस्त्रान्तरवसनान्तराः' इत्यादि।

कच्चायन **तयो नेव च सब्बनामेहि** (२/१/५९)।

अकारान्त सर्वनामों के पश्चात् आनेवाली 'स्मा, स्मिं, स' विभक्तियों को क्रमशः 'आ, ए, आय' आदेश नहीं होते हैं। जैसे—'सब्बस्मा' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र और कच्चायन में आदेश-निषेध की समानता है, परन्तु रूप की समानता तो कातन्त्रीय आदेश और कच्चायन के प्रत्ययों में दृष्ट होती है, जो भाषागत विशेषता के कारण कही जा सकती है।। ७६/१।

७६/(२) **कातन्त्र** **नान्यत् सार्वनामिकम्, तृतीयासमासे च, बहुव्रीहौ** (२/१/३३-३५)।

द्वन्द्व समास, तृतीया तत्पुरुष समास तथा बहुव्रीहि समास में एकारादेश के अतिरिक्त अन्य सर्वनामसम्बन्धी कार्य नहीं होते हैं। जैसे—'पूर्वापराय, मासपूर्वाय, त्वत्कपितृकः' इत्यादि।

कच्चायन **नाञ्ञं सब्बनामिकं, बहुब्बीहिम्हि च** (२/३/६-७)।

द्वन्द्व समास तथा बहुव्रीहि समास में एकारादेश के अतिरिक्त सर्वनाम-विहित अन्य कार्य नहीं होते हैं। जैसे—'पुब्बापरानं, पियपुब्बाय' इत्यादि।

समीक्षा प्रायः उभयत्र समानता होने पर भी कच्चायन में तृतीया-तत्पुरुष समास में सर्वनाम-विहित कार्यों के निषेध का उल्लेख नहीं है।। ७६/२।

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

४. नियमों का समीक्षात्मक अध्ययन

७७. कृत्प्रत्ययार्थ (१)

कातन्त्र **कर्तरि कृतः (४/६/४६)।**

कृत्-संज्ञा वाले प्रत्यय अन्य अर्थों में न होकर कर्ता अर्थ में ही होते हैं। जैसे—'कर्ता, कारकः, जनार्दनः, कुम्भकारः' इत्यादि।

कच्चायन **कत्तरि कितं (४/६/१)।**

कर्ता अर्थ में 'कित' प्रत्यय होते हैं। जैसे—'कारको, नेता' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ उभयत्र पूर्ण रूप से समानता है। इसे विधिसूत्र भी कहा जा सकता है।। ७७।

७८. कृत्यादि-प्रत्ययार्थ (२)

कातन्त्र **भावकर्मणोः कृत्यक्तखलर्थाः (४/६/४७)।**

कृत्यसंज्ञक, क्त-प्रत्यय तथा खलर्थक प्रत्यय भाव एवं कर्म अर्थ में ही होते हैं। जैसे—'शयितव्यं भवता, कृतः कटो भवता, ईषत्पानः सोमो भवता' इत्यादि।

कच्चायन **भावकम्मेसु किच्चक्तक्खत्था (४/६/२)।**

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'उपसम्पादनीयं भवता, कत्तब्बं कम्मं भवता, असितं भवता, सुसयो भवता' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ कातन्त्रकारीय खल्-प्रत्ययगत लकारानुबन्ध को छोड़कर अन्य सभी प्रकार की उभयत्र समानता है।। ७८।

७९ नाम-आख्यात प्रत्ययों का स्थान (३)

कातन्त्र **प्रत्ययः परः (३/२/१)।**

स्यादि तथा त्यादि प्रत्यय लिङ्ग एवं धातु से पर में होते हैं। जैसे—'कारकः, गोपायते' इत्यादि।

कच्चायन **धातुलिङ्गेहि पराप्पच्चया (३/२/१)।**

धातुओं के बाद त्यादि प्रत्यय तथा लिङ्ग के बाद स्यादि प्रत्यय होते हैं। जैसे—'गच्छति, वासिट्ठो' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा कातन्त्रकार ने 'कृत्-तद्धित' आदि के अधिकारसूत्र बनाए हैं। अतः उन्होंने सूत्र में प्रकृति का उल्लेख नहीं किया है, परन्तु कच्चायनकार ने सूत्र में ही प्रकृति का उल्लेख करके अर्थ को स्पष्ट किया है। स्थाननिर्धारण आदि की दृष्टि से दोनों में पूर्ण समानता ही प्रतीत होती है।। ७९।

८०. पुरुषों में परवर्ती का विधान (४)

कातन्त्र **युगपद्वचने परः पुरुषाणाम् (३/१/४)।**

एक क्रिया वाले काल को जहाँ अनेक पुरुष (प्रथमादि) कह रहे हों तो वहाँ परवर्ती पुरुष का प्रयोग होता है। जैसे—'स च त्वं चाहं च पचामः, त्वं चाहं च पचावः, स च त्वं च पचथः' इत्यादि।

कच्चायन **सब्बेसमेकाभिधाने परो पुरिसो (३/१/४)।**

प्रथम, मध्यम तथा उत्तम पुरुषों का एक साथ कथन होने पर अन्तिम पुरुष का ही ग्रहण किया जाता है। जैसे—'सो च पठति, त्वं च पठसि, अहं च पठामि, मयं पठाम' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण कुछ शब्दों में भेद होने पर भी अर्थ आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है।। ८०।

* * *

५. अतिदेश का समीक्षात्मक अध्ययन

८१. 'ङित्' विभक्तियों में नदीवद्भाव (१)

कातन्त्र **ह्रस्वश्च ङवति (२/२/५)।**

ह्रस्व इकार-उकार तथा दीर्घ ईकार-ऊकार का नदीवद्भाव विकल्प से होता है, यदि 'ङ्' अनुबन्ध वाले प्रत्यय पर में हों तो। जैसे—'श्रियै, भ्रुवै, धेन्वै, धेनवे, बुद्ध्यै, बुद्धये' इत्यादि।

कच्चायन **अमा पतो स्मिंस्मानं वा (२/१/१७)।**

प-संज्ञक स्त्रीवाचक इकारान्त-उकारान्त शब्दों के बाद आने वाले 'स्मिं, ओ, अं' तथा 'स्मा' को 'आ' आदेश होता है। जैसे—'मत्यं, मत्या' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा कातन्त्रकार ने केवल ह्रस्वान्त शब्दों का ही नहीं, किन्तु स्त्रीलिङ्ग तथा अन्य इकार-उकार का भी नदीवद्भाव किया है। नदीसंज्ञक कार्य-विधान के लिए दो सूत्र द्रष्टव्य हैं—(२/२/३, ४)। कच्चायनकार ने अतिदेश न करके सीधे आदेशविधान किया है। इसमें आदि शब्द से आने वाली 'स्मिं' विभक्ति के स्थान में 'अं-ओ' आदेश किए गये हैं (आदितो ओ च २/१/१८)।। ८१।

८२. पुंवद्भाव (२)

कातन्त्र **पुंवद्भाषितंपुस्कानूङ्पूरण्यादिषु स्त्रियां तुल्याधिकरणे, संज्ञापूरणीकोपधास्तु न, कर्मधारयसंज्ञे तु पुंवद्भावो विधीयते.** (२/५/१८, १९, २०)।

स्त्रीलिङ्ग वाले भाषितपुंस्क शब्दों का बहुव्रीहि तथा कर्मधारय समास में पुंवद्भाव होता है, परन्तु संज्ञाशब्द, पूरणप्रत्ययान्त शब्द तथा ककार उपधा वाले शब्दों का पुंवद्भाव नहीं होता है। जैसे—'शोभनभार्या, कठभार्या, गुप्ताभार्या, पञ्चमीयते, दत्तभार्या' इत्यादि।

कच्चायन **इत्थियं भासितपुमित्थी पुमाव चे, कम्मधारयसञ्ञे च** (२/७/१६, १७)।

बहुव्रीहि समास तथा कर्मधारय समास में पूर्वपदस्थ स्त्रीवाचक शब्द पुंल्लिङ्ग की तरह हो जाते हैं। जैसे—'दीघजङ्घो, कल्याणभरियो, ब्राह्मणदारिका' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र व्याकरण में पुंवद्भावनिषेधक सूत्र को छोड़कर अन्य समस्त विधि-अर्थ आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। ८२।

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

६. अधिकार का समीक्षात्मक अध्ययन

८३. कालाधिकार (१)

कातन्त्र काले (३/१/१०)।

यह अधिकार-सूत्र है, अतः परवर्ती सूत्रों में विशेषणवाची 'सम्प्रति-भविष्यति-अतीते' शब्दों का इसके साथ अन्वय होता है। जैसे—'बलिरिन्द्रो भविष्यति, ग्रामं गतो गमिष्यति चायं देवदत्तः' इत्यादि।

कच्चायन काले (३/१/८)।

यहाँ से काल का अधिकार प्रारम्भ हो रहा है। जैसे—'विहरति जेतवने' इत्यादि।

समीक्षा उभयत्र पूर्णतया समानता ही है। यद्यपि दार्शनिक दृष्टि से काल नित्य, एक तथा व्यापक माना गया है, तथापि व्यावहारिक दृष्टि से इसके तीन से लेकर ग्यारह तक भेद स्वीकार किए जाते हैं।। ८३।

८४. द्विर्वचनाधिकार (२)

कातन्त्र **द्विर्वचनमनभ्यासस्यैकस्वरस्याद्यस्य, स्वरादेर्द्वितीयस्य** (३/३/१, २)।

धातुसम्बन्धी अनभ्यास, एकस्वरविशिष्ट आदि अवयव तथा स्वरादि धातु में एक स्वर वाले द्वितीय अवयव का द्विर्वचन होता है। जैसे—'पपाच, जुहोति, अटाट्यते' इत्यादि।

कच्चायन **क्वचादिवण्णानमेकस्सरानं द्वे भावो** (३/३/१)।

आदिभूत एक स्वर वाले वर्णों का कहीं-कहीं द्वित्व होता है। जैसे—'तितिक्खति' इत्यादि।

समीक्षा अपनी-अपनी भाषा की प्रकृति के कारण जो शब्दभेद होता है, उसी के अनुसार कातन्त्रकार ने तीन प्रकार की धातुओं में तथा कच्चायनकार ने एक प्रकार की धातु में द्विर्वचन का विधान किया है।। ८४।

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

७. सन्धियों का समीक्षात्मक अध्ययन

८५. अनुस्वार सन्धि (१)

कातन्त्र मोऽनुस्वारं व्यञ्जने (१/४/१५)।

पदान्तवर्ती मकार के स्थान में अनुस्वारादेश होता है, यदि व्यञ्जन वर्ण परवर्ती हो तो। जैसे—'त्वं यासि, त्वं रमसे' इत्यादि।

कच्चायन अं ब्यञ्जने निग्गहीतं (१/४/१)।

व्यञ्जन वर्ण की परता में निग्गहीत के स्थान में 'अं' आदेश होता है। जैसे—'एवं वुत्ते' इत्यादि।

समीक्षा संस्कृत व्याकरण में यतः 'म्' वर्ण को हल् के रूप में लिखा जाता है। अतः इसके स्थान में अनुस्वारादेश करना आवश्यक है। लेकिन पालि में 'म' को पदान्त में हल् नहीं लिखा जाता, किन्तु अनुस्वारान्त लिखा जाता है और पालि में अनुस्वार की निग्गहीत संज्ञा की गई है। उस निग्गहीत के स्थान में 'अं' विधान किया गया है, जिसकी वस्तुतः कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती।। ८५।

८६. गुणसन्धि (एकारादेश-२)

कातन्त्र अवर्ण इवर्णे ए (१/२/२)।

इवर्ण के परवर्ती होने पर पूर्ववर्ती अवर्ण के स्थान में 'ए' आदेश होता है। जैसे—'तवेहा, सेयम्, देवेन्द्रः' इत्यादि।

कच्चायन क्वचासवण्णं लुत्ते (१/२/३)।

पूर्व स्वर का लोप हो जाने पर बाद में आनेवाला स्वर कहीं-कहीं असवर्णता को प्राप्त होता है। जैसे—'बन्धुस्सेव' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ इन दोनों की प्रक्रिया में अन्तर स्पष्ट प्रतीत होता है, क्योंकि कातन्त्रकार अवर्ण के ही स्थान में 'ए' आदेश का विधान करते हैं, जबकि कच्चायन व्याकरण में पूर्ववर्ती अवर्ण का लोप करके रूपसिद्धि की जाती है।। ८६।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

८७. गुणसन्धि (ओकारादेश-३)

कातन्त्र उवर्णे ओ (१/२/३)।

उवर्ण के परवर्ती होने पर अवर्ण के स्थान में 'ओ' आदेश होता है। जैसे—'गङ्गोदकम्, सहोदरः' इत्यादि।

कच्चायन क्वचासवण्णं लुत्ते (१/२/३)।

इसके अनुसार पूर्व स्वर का लोप हो जाने पर बाद में आने वाला स्वर कहीं-कहीं असवर्णता को प्राप्त होता है। जैसे—'नोपेति' इत्यादि।

समीक्षा दोनों की प्रक्रिया में अन्तर स्पष्ट प्रतीत होता है। कातन्त्रकार अवर्ण को ही ओकारादेश करते हैं, जबकि कच्चायन व्याकरण में पूर्ववर्ती अवर्ण का लोप किया जाता है।। ८७।

८८. द्वित्व सन्धि (४)

कातन्त्र ङणना ह्रस्वोपधाः स्वरे द्विः (१/४/७)।

पदान्तवर्ती 'ङ्, ण्, न्' वर्णों का द्वित्व होता है, यदि उनसे पूर्ववर्ती वर्ण ह्रस्व स्वर हों तथा परवर्ती वर्ण स्वर हो तो। जैसे—'क्रुङ्ङत्र, सुगण्णत्र, पचन्नत्र' इत्यादि।

कच्चायन वग्गे घोसाघोसानं ततियपठमा (१/३/७)।

इसके अनुसार स्वर के बाद आने वाले घोष तथा अघोषसंज्ञक व्यञ्जन वर्णों का कहीं-कहीं द्वित्व होता है। जैसे—'चत्तारिट्ठानानि' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र के अनुसार केवल तीन वर्णों का ही द्वित्व किया गया है, जबकि पालि भाषा के अनुसार घोष तथा अघोषसंज्ञक सभी व्यञ्जन वर्णों का द्वित्व उचित माना गया है। यह भेद संस्कृत-पालि भाषाओं में प्रयुक्त शब्दों के भेद से ही कहा जा सकता है।। ८८।

८९. परसवर्ण सन्धि (५)

कातन्त्र वर्गे तद्वर्गपञ्चमं वा; वर्गे वर्गान्तः (१/४/१६; २/४/४५)।

पदान्त अनुस्वार को उसी वर्ग का पञ्चम वर्ण आदेश होता है, जो वर्ग परवर्ती हो तथा पद के मध्य में वर्तमान अनुस्वार के स्थान में भी वर्गीय अन्तिम वर्ण आदेश होता है। जैसे—'त्वङ्करोषि, नन्दिता' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **वग्गन्तं वा वग्गे (१/४/२)।**

वर्गीय व्यञ्जन वर्ण की परता में निग्गहीत (अनुस्वार) के स्थान में उसी वर्ग का विकल्प से अन्तिम अक्षर हो जाता है। जैसे—'तन्निब्बुतं, धम्मञ्चरे, सन्तन्तस्स' इत्यादि।

समीक्षा यद्यपि दोनों व्याकरणों में परसवर्ण का उल्लेख नहीं है, लेकिन पाणिनीय व्याकरण के व्यवहारानुसार इस प्रक्रिया को परसवर्ण कहना उचित प्रतीत होता है।। ८९।

९० (१) प्रकृतिभाव सन्धि (६)

कातन्त्र **ओदन्ता अ इ उ आ निपाताः स्वरे प्रकृत्या, द्विवचनमनौ, बहुवचनममी, अनुपदिष्टाश्च; न व्यञ्जने स्वराः सन्धेयाः (१/३/१-४; १/२/१८)।**

इसमें प्रकृतिभाव का विधान चार सूत्रों द्वारा सन्धिप्रकरण के तृतीय पाद में किया गया है। इन चारों सूत्रों द्वारा स्वर के ही परवर्ती होने पर प्रकृतिभाव होता है। व्यञ्जन वर्ण के परवर्ती होने पर जो सन्धि का निषेध किया गया है, उसकी गणना प्रकृतिभाव में नहीं की गई है। जैसे—'अहो आश्चर्यम्, माले इमे, अमी अश्वाः, आगच्छ भो देवदत्त[२] अत्र' इत्यादि।

कच्चायन **सरा पकति व्यञ्जने, सरे क्वचि (१/३/१-२)।**

यहाँ एक सूत्र द्वारा व्यञ्जन की परता में तथा एक सूत्र द्वारा स्वर की परता में स्वर का प्रकृतिरूप होता है। जैसे—'तिण्णो पारगतो, को इमं, मनोपुब्बङ्गमा धम्मा' इत्यादि।

समीक्षा संस्कृतभाषा में प्रकृतिभाव का क्षेत्र विस्तृत है, जबकि पालिभाषा में अपेक्षाकृत इसका क्षेत्र अल्प प्रतीत होता है। वस्तुतः प्रकृतिभाव का सम्बन्ध स्वर वर्णों से है, व्यञ्जन वर्णों से नहीं।। ९०/१।

९० (२) **कातन्त्र** **प्रकृतिश्च स्वरान्तस्य (२/५/३)।**

विभक्तिलोप हो जाने पर युक्तार्थ-स्थित स्वरान्त लिङ्ग को प्रकृतिभाव होता है। जैसे—'सखिप्रियः' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **पकति चस्स सरन्तस्स** (२/७/३)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'चक्खुसोतं, मुखनासिकं' इत्यादि।

समीक्षा विभक्तिलोप हो जाने से विभक्तिनिमित्तक कार्य तो नहीं होते हैं, किन्तु उनसे भिन्न सन्धिकार्य तो हो ही जाते हैं। जैसे—'देवानाम् इन्द्रः देवेन्द्रः' इत्यादि। शब्दावली और अर्थ की दृष्टि से उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। ९०/२।

९१. स्वरसन्धि (यकारादेश-७)

कातन्त्र **इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः** (१/२/८)।

इवर्ण के स्थान में यकारादेश होता है, जबकि परवर्ती स्वर सवर्णसंज्ञक न हो। यहाँ यह विशेष ज्ञातव्य है कि परवर्ती वर्ण का लोप नहीं होता है। जैसे—'दध्यत्र, नद्येषा' इत्यादि।

कच्चायन **इवण्णो यन्न वा, यमेदन्तस्सादेसो** (१/२/१०, ६)।

इसके अनुसार इवर्ण के स्थान में विकल्प से यकारादेश होता है। इसके अतिरिक्त अन्त में विद्यमान एकार को भी यकार आदेश किया गया है। जैसे—'वुत्यस्स, त्याहं' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ भी दोनों की प्रक्रिया में पर्याप्त अन्तर देखा जाता है, क्योंकि कातन्त्र के अनुसार इवर्ण के ही स्थान में यकार आदेश होता है, जबकि कच्चायन में इनके अतिरिक्त एकार के भी स्थान में यकार आदेश किया गया है। यह ज्ञातव्य है कि कातन्त्र के अनुसार 'ए' के स्थान में 'अय्' आदेश किया जाता है—(द्र०-१/२/१२)।। ९१।

९२. स्वरसन्धि (वकारादेश-८)

कातन्त्र **वमुवर्णः** (१/२/९)।

असवर्ण स्वर के परे रहते उवर्ण के स्थान में वकारादेश होता है। जैसे—'मध्वत्र' इत्यादि।

कच्चायन **वमोदुदन्तानं** (१/२/७)।

इसके अनुसार उवर्ण के स्थान में विकल्प से वकार आदेश होता है। जैसे—'ख्वस्स, चख्वापाथं' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा यहाँ दोनों की प्रक्रिया में पर्याप्त अन्तर है, क्योंकि कातन्त्र के अनुसार उवर्ण के ही स्थान में वकारादेश किया गया है, जबकि कच्चायन में इसके अतिरिक्त ओकार को भी वकारादेश होता है। कातन्त्र में तो ओकार को 'अव्' आदेश किया जाता है— (१/२/१४)।। ९२।

* * *

८. प्रत्ययों का समीक्षात्मक अध्ययन

९३. 'अ' प्रत्यय (समासान्त-१)

कातन्त्र **समासान्तगतानां वा राजादीनामदन्तता** (२/६/४१)।

समास के अन्त में विद्यमान 'राजन्' आदि शब्द निपातन से अकारान्त हो जाते हैं। अर्थात् उनके बाद 'अ' प्रत्यय होता है। जैसे—'उपराजम्, अध्यात्मम्' इत्यादि।

कच्चायन **क्वचि समासन्तगतानमकारन्तो** (२/७/२२)।

समास के अन्त में आने वाले नामों के अन्तिम स्वर का कहीं-कहीं अकार हो जाता है। जैसे—'देवराजो, देवसखो' इत्यादि।

समीक्षा सामान्य प्रत्ययविधान की दृष्टि से उभयत्र समानता है। कातन्त्रवृत्तिकार ने राजादिगण के अन्तर्गत ६५ सूत्र बनाये हैं, जिनमें पृथक्-पृथक् शब्दों का उल्लेख मिलता है। कच्चायनकार ने इससे सम्बद्ध तीन अन्य सूत्रों की भी रचना की है—(२/७/२३,२५,२६)।। ९३।

९४/(१) 'अण्' प्रत्यय (तद्धित-२)

कातन्त्र **वाऽणपत्ये;**

रागान्नक्षत्रयोगात् समूहात् साऽस्य देवता ।
तद् वेत्त्यधीते वा तस्येदमेवमादेरणिष्यते ।। (२/६/१; ७)।

अपत्य अर्थ की विवक्षा में षष्ठ्यन्त नाम-पद से, रक्त अर्थ में रागयुक्त शब्दों से, युक्त अर्थ में नक्षत्रवाची शब्दों से तथा 'समूह, साऽस्य देवता, तद् वेत्ति, अधीते वा, तस्येदम्' आदि अनेक अर्थों में 'अण्' प्रत्यय होता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। जैसे— 'पाण्डवः, हारिद्रम्, पौषम् अहः, वायसम्, शैवः, वैयाकरणः, मार्गं मांसम्' इत्यादि।

कच्चायन **वाणपच्चे, णवोपग्वादीहि, ण रागा तेन रत्तं तस्सेदमञ्ञत्थेसु च, जातादीनमिमिया च, समूहत्थे कण्णा** (२/८/१, ५, ९, १०, ११)।

अपत्य अर्थ में 'ण' प्रत्यय, उपगु आदि शब्दों से 'णव' प्रत्यय, रागार्थ लिङ्ग से रक्त अर्थ में—तस्येदम् आदि अर्थों में 'ण' प्रत्यय, जाति इत्यादि अर्थों में 'इम-इय' प्रत्यय तथा समूहार्थ में कण-ण प्रत्यय होते हैं। जैसे—'वासेट्ठं, ओपगवो, कासावं, माहिसं, मज्झिमो, अस्सजातियो, मायूरको, मायूरो' इत्यादि।

समीक्षा अर्थों में उभयत्र समानता होने पर भी कातन्त्रकार ने एक ही 'अण्' प्रत्यय किया है, जबकि कच्चायनकार ने 'ण, णव, इम, इय, कण' ये पाँच प्रत्यय किये हैं। अतः अर्थसाम्य होने पर भी प्रत्ययगत तथा शब्दरूपगत भेद स्पष्ट है।। ९४/१।

९४/(२) 'अण्' प्रत्यय (कृत्)

कातन्त्र **कर्मण्यण्** (४/३/१)।

कर्म कारक के उपपद में रहने पर धातु से 'अण्' प्रत्यय होता है। जैसे—'कुम्भकारः, सूत्रकारः' इत्यादि।

कच्चायन **धातुया कम्मादिम्हि णो** (४/१/१)।

कर्मादि कारकों के उपपद में रहने पर धातु से 'ण' प्रत्यय होता है। जैसे—'रथकारो, धम्मकामो' इत्यादि।

समीक्षा प्रत्ययों की आनुपूर्वी को छोड़कर शब्दरूप आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है।। ९४/२।

९४/(३) 'अण्' प्रत्यय (कृत्)

कातन्त्र **कर्मणि चाण्** (४/४/७१)।

क्रियार्थक क्रिया के तथा कर्म के उपपद में रहने पर भविष्यत्कालार्थक धातु से 'अण्' प्रत्यय होता है। जैसे—'साम्गायो व्रजति' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **कम्मणि णो** (४/६/३१)।

भविष्यत् काल में कर्म वाले उपपद के रहने पर धातु से 'ण' प्रत्यय होता है। ज़ैसे—'नगरकारो वजति, सिन्धुपायो वजति' इत्यादि।

समीक्षा कर्म के उपपद में रहने पर कातन्त्र में अण्-प्रत्ययविधायक दो सूत्र देखे जाते हैं। प्रकृत सूत्र के अतिरिक्त दूसरा सूत्र है—''कर्मण्यण्'' (४/३/१)। उपपद तथा प्रत्यय की समानता होने पर भी इन दोनों में अन्तर यह है कि ''कर्मण्यण्'' सूत्र से वर्तमान अर्थ में तथा ''कर्मणि चाण्'' सूत्र से भविष्यत् अर्थ में 'अण्' प्रत्यय होता है। कच्चायनकार की मान्यता इससे कुछ भिन्न है। वहाँ पर भी दो सूत्र हैं। जिनमें से 'धातुया कम्मादिम्हि णो' (४/१/१) सूत्र द्वारा तीनों कालों में तथा ''कम्मणि णो'' द्वारा केवल भविष्यत् अर्थ में ही प्रत्यय होता है। सम्भवतः यह भेद अपनी-अपनी भाषा में शब्दव्यवहार के कारण कहा जा सकता है। अतः यहाँ किसी में उत्कर्षापकर्ष कहना उचित प्रतीत नहीं होता।। ९४/३।

९५. 'अत्' प्रत्यय (३)

कातन्त्र **अत् क्व च** (२/६/३२)।

सप्तम्यन्त किम्-शब्द से 'अत्' प्रत्यय तथा किम् को 'क्व' आदेश होता है। जैसे—'क्व'।

कच्चायन **किस्मा वो च** (२/५/५)।

सप्तमी के अर्थ में किं-शब्द से 'व' प्रत्यय होता है। जैसे—'क्व'।

समीक्षा यहाँ विधिभेद के अतिरिक्त शब्दरूप आदि की दृष्टि से उभयत्र प्रायः सभी प्रकार की समानता देखी जाती है।। ९५।

९६. 'अथु' प्रत्यय (४)

कातन्त्र **ट्वनुबन्धादथुः** (४/५/६७)।

'टु' अनुबन्ध वाली धातुओं से भाव अर्थ में 'अथु' प्रत्यय होता है। जैसे—'वेपथुः, वमथुः' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **वेपुसिदववमुकुदाभूह्वादीहि थुत्तिमणिमा निब्बत्ते (४/६/२१)।**

'वेपु' आदि धातुओं से निर्वृत्त अर्थ में 'थु' आदि प्रत्यय होते हैं। जैसे—'वेपथु, सयथु' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने भाव अर्थ में और कच्चायनकार ने निर्वृत्त अर्थ में 'थु' प्रत्यय किया है। यह भेद अपनी-अपनी भाषा के भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रयोग के कारण कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त तो उभयत्र समानता ही प्रतीत होती है।। ९६।

९७. 'अधुना' प्रत्यय (५)

कातन्त्र **इदमो र्ह्यधुनादानीम् (२/६/३५)।**

'काल' अर्थ की विवक्षा में सप्तम्यन्त 'इदम्' शब्द से 'अधुना' प्रत्यय होता है। जैसे—'अधुना'।

कच्चायन **इमस्मा रहिधुनादानि च (२/५/१३)।**

कालवाची सप्तमी के अर्थ में 'इम' शब्द के बाद 'धुना' प्रत्यय होता है। जैसे—'अधुना' इत्यादि।

समीक्षा शब्दरूप आदि की दृष्टि से पर्याप्त अंशों में उभयत्र समानता देखी जाती है।। ९७।

९८. 'अनीय' प्रत्यय (६)

कातन्त्र **तव्यानीयौ (४/२/९)।**

धातु से कृत्संज्ञक 'अनीय' प्रत्यय होता है। जैसे—'करणीयम्' इत्यादि।

कच्चायन **भावकम्मेसु तब्बानीया (४/१/१७)।**

भाव-कर्म अर्थ में सभी धातुओं से 'अनीय' प्रत्यय होता है। जैसे—'करणीयं, रमणीयं' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण होने वाले रूपभेद को छोड़कर शेष प्रायः समानता ही है।। ९८।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

९९. 'अम' प्रत्यय (७)

कातन्त्र **चरेरमः, प्रथेरमः** (कात० उ० ५/२७, ५९)।

'चर-प्रथ' धातुओं से 'अम' प्रत्यय होता है। जैसे—'चरमः' तथा 'प्रथमः'।

कच्चायन **पुथस्स पुथु पथामो वा** (४/६/४३)।

'पुथ' प्रातिपदिक से 'अम' प्रत्यय होता है। जैसे—'पठमो'।

समीक्षा 'अम' प्रत्यय तथा 'प्रथमः' उदाहरण की दृष्टि से यहाँ उभयत्र समानता है।। ९९।

१००. 'अल' प्रत्यय (८)

कातन्त्र **शकिशमिवहिभ्योऽलः, वृषलादयः; मडिकुडिमङ्गिभ्योऽलः** (कात० उ० १/४०-४१; ६/१९)।

'शक' आदि धातुओं से 'अल' प्रत्यय होता है। जैसे—'शकलम्, वृषलः, मण्डलम्, मङ्गलम्' इत्यादि।

कच्चायन **पटादीह्यलं** (४/६/४२)।

'पट' इत्यादि धातुओं से 'अल' प्रत्यय होता है। जैसे—'पटलं, मङ्गलं, बहलं, मेखलं, कम्बलं' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने 'मण्डल, मङ्गल, वृषल' आदि शब्दों को 'अल' प्रत्यय द्वारा तथा 'पटल' आदि चार शब्दों को 'कल' प्रत्यय द्वारा सिद्ध किया है, जबकि कच्चायनकार ने इन दोनों के लिए एक ही 'अल' प्रत्यय का विधान किया है। वस्तुतः यह भेद अपने-अपने व्याकरण की प्रक्रिया के अनुसार है। अतः सामान्यतया उभयत्र समानता ही कही जाएगी।। १००।

१०१. 'आ' प्रत्यय (९)

कातन्त्र **स्त्रियामादा** (२/४/४९)।

अकारान्त शब्द से स्त्रीलिङ्ग में 'आ' प्रत्यय होता है। जैसे—'अजा, चटका, गङ्गा, मेधा' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **इत्थियमतो आप्पच्चयो** (२/४/२७)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'सब्बा, सा' इत्यादि।

समीक्षा वस्तुगत धर्मों को स्पष्ट करने के लिए तथा वस्तुवाचक शब्दों के संस्कार को बताने के उद्देश्य से एक ही शब्द का प्रयोग पुंल्लिङ्ग-स्त्रीलिङ्ग में होता है। इसका निर्धारण लोकव्यवहार के अनुसार किया जाता है। 'आ' प्रत्यय के विधान में उभयत्र समानता देखी जाती है।। १०१।

१०२. 'आनश्' प्रत्यय (वर्तमान अर्थ में-१०)

कातन्त्र **वर्तमाने शन्तृङानशावप्रथमैकाधिकरणामन्त्रितयोः, लक्षणहेत्वोः क्रियायाः** (४/४/२-३)।

वर्तमान आदि अर्थों में धातु से 'आनश्' प्रत्यय होता है। जैसे—'पचमानं छात्रं पश्य, शयाना भुञ्जते यवनाः' इत्यादि।

कच्चायन **वत्तमाने मानन्ता** (४/२/१६)।

वर्तमानकाल में सभी धातुओं से 'मान' प्रत्यय होता है। जैसे—'रोदमानो, सरमानो' इत्यादि।

समीक्षा संक्षेप-विस्तार तथा आंशिक विधिभेद को छोड़कर सामान्यतया उभयत्र समानता ही है।। १०२।

१०३. 'आनश्' प्रत्यय (भविष्यत् अर्थ में-११)

कातन्त्र **शन्त्रानौ स्यसंहितौ शेषे च** (४/४/७२)।

क्रियार्थक क्रिया तथा कर्म के उपपद में रहने पर भविष्यदर्थक धातु से 'स्य'-सहित 'आनश्' प्रत्यय होता है। जैसे—'करिष्यमाणो व्रजति' इत्यादि।

कच्चायन **सेसे स्सन्तुमानाना** (४/६/३२)।

भविष्यत्काल में कर्म के उपपद में रहने पर 'मान' तथा 'आन' प्रत्यय होते हैं। जैसे—'कम्मं कुरुमानो, कम्मं करानो वजति' इत्यादि।

समीक्षा शन्तृङ् और आनश् प्रत्ययों का विधान कातन्त्र में दो अर्थों में उपलब्ध होता है। वर्तमानकाल में इन प्रत्ययों के विधानार्थ सूत्र है—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

''वर्तमाने शन्तृङानशावप्रथमैकाधिकरणामन्त्रितयोः'' (४/४/२)। इससे वर्तमानकाल में 'पचन्तं पचमानं छात्रं पश्य' इत्यादि शब्दरूप सिद्ध होते हैं, जबकि भविष्यत् काल में इन प्रत्ययों के विधानार्थ प्रकृत सूत्र किया गया है। कच्चायनकार ने भी एतदर्थ दो सूत्र बनाये हैं, जिनमें से— 'वत्तमाने मानन्ता' (४/२/१६) सूत्र द्वारा वर्तमानकाल में मान तथा अन्त प्रत्यय किये जाने पर 'रोदमानो, गच्छन्तो' आदि प्रयोग बनते हैं तथा भविष्य अर्थ में प्रकृत सूत्र द्वारा तीन प्रत्ययों का विधान किया गया है। इस प्रकार भाषाभेद के अतिरिक्त अन्य प्रकार की उभयत्र समानता है।। १०३।

१०४. 'आयनण्' प्रत्यय (१२)

कातन्त्र **कुञ्जादेरायनण् स्मृतः** (२/६/३)।

गोत्रापत्य अर्थ में कुञ्जादिगणपठित शब्दों से 'आयनण्' प्रत्यय होता है। जैसे—'चारायणः, नाडायनः' इत्यादि।

कच्चायन **णायनणान वच्छादितो** (२/८/२)।

अपत्य अर्थ में वच्छादिगणपठित शब्दों से 'णायन' तथा 'णान' प्रत्यय विकल्प से होते हैं। जैसे—'साकटायणो, साकटाणो' इत्यादि।

समीक्षा उभयत्र प्रत्ययगत भेद भाषाभेद के कारण है। कुञ्जादि और वच्छादि गण में कोई भेद नहीं है, क्योंकि सभी शब्द दोनों आचार्यों ने सम्बद्ध गणों में पढ़े हैं।। १०४।

१०५. 'आयि' प्रत्यय (१३)

कातन्त्र **कर्तुरायिः सलोपश्च** (३/२/८)।

उपमानवाची स्याद्यन्त पद से आचार अर्थ में 'आयि' प्रत्यय होता है। जैसे—'श्येनायते' इत्यादि।

कच्चायन **आय नामतो कत्तुपमानादाचारे** (३/२/४)।

आचार अर्थ में कर्ता के उपमानभूत नाम से 'आय' प्रत्यय होता है। जैसे—'समुद्दायति' इत्यादि।

समीक्षा प्रक्रियागत भेद के कारण कातन्त्रकार ने इकारान्त 'आयि' प्रत्यय तथा कच्चायनकार ने अकारान्त 'आय' प्रत्यय किया है। परन्तु

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

शब्दरूपों में आय् ही देखा जाता है। अतः सामान्यतया उभयत्र समानता कही जा सकती है।। १०५।

१०६. 'आलु' प्रत्यय (१४)

कातन्त्र **दयिपतिगृहिस्पृहिश्रद्धातन्द्रानिद्राभ्य आलुः** (४/४/३८)।

'दय' इत्यादि ७ धातुओं से 'आलु' प्रत्यय होता है। जैसे—'दयालुः, श्रद्धालुः, निद्रालुः' इत्यादि।

कच्चायन **आलु तब्बहुले** (२/८/१६)।

तद्बहुल (स्वभाव या शील) अर्थ में 'आलु' प्रत्यय होता है। जैसे— 'दयालु, सीतालु' इत्यादि।

समीक्षा आलु प्रत्यय में उभयत्र समानता होने पर भी प्रकृति में भेद है, क्योंकि कातन्त्र में 'दय' आदि धातुओं से 'आलु' प्रत्यय किया गया है, जबकि कच्चायन में तद्धित प्रकरण के अन्तर्गत इसे पढ़े जाने के कारण 'आलु' प्रत्यय लिङ्गसंज्ञक शब्दों से ही होगा। इस प्रकार 'दयालु' उदाहरण दोनों में देखे जाने पर भी कातन्त्र में उसकी प्रकृति 'दय' धातु होगी, परन्तु कच्चायन में दयाशब्द से 'दयालु' शब्द सिद्ध होगा।। १०६।

१०७. 'इकण्' प्रत्यय (१५)

कातन्त्र **तेन दीव्यति संसृष्टं तरतीकण् चरत्यपि ।**
पण्याच्छिल्पान्नियोगाच्च क्रीतादेरायुधादपि ।। (२/६/८)।

'दीव्यति' आदि अर्थों में 'इकण्' प्रत्यय होता है। जैसे—'आक्षिकः, दाधिकम्' इत्यादि।

कच्चायन **येन वा संसट्ठं तरति चरति वहति णिको, तमधीते तेन कतादि-सन्निधाननियोगसिप्पभण्डजीविकत्थेसु च** (२/८/७, ८)।

'संसृष्ट' इत्यादि अर्थों में 'णिक' प्रत्यय होता है। जैसे—'तेलिकं, वेनयिको' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने ९ अर्थों का साक्षात् निर्देश करके 'खनति, वर्तते' इत्यादि अर्थों के संग्रहार्थ 'आदि' शब्द का पाठ किया है, जबकि कच्चायनकार ने दो सूत्रों में ग्यारह अर्थ साक्षात् पढ़े हैं तथा 'हत, बद्ध'

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

आदि अर्थों का संग्रह 'आदि' शब्द से किया है। इस प्रकार कच्चायन में सूत्रसंख्याकृत गौरव को छोड़कर अन्य समानता ही है। प्रत्यय में 'ण्' अनुबन्ध की योजना प्रारम्भ या अन्त में होने पर भी शब्दरूपों में कोई अन्तर नहीं आता।। १०७।

१०८. 'इत्रन्' प्रत्यय (१६)

कातन्त्र **अर्तिलूधूसूखनिसहिचरिभ्य इत्रन्, पुवः संज्ञायाम्, ऋषिदेवतयोः कर्तरि** (४/४/६३, ६४, ६५)।

'ऋ' आदि धातुओं से 'करण' अर्थ में, 'पूञ्' धातु से संज्ञा के गम्यमान होने पर तथा ऋषि-देवता अर्थों में भी 'इत्रन्' प्रत्यय होता है। जैसे—'चरित्रम्, पवित्रम्' तथा 'पवित्रः ऋषिः' इत्यादि।

कच्चायन **वदादीहि णित्तो गणे** (४/६/३४)।

'वद' आदि धातुओं से 'गण' अर्थ में 'णित्त' प्रत्यय होता है। जैसे—'चारित्तं, वादित्तं, वारित्तं' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रीय 'इत्रन्' प्रत्यय में 'इत्र' का प्रयोग होता है, 'न्' अनुबन्ध है, जबकि कच्चायन में 'इत्त' का प्रयोग शब्दों में देखा जाता है और 'ण' अनुबन्ध है। इस प्रकार यहाँ भाषाभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की प्रायः समानता ही कही जाएगी।। १०८।

१०९. 'इन' प्रत्यय (१७)

कातन्त्र **श्याहृञवदृदक्षिभ्य इनः, वृजिनाजिनेरिणविपिनतुहिनमहिनानि** (कात० उ० २/२१-२२)।

'श्यैङ् गतौ' आदि धातुओं से 'इन' प्रत्यय होता है। जैसे—'द्रविणं धनम्, अजिनम्, हरिणः, दक्षिणा' इत्यादि।

कच्चायन **जितो इन सब्बत्थ, सुपतो च** (४/२/९-१०)।

'जि' तथा 'सुप' धातुओं से 'इन' प्रत्यय होता है। जैसे—'जिनो, सुपिनो'।

समीक्षा सूत्रगत धातुपाठ में जो संक्षेप-विस्तार देखा जाता है, वह अपनी-अपनी भाषा में प्रयुक्त शब्दों के अनुसार हो सकता है। अतः सामान्यतया उभयत्र समानता है।। १०९।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

११०. 'इन्' प्रत्यय (तद्धित-१८)

कातन्त्र **तदस्यास्तीति मन्त्वन्त्वीन्** (२/६/१५)।

'अस्यास्ति' इस अर्थ में प्रथमान्त से 'इन्' प्रत्यय होता है। जैसे—'दण्डी, हस्ती, करी' इत्यादि।

कच्चायन **दण्डादितो इकई** (२/८/२३)।

'तदस्स अत्थि' अर्थ में 'ई' प्रत्यय होता है। जैसे—'माली' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने 'इन्' प्रत्यय तथा कच्चायनकार ने 'ई' प्रत्यय किया है, परन्तु इससे रूपभेद नहीं हो पाता। इस प्रकार अपने-अपने व्याकरण की प्रक्रिया में भेद होने पर भी अर्थ आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है।। ११०।

१११. 'इन्' प्रत्यय (कृत्-१९)

कातन्त्र **इन् कारितं धात्वर्थे, धातोश्च हेतौ, चुरादेश्च** (३/२/९, १०, ११)।

क्रिया अर्थ में नाम-पद से, हेतुरूप कर्ता के व्यापार को कहने वाली धातु से तथा स्वार्थ में 'चुर्' इत्यादि धातुओं से 'इन्' प्रत्यय होता है और उसकी 'कारित' संज्ञा भी होती है। जैसे—'कलयति, कारयति, चोरयति' इत्यादि।

कच्चायन **धातूहि णेणयणापेणापया कारितानि हेत्वत्थे, धातुरूपे नामस्मा णयो च, चुरादितो णेणया** (३/२/७, ८, २१)।

हेत्वर्थ में सभी धातुओं से, धातुस्वभाव वाले नामशब्दों से तथा चुरादिगणपठित धातुओं से 'णय' प्रत्यय होता है और इसकी 'कारित' संज्ञा भी होती है। जैसे—'पाचयति, उपवीणयति, चोरयति' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रीय प्रक्रिया के अनुसार इकार को गुण तथा अयादेश करना पड़ता है, जबकि कच्चायनकार ने 'ण' अनुबन्ध के साथ 'अय' प्रत्यय (णय) किया है, जिससे कार्य-संख्या की दृष्टि से लाघव कहा जा सकता है। पालिभाषा के अनुसार इसी अर्थ में दो-तीन अन्य प्रत्यय भी करने पड़ते हैं।। १११।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

११२. 'इष्ठ' प्रत्यय (२०)

कातन्त्र आख्याताच्च तमादयः—गुणादिष्ठेयन्सू वा (२/६/४०-२)।

नामसंज्ञक (तथा आख्यातसंज्ञक) गुणवाची शब्दों से वैकल्पिक 'इष्ठ' प्रत्यय होता है। जैसे—'गरिष्ठः' इत्यादि।

कच्चायन विसेसे तरतमिस्सिकियिट्ठा (२/८/२०)।

विशेष के अर्थ में 'इट्ठ' प्रत्यय होता है। जैसे—'पापिट्ठो' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण शब्दभेद होने पर भी अर्थ आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। ११२।

११३. 'ई' प्रत्यय (२१)

कातन्त्र नदाद्यन्चिवाह्व्यन्स्यन्तृसखिनान्तेभ्य ई (२/४/५०)।

नदादिगणपठित 'विद्वन्स्-सखि' आदि शब्दों से स्त्रीलिङ्ग में 'ई' प्रत्यय होता है। जैसे—'नदी, विदुषी, सखी' इत्यादि।

कच्चायन नदादितो वा ई, णवणिकणेय्यणन्तुहि, पतिभिक्खुराजीकारन्तेहि इनी (२/४/२८, २९, ३०)।

नदादिगणपठित तथा उससे भिन्न भी अकारान्त शब्दों से 'ई' प्रत्यय एवं 'पति' आदि शब्दों से स्त्रीलिङ्ग में 'इनी' प्रत्यय होता है। जैसे—'नदी, गुणवती, मेधाविनी' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने जिन शब्दों का संग्रह एक सूत्र में किया है, उन्हें कच्चायनकार ने तीन सूत्रों में विभक्त करके पढ़ा है। कच्चायनकार का 'इनी' प्रत्यय कातन्त्र के 'ई' प्रत्यय से ही समानता रखता है। अतः उभयत्र एकरूपता ही कही जायगी।। ११३।

११४. 'ईय' प्रत्यय (२२)

कातन्त्र ईयस्तु हिते (२/६/१०)।

'हित' अर्थ में 'ईय' प्रत्यय होता है। जैसे—'वत्सीयो गोधुक्' इत्यादि।

कच्चायन तदस्सट्ठानमीयो च (२/८/१३)।

'स्थान, हित' आदि अर्थों में 'ईय' प्रत्यय होता है। जैसे—'कमनीयं, उपादानीयं, दस्सनीयं' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा कातन्त्रकार ने सूत्र में साक्षात् 'हित' शब्द का पाठ किया है, जबकि कच्चायनकार ने 'स्थान' अर्थ को माना है, परन्तु रूपसिद्धिकार 'च'-पाठ के बल पर 'हित' आदि अर्थों को भी स्वीकार करते हैं। इस प्रकार प्रत्यय तथा अर्थ दोनों में ही उभयत्र समानता कही जाएगी।। ११४।

११५. 'ईयन्सु' प्रत्यय (२३)

कातन्त्र **आख्याताच्च तमादयः—गुणादिष्ठेयन्सू वा** (२/६/४०-२)।

नामसंज्ञक (आख्यातसंज्ञक से भी) गुणवाची शब्दों से 'ईयन्सु' प्रत्यय होता है। जैसे—'गरीयान्, लघीयान्' इत्यादि।

कच्चायन **विसेसे तरतमिस्सिकियिट्ठा** (२/८/२०)।

विशेष के अर्थ में 'इय' प्रत्यय होता है। जैसे—'पापियो' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण शब्दभेद होने पर भी अर्थ आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। ११५।

११६. 'उ' प्रत्यय (२४)

कातन्त्र **सनन्ताशंसिभिक्षामुः** (४/४/५१)।

'सनन्त, शंस्' तथा 'भिक्ष्' धातुओं से 'उ' प्रत्यय होता है। जैसे—'चिकीर्षुः, जिगमिषुः, आशंसुः, भिक्षुः' इत्यादि।

कच्चायन **भिक्खादितो च** (४/१/१२)।

ताच्छील्य आदि अर्थों में 'रू' प्रत्यय होता है। जैसे—'भिक्खु, विञ्ञू' इत्यादि।

समीक्षा प्रत्ययभेद होने पर भी शब्दरूप आदि में उभयत्र प्रायः समानता ही देखी जाती है।। ११६।

११७. 'उकञ्' प्रत्यय (२५)

कातन्त्र **शृकमगमहनवृषभूस्थालषपतपदामुकञ्** (४/४/३४)।

'शॄ, कम्' इत्यादि १० धातुओं से ताच्छील्यादि अर्थों में 'उकञ्' प्रत्यय होता है। जैसे—'कामुकः, आघातुकः' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **हन्त्यादीनं णुको (४/१/१३)।**

ताच्छील्य आदि अर्थों में 'हन' आदि धातुओं से 'णुक' प्रत्यय होता है। जैसे—'आघातुको, कारुको' इत्यादि।

समीक्षा 'ञ्-ण' अनुबन्धों की योजना को छोड़कर शेष उभयत्र समानता ही है।। ११७।

११८ (१) उणादि प्रत्यय (भूत-वर्तमान अर्थ में-२६)

कातन्त्र **उणादयो भूतेऽपि (४/४/६७)।**

वर्तमान तथा भूतकाल अर्थ में भी उणादि प्रत्यय साधु होते हैं। जैसे—'वायुः, भस्म' इत्यादि।

कच्चायन **काले वत्तमानातीते ण्वादयो (४/६/२७)।**

अतीत तथा वर्तमानकाल अर्थ में 'णु' आदि प्रत्यय होते हैं। जैसे—'वायु, कारु' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार 'वायु' आदि शब्दरूपों को वर्तमान अर्थ में तथा 'भस्म' आदि शब्दों को भूतकाल के अर्थ में साधु मानते हैं, जबकि कच्चायनकार ने 'वायु' आदि उद्धृत सभी शब्दों को दोनों अर्थों में साधु माना है। यह भेद भाषाओं के उन-उन अर्थों में प्रयोग के कारण कहा जा सकता है। प्रत्यय आदि में उभयत्र समानता ही देखी जाती है।। ११८/१।

११८ (२) उणादि प्रत्यय (भविष्यत् अर्थ में)

कातन्त्र **भविष्यति गम्यादयः (४/४/६८)।**

'इन्' आदि प्रत्ययों से सिद्ध होने वाले 'गमी' इत्यादि औणादिक शब्द भविष्यत् काल में साधु होते हैं। जैसे—'ग्रामं गमी, ग्राममागामी' इत्यादि।

कच्चायन **भविस्सति गमादीहि णीघिण (४/६/२८)।**

भविष्यत् काल के अर्थ में 'गमु' आदि धातुओं से 'णी' तथा 'घिण' प्रत्यय होते हैं। जैसे—'गामी, भाजी, पट्ठायी' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने 'इन्-णिन्'-प्रत्ययान्त गम्यादि शब्दों के साधुत्व का उल्लेख किया है, जबकि कच्चायनकार ने 'गमु' आदि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

धातुओं से 'गामी' इत्यादि शब्दों के सिद्ध्यर्थ 'णी-घिणं' प्रत्यय किए हैं। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि कातन्त्रीय व्याकरण-वाङ्मय के अन्तर्गत उणादिसूत्रों की रचना दुर्गसिंह ने की है। इसलिए कातन्त्रसूत्रकार शर्ववर्मा ने प्रत्ययों का विधान न करके शब्दों का उल्लेख किया है। दुर्गसिंह ने 'गमी' आदि शब्दों को 'इनि' आदि प्रत्ययों से सिद्ध किया है—"गमेरिनिः, आङि णिनिः" (कात०उ०सू० ४/४७, ४८)।। ११८/२।

११९. 'उष' प्रत्यय (२७)

कातन्त्र **मानेरुषः** (कात० उ० ६/११)।

'मान' धातु से 'उष' प्रत्यय होता है। जैसे—'मानुषः।

कच्चायन **मनुपूरसुणादीहि उस्सनुसिसा** (४/६/५०)।

'मन' धातु से 'नुस' प्रत्यय होता है। जैसे—'मानुसो'।

समीक्षा कच्चायन व्याकरण में प्रत्ययगत नकारभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की उभयत्र समानता है।। ११९।

१२०. 'उष्य' प्रत्यय (२८)

कातन्त्र **मनेरुष्यः** (कात० उ० ६/१०)।

'मन्' धातु से 'उष्य' प्रत्यय होता है। जैसे—'मनुष्यः'।

कच्चायन **मनुपूरसुणादीहि उस्सनुसिसा** (४/६/५०)।

'मन' धातु से 'उस्स' प्रत्यय होता है। जैसे—'मनुस्सो'।

समीक्षा भाषाभेद को छोड़कर प्रकृति आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है।। १२०।

१२१. 'ऊर' प्रत्यय (२९)

कातन्त्र **खर्जिकृपिमसिपिञ्जादिभ्य ऊरोलौ; किरतेरूरो रत्वम्; मयतेरूरोखौ** (कात० उ० ३/६०; ५/५८; ६/४७)।

'खर्ज' आदि धातुओं से 'ऊर' प्रत्यय होता है। जैसे—'खर्जूरः, क्रूरः, मयूरः' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन विदादीहूरो (४/६/४७)।

'विद' आदि धातु-प्रातिपदिकों से 'ऊर' प्रत्यय होता है। जैसे—'दूरो, सिन्दूरो, कप्पूरो' इत्यादि।

समीक्षा अपने-अपने व्याकरण की रचनाशैली को छोड़कर शेष उभयत्र समानता है।। १२१।

१२२. 'एयण्' प्रत्यय (३०)

कातन्त्र **स्त्र्यत्र्यादेरेयण्** (२/६/४)।

स्त्रीप्रत्ययान्त तथा अत्र्यादिगण-पठित शब्दों से अपत्य अर्थ में 'एयण्' प्रत्यय होता है। जैसे—'वैनतेयः, सौपर्णेयः' इत्यादि।

कच्चायन **णेय्यो कत्तिकादीहि** (२/८/३)।

'अपत्य' अर्थ में कत्तिकादि-गण-पठित शब्दों से वैकल्पिक 'णेय्य' प्रत्यय होता है। जैसे—'कत्तिकेय्यो, गङ्गेय्यो' इत्यादि।

समीक्षा गणनामों के भिन्न-भिन्न होने पर तथा प्रत्यय में णकारानुबन्ध की योजना भिन्नस्थानिक होने पर भी शब्दसाम्य आदि के कारण उभयत्र समानता ही कही जायगी।। १२२।

१२३. 'क' प्रत्यय (३१)

कातन्त्र **अव्ययसर्वनाम्नः स्वरादन्त्यात् पूर्वोऽक् कः** (२/२/६४)।

अव्ययसंज्ञक तथा सर्वनामसंज्ञक शब्दों के बाद विकल्प से 'क' प्रत्यय होता है। जैसे—'वृक्षकः, वत्सकः' इत्यादि।

कच्चायन **द्वादितो कोनेकत्थे च** (२/८/४९)।

'द्वि' आदि शब्दों से अनेकार्थ में 'क' प्रत्यय होता है। जैसे—'द्विकं, पञ्चकं' इत्यादि।

समीक्षा अर्थ तथा उदाहरणों में भिन्नता होने पर भी प्रत्यय की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। १२३।

१२४. 'कल' प्रत्यय (३२)

कातन्त्र **पटिकमिमुशिकुशिभ्यः कलः** (कात० उ० ६/१)।

'पट' आदि धातुओं से 'कल' प्रत्यय होता है। जैसे—'पटलम्' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन पटादीह्यलं (४/६/४२)।

'पट' आदि धातुओं से 'अल' प्रत्यय होता है। जैसे—'पटलं' इत्यादि।

समीक्षा द्र०-'अल' प्रत्यय की समीक्षा।। १२४।

१२५. 'कि' प्रत्यय (३३)

कातन्त्र **मन्यतेः किरत उच्च, अहिकम्प्योर्नलोपश्च** (कात० उ० ४/३-४)।

'मन्, अहि, कम्प्' धातुओं से 'कि' प्रत्यय होता है। जैसे—'मुनिः, अहिः, कपिः'।

कच्चायन **मुनादीहि चि** (४/६/४६)।

'मुन' इत्यादि धातु-प्रातिपदिकों से 'इ' प्रत्यय होता है। जैसे—'मुनि, मणि, यति' इत्यादि।

समीक्षा भाषागत व्यवहारभेद तथा भाषागत व्याकरण-प्रक्रियाभेद के अतिरिक्त तो उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। १२५।

१२६. 'कि' प्रत्यय (३४)

कातन्त्र **उपसर्गे दः किः, कर्मण्यधिकरणे च** (४/५/७०-७१)।

उपसर्ग, कर्म तथा अधिकरण के उपपद में रहने पर दा-संज्ञक धातु से 'कि' प्रत्यय होता है। जैसे—'आदिः, निधिः, बालधिः' इत्यादि।

कच्चायन **सञ्ञायं दाधातो इ** (४/२/२)।

संज्ञा में 'दा' धातु से 'इ' प्रत्यय होता है। जैसे—'महोदधि, सन्धि' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रीय ककारानुबन्ध तथा कच्चायन में संज्ञा के उल्लेख को छोड़कर अन्य प्रकार की तो उभयत्र समानता ही है।। १२६।

$\frac{१२७}{(१)}$ 'क्त' प्रत्यय (३५)

कातन्त्र **निष्ठा** (४/३/९३)।

भूतकाल में धातु से निष्ठासंज्ञक 'क्त' प्रत्यय होता है। जैसे—'कृतः, शयितः, भिन्नः, छिन्नः, पक्वः' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **अतीते ततवन्तुतावी (४/२/६)।**

अतीतकाल में सभी धातुओं से 'त' प्रत्यय होता है। जैसे—'हुतो, भुत्तो, वुसितो' इत्यादि।

समीक्षा भाषागत भेद को छोड़कर अन्य प्रकार की उभयत्र समानता है। कातन्त्रकार ने 'क्त, क्तवन्तु' प्रत्ययों की निष्ठा संज्ञा की है "क्तक्तवन्तू निष्ठा" (४/१/८४)।। १२७/१।

१२७ (२) **कातन्त्र** **ञ्यनुबन्धमतिबुद्धिपूजार्थेभ्यः क्तः (४/४/६६)।**

'ञि' अनुबन्ध वाली तथा 'मति-बुद्धि-पूजा' अर्थ वाली धातुओं से भाव आदि अर्थों में 'क्त' प्रत्यय होता है। जैसे—'भिन्नः, राज्ञां बुद्धः, मतः, पूजितः' इत्यादि।

कच्चायन **भ्यादीहि मतिबुद्धिपूजादीहि च क्तो (४/६/२०)।**

'मिद' आदि तथा 'पूजा' आदि अर्थ वाली धातुओं से 'क्त' प्रत्यय होता है। जैसे—'मित्तो, सम्मतो, वन्दितो' इत्यादि।

समीक्षा अपनी-अपनी भाषा में व्यवहारगत भिन्नता को छोड़कर शेष समानता है।। १२७/२।

१२७ (३) **कातन्त्र** **नपुंसके भावे क्तः (४/५/९३)।**

भाव अर्थ तथा नपुंसकलिङ्ग में 'क्त' प्रत्यय होता है। जैसे—'आसितम्, शयितम्' इत्यादि।

कच्चायन **भावकम्मेसु त (४/२/७)।**

अतीतकाल में तथा भाव अर्थ में 'त' प्रत्यय होता है। जैसे—'गीतं, भासितं' इत्यादि।

समीक्षा भाव अर्थ की दृष्टि से उभयत्र पूर्ण समानता है। कच्चायनकारीय कर्म अर्थ के लिए कातन्त्र में "आदिकर्मणि क्तः कर्तरि च" (४/६/४८) सूत्र द्रष्टव्य है।। १२७/३।

१२७ (४) **कातन्त्र** **आदिकर्मणि क्तः कर्तरि च, गत्यर्थाकर्मकश्लिषशीङ्स्थास-वसजनरुहजीर्यतिभ्यश्च (४/६/४८, ४९)।**

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कर्ता अर्थ में गत्यर्थक आदि धातुओं से 'क्त' प्रत्यय होता है। जैसे— 'प्रकृतः कटं भवान्, गतो ग्रामं भवान्' इत्यादि।

कच्चायन **बुधगमादित्थे कत्तरि** (४/२/८)।

'बुध-गम' आदि धातुओं से कर्ता अर्थ में 'त' प्रत्यय होता है। जैसे—'बुद्धो, गतो' इत्यादि।

समीक्षा सामान्यतया उभयत्र समानता ही है।। १२७/४।

१२७ (५) 'क्त' प्रत्यय (कर्ता अर्थ में)

कातन्त्र **आदिकर्मणि क्तः कर्तरि च** (४/६/४८)।

आदि कर्म में विहित 'क्त' प्रत्यय कर्ता अर्थ में समझना चाहिए। जैसे—'प्रकृतः कटं भवान्' इत्यादि।

कच्चायन **कम्मणि दुतियायं क्तो** (४/६/३)।

कर्म के अर्थ में तथा दुतिया विभक्ति में धातु से विहित 'क्त' प्रत्यय कर्ता अर्थ में होता है। जैसे—'सीलं रक्खितो देवदत्तो' इत्यादि।

समीक्षा अर्थगत विषमता को छोड़कर अन्य प्रकार की तो उभयत्र समानता ही है।। १२७/५।

१२८. 'क्तवन्तु' प्रत्यय (३६)

कातन्त्र **निष्ठा** (४/३/९३)।

भूतकाल में धातुओं से निष्ठासंज्ञक 'क्तवन्तु' प्रत्यय होता है। जैसे— 'कृतवान्, शयितवान्, गतवान्' इत्यादि।

कच्चायन **अतीते ततवन्तुतावी** (४/२/६)।

अतीतकाल में सभी धातुओं से 'तवन्तु' प्रत्यय होता है। जैसे—'हुतवा, भुत्तवा' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रीय ककारानुबन्ध को छोड़कर अन्य प्रकार की उभयत्र समानता है।। १३८।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

१२९. 'क्ति' प्रत्यय (३७)

कातन्त्र **स्त्रियां क्तिः, सातिहेतियूतिजूतयश्च, भावे पचिगापास्थाभ्यः** (४/५/७२-७४)।

स्त्रीलिङ्ग में, भाव तथा कर्ता अर्थ में 'क्ति' प्रत्यय होता है। जैसे— 'बुद्धिः, हेतिः, सङ्गीतिः' इत्यादि।

कच्चायन **ति किच्चासिट्ठे** (४/२/३)।

संज्ञा तथा आशीर्वाद अर्थ में 'ति' प्रत्यय होता है। जैसे—'जिनबुद्धि, धनभूति' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रीय ककारानुबन्ध को छोड़कर अन्य प्रकार की उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। १२९।

१३०. 'क्त्वा' प्रत्यय (३८)

कातन्त्र **अलंखल्वोः प्रतिषेधयोः क्त्वा वा, मेङः, एककर्तृकयोः पूर्वकाले, परावरयोगे च, णम् चाभीक्ष्ण्ये द्विश्च पदम्** (४/६/१-५)।

प्रतिषेधार्थक 'अलम्-खलु' शब्दों के उपपद में रहने पर धातु से 'क्त्वा' प्रत्यय होता है। जैसे—'अलंकृत्वा, अपमाय, भुक्त्वा व्रजति, अतिक्रम्य पर्वतं नदी, भुक्त्वा भुक्त्वा व्रजति' इत्यादि।

कच्चायन **पुब्बकालेककत्तुकानं तूनत्वानत्वा वा** (४/२/१५)।

एककर्तृक धातुओं के पूर्वकाल में 'त्वा' प्रत्यय विकल्प से होता है। जैसे—'सुत्वा' इत्यादि।

समीक्षा संक्षेप-विस्तार को छोड़कर सामान्यतया उभयत्र समानता ही देखी जाती है।। १३०।

१३१. 'क्यप्' प्रत्यय (३९)

कातन्त्र **व्रजयजोः क्यप्, समजासनिसदनिपतिशीङ्सुविद्यटिचरिमन-भृञिणां संज्ञायाम्** (४/५/७५, ७६)।

भाव अर्थ में तथा संज्ञा अर्थ में भी स्त्रीलिङ्ग में 'क्यप्' प्रत्यय होता है। जैसे—'व्रज्या, शय्या, विद्या' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **वजादीहि पब्बज्जादयो निपच्चन्ते** (४/६/१५)।

'वज' आदि धातुओं से उपसर्ग एवं प्रत्यय आदि के साथ पब्बज्जा आदि शब्द निपातन से सिद्ध होते हैं।

समीक्षा कातन्त्रकार ने चौदह धातुओं का दो सूत्रों में परिगणन किया है, जबकि कच्चायन में तैंतालिस धातुएँ वजादिगण में पढ़ी गई हैं। इस प्रकार संक्षेप-विस्तार की दृष्टि से और प्रक्रिया की दृष्टि से उभयत्र भिन्नता ही कही जायगी। केवल शब्दरूपों की दृष्टि से यहाँ समानता प्रतीत होती है।। १३१।

१३२. 'क्विप्' प्रत्यय (४०)

कातन्त्र **क्विप् च** (४/३/६८)।

प्रायः सभी धातुओं से 'क्विप्' प्रत्यय होता है। जैसे—'सम्पद्, विपद्, आपद्' इत्यादि।

कच्चायन **क्वि च** (४/१/७)।

सभी धातुओं से 'क्वि' प्रत्यय होता है। जैसे—'सम्भू, भुजगो' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रीय पकारानुबन्ध की योजना को छोड़कर अन्य प्रकार की प्रायः उभयत्र समानता ही है।। १३२।

१३३. 'खल्' प्रत्यय (४१)

कातन्त्र **ईषद्दुःसुषु कृच्छ्राकृच्छ्रार्थेषु खल्, कर्तृकर्मणोश्च भूकृञोः** (४/५/१०२-१०३)।

'ईषद्, दुस्, सु' के उपपद में रहने पर दुःख तथा सुख अर्थ में 'कृ' आदि धातुओं से 'खल्' प्रत्यय होता है। जैसे—'सुकरः कटो भवता, दुष्करः कटो भवता, ईषदाढ्यम्भवं भवता' इत्यादि।

कच्चायन **ईसदुस्सूहि ख** (४/२/११)।

'ईस, दु' तथा 'सु' शब्दों के आदि में रहने पर धातुओं से 'ख' प्रत्यय होता है। जैसे—'ईसस्सयो, सुकरं कम्मं भवता' इत्यादि।

समीक्षा सामान्यतया उभयत्र प्रायः समानता है।। १३३।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

१३४. 'खश्' प्रत्यय (४२)

कातन्त्र **एजेः खश्** (४/३/३०; द्र०-४/३/३१ से ४/३/४६ तक)।

'एजृ' आदि धातुओं से 'खश्' प्रत्यय होता है। जैसे—'जनमेजयः, ललाटन्तपः सूर्यः' इत्यादि।

कच्चायन **सञ्ञायम नु** (४/१/२; द्र०-४/१/३-५)।

कर्म उपपद के आदि में रहने पर संज्ञा आदि में 'अ' प्रत्यय होता है। जैसे—'अरिन्दमो, दीपङ्करो' इत्यादि।

समीक्षा भाषागत शब्दभेद के कारण विधिसूत्रों में भिन्नता देखी जाती है, फिर भी बहुत से उदाहरणों में प्रायः समानता ही कही जाएगी।। १३४।

१३५. 'घञ्' प्रत्यय (४३)

कातन्त्र **पदरुजविशस्पृशोचां घञ्, भावे** (४/५/१, ३)।

'पद्-रुज्' इत्यादि धातुओं से तथा 'भाव' अर्थ में 'घञ्' प्रत्यय होता है। जैसे—'रोगः, स्पर्शः, पाकः' इत्यादि।

कच्चायन **विसरुजपदादितो ण, भावे च** (४/१/५, ६)।

'विस-रुज' इत्यादि धातुओं से 'ण' प्रत्यय होता है। जैसे—'पवेसो, ओको, रागो' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद तथा व्याकरणगत प्रक्रियाभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की उभयत्र समानता है।। १३५।

१३६. 'घ्यण्' प्रत्यय (४४)

कातन्त्र **ऋवर्णव्यञ्जनान्ताद् घ्यण्** (४/२/३५)।

ऋवर्णान्त तथा व्यञ्जनान्त धातुओं से 'घ्यण्' प्रत्यय होता है। जैसे—'कार्यम्, हार्यम्, धार्यम्' इत्यादि।

कच्चायन **ण्यो च** (४/१/१८)।

भाव तथा कर्म में सभी धातुओं से 'ण्य' प्रत्यय होता है। जैसे—'कारियं' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा व्याकरणों की प्रक्रियाभेद के कारण यहाँ प्रत्ययभेद देखा जाता है, परन्तु फल या अर्थ आदि की दृष्टि से समानता ही है।। १३६।

१३७. 'ट' प्रत्यय (४५)

कातन्त्र **तदाद्याद्यन्तानन्तकारबहुबाह्वहर्दिवाविभानिशाप्रभाभाश्चित्रकर्तृनान्दी-किंलिपिलिबिबलिभक्तिक्षेत्रजङ्घाधनुररुःसंख्यासु च** (४/३/२३)।

'तद्' इत्यादि कर्मकारक के उपपद में रहने पर 'कृ' धातु से 'ट' प्रत्यय होता है। जैसे—'दिवाकरः, किङ्करः, नान्दीकरः' इत्यादि।

कच्चायन **रम्हिरन्तो रादि नो** (४/१/१६)।

रकारानुबन्ध वाले प्रत्यय की परता में (सभी धात्वन्तों तथा) 'र' आदि का लोप हो जाता है। जैसे—'अन्तको' इत्यादि।

समीक्षा व्याकरणभेद से धातुओं में भिन्नता होना स्वाभाविक है। इसी दृष्टि से यहाँ कार्य तथा शब्दरूपों में भेद देखा जाता है। अर्थ की दृष्टि से समानता ही कही जायगी।। १३७।

१३८/(१) 'ड' प्रत्यय (४६)

कातन्त्र **डोऽसंज्ञायामपि, विहङ्गतुरङ्गभुजङ्गाश्च, अन्यतोऽपि च, हन्तेः कर्मण्याशीर्गत्योः** (४/३/४७-५०)।

'असंज्ञा-आशीः' इत्यादि अर्थों में 'गम्-हन्' इत्यादि धातुओं से 'ड' प्रत्यय होता है। जैसे—'दुर्गः, विहङ्गः, पाणिघः' इत्यादि।

कच्चायन **पारादिगमिम्हा रू, संहनञ्ञाय वा रो घो** (४/१/११, १५)।

'पार आदि शब्द हैं आदि में जिनके' ऐसी 'गमु' आदि धातुओं से 'स' प्रत्यय तथा सं-पूर्वक 'हन' इत्यादि धातुओं से 'र' प्रत्यय ताच्छील्यादि अर्थों में होता है। जैसे—'भवपारगू, सङ्घो' इत्यादि।

समीक्षा प्रत्यय तथा शब्दरूपों में भिन्नता होने पर भी उपपद तथा धातु आदि की दृष्टि से समानता ही है।। १३८/१।

१३८/(२) **कातन्त्र** **शमेर्डः, अनुनासिकान्ताड्डः, वरण्डादयः** (कात० उ० १/३६-३८)।

'शम्' आदि धातुओं से 'ड' प्रत्यय होता है। जैसे—'शण्डः, मण्डः, वरण्डः' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **कड्यादीहि को** (४/६/४०)।

'कडि' आदि धातुओं से 'क' प्रत्यय होता है। जैसे—'कण्डो, मण्डो, सण्डो' इत्यादि।

समीक्षा अपने-अपने व्याकरण की धातुओं के अनुसार यहाँ 'ड' और 'क' प्रत्यय में भिन्नता है। सामान्यतया तो उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। १३८/२।

१३९. 'णिनि' प्रत्यय (४७)

कातन्त्र **नाम्न्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये** (४/३/७६)।

संज्ञा अर्थ में 'ताच्छील्य' अर्थ के गम्यमान होने पर 'णिनि' प्रत्यय होता है। जैसे—'सोमयाजी, अग्निष्टोमयाजी' इत्यादि।

कच्चायन **तस्सीलादिसु णीत्वावी च** (४/१/९)।

ताच्छील्य आदि अर्थों में सभी धातुओं से 'णी' प्रत्यय होता है। जैसे—'पियपसंसी, ब्रह्मचारी' इत्यादि।

समीक्षा प्रत्ययभेद होने पर भी अर्थादि की दृष्टि से उभयत्र प्रायः समानता ही कही जा सकती है।। १३९।

१४०. 'णिन्' प्रत्यय (४८)

कातन्त्र **आवश्यकाधमर्णयोर्णिन्** (४/५/११)।

अवश्यंभाव तथा अधमर्ण अर्थों के गम्यमान होने पर धातु से 'णिन्' प्रत्यय होता है। जैसे—'अवश्यंकारी, शतंदायी' इत्यादि।

कच्चायन **अवस्सकाधमिणेसु णी च** (४/६/१३)।

आवश्यक तथा आधमर्ण्य अर्थों में 'णी' प्रत्यय होता है। जैसे—'कारीसि मे कम्मं अवस्सं, दायीसि में सतं इणं' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायनकारीय कृत्य प्रत्ययों के अतिरिक्त विधान को छोड़कर शेष प्रायः उभयत्र समानता ही है।। १४०।

१४१. 'त' प्रत्यय (४९)

कातन्त्र **तत्वौ भावे** (२/६/१३)।

शब्द में प्रवृत्तिनिमित्तरूप भाव के अभिधेय होने पर लिङ्ग से 'त' प्रत्यय होता है। जैसे—'शुक्लता' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **ण्यत्तता भावे तु (२/८/१७)।**

भाव अर्थ में 'ता' प्रत्यय होता है। जैसे—'निद्दारामता' इत्यादि।

समीक्षा ह्रस्व अकारान्त तथा दीर्घ आकारान्त-'त-ता' प्रत्ययों में जो भेद है, वह अपने-अपने व्याकरण की प्रक्रिया के अनुसार है। अतः सामान्यतया उभयत्र समानता ही है। यह भी ज्ञातव्य है कि कातन्त्रकार 'जडता' आदि रूप सिद्ध करने के लिए अग्रिम सूत्र (२/६/१४) से भी 'ता' प्रत्यय करते हैं।। १४१।

१४२. 'तम' (तमाम्) प्रत्यय (५०)

कातन्त्र **आख्याताच्च तमादयः—आख्यातकिमेकारान्ताव्ययेभ्यः क्रिया-गुणप्रकर्षवृत्तिभ्य एव तरां तमाम् (२/६/४०-१)।**

नामसंज्ञक (आख्यातसंज्ञक भी) शब्दों से 'तम' प्रत्यय होता है। जैसे—'आढ्यतमः' इत्यादि।

कच्चायन **विसेसे तरतमिस्सिकियिट्ठा (२/८/२०)।**

विशेष के अर्थ में 'तम' प्रत्यय होता है। जैसे—'पापतमो' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण शब्दभेद होने पर भी अर्थ आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। १४२।

१४३. 'तर' प्रत्यय (५१)

कातन्त्र **आख्याताच्च तमादयः-आख्यातकिमेकारान्ताव्ययेभ्यः क्रियागुण-प्रकर्षवृत्तिभ्य एव तरां तमाम् (२/६/४०-१)।**

नामसंज्ञक (तथा आख्यात संज्ञक) शब्दों से 'तर' प्रत्यय होता है। जैसे—'आढ्यतरः' इत्यादि।

कच्चायन **विसेसे तरतमिस्सिकियिट्ठा (२/८/२०)।**

विशेष के अर्थ में 'तर' प्रत्यय होता है। जैसे—'पापतरो' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण शब्दभेद होने पर भी अर्थ आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। १४३।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१४४. 'तवेन्' प्रत्यय (५२)

कातन्त्र सेन्नसेन्कसेनध्यैन्कध्यैन्शध्यैन्तवैन्तवेङ् तवेनस्तुमर्थे (कात० छन्द०-कृत्० २/९)।

'तुम्' प्रत्यय के अर्थ में 'तवेन्' प्रत्यय होता है। जैसे—'कर्तवे' इत्यादि।

कच्चायन इच्छत्थेसु समानकत्तुकेसु तवेतुं वा (४/२/१२)।

इच्छार्थक तथा समानकर्तृक होने पर धातुओं से 'तवे' प्रत्यय विकल्प से होता है। जैसे—'कातवे, सोतवे' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र व्याकरण में मूलतः वैदिक प्रकरण नहीं है। चन्द्रकान्त तर्कालंकार नामक किसी वङ्गदेशीय विद्वान् ने पाँच सौ इक्कीस वैदिक सूत्रों की रचना की है। पाणिनि ने भी 'तुमुन्' प्रत्यय के अर्थ में 'तवेङ्' तथा 'तवेन्' आदि प्रत्यय किए हैं। इस प्रकार कच्चायनकारीय 'तवे' प्रत्यय का विधान संस्कृत व्याकरण के अनुसार वैदिक प्रत्यय से समानता रखता है।। १४४।

१४५. 'तव्य' प्रत्यय (५३)

कातन्त्र तव्यानीयौ (४/२/९)।

धातु से कृत्संज्ञक 'तव्य' प्रत्यय होता है। जैसे—'कर्त्तव्यम्' इत्यादि।

कच्चायन भावकम्मेसु तब्बानीया (४/१/१७)।

भाव-कर्म अर्थ में सभी धातुओं से 'तब्ब' प्रत्यय होता है। जैसे—'भवितब्बं' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण होने वाले रूपभेद को छोड़कर शेष प्रायः समानता ही है।। १४५।

१४६. 'तस्' प्रत्यय (५४)

कातन्त्र पञ्चम्यास्तस् (२/६/२८)।

'द्वि' आदि से भिन्न सर्वनामसंज्ञक शब्दों से तथा पञ्चम्यन्त 'बहु' शब्द से 'तस्' प्रत्यय होता है। जैसे—'सर्वतः, बहुतः' इत्यादि।

कच्चायन क्वचि तो पञ्चम्यत्थे (२/५/२)।

पञ्चमी के अर्थ में कहीं-कहीं 'तो' प्रत्यय होता है। जैसे—'सब्बतो, अतो' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा भाषाभेद से होने वाले शब्दभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की तो उभयत्र समानता ही है।। १४६।

१४७. 'तीय' प्रत्यय (५५)

कातन्त्र **द्वेस्तीयः, त्रेस्तृ च** (२/६/१७, १८)।

'पूरण' अर्थ विवक्षित होने पर 'द्वि' तथा 'त्रि' शब्दों से 'तीय' प्रत्यय होता है। जैसे—'द्वितीयः, तृतीयः'।

कच्चायन **द्वितीहि तियो** (२/८/४२)।

संख्यापूरणार्थ में 'द्वि' तथा 'ति' शब्दों से 'तिय' प्रत्यय होता है। जैसे—'दुतियो, ततियो'।

समीक्षा भाषाभेद से 'ति' शब्द में तथा 'तिय' प्रत्यय में आंशिक भिन्नता होने पर भी अर्थ की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है।। १४७।

१४८. 'तुन्' प्रत्यय (५६)

कातन्त्र **सितनिगमिमसिसच्यवधाञ्क्रुशिभ्यस्तुन्, कमिमनिजनिवसिहिभ्यश्च, केत्वादयः** (कात० उ० १/२६-२८)।

'सि' आदि धातुओं से 'तुन्' प्रत्यय होता है। जैसे—'धातुः, जन्तुः, केतुः, हेतुः, वस्तु' इत्यादि।

कच्चायन **हनादीहि नुणुतवो** (४/६/४८)।

'हन' आदि धातुओं से 'तु' प्रत्यय होता है। जैसे—'धातु, हेतु' इत्यादि।

समीक्षा भाषागत व्यवहारभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की उभयत्र समानता ही देखी जाती है।। १४८।

१४९. 'तुम्' प्रत्यय (५७)

कातन्त्र **वुण्तुमौ क्रियायां क्रियार्थायाम्** (४/४/६९)।

क्रियार्थक क्रिया के उपपद में रहने पर भविष्यत्कालार्थक धातु से 'तुम्' प्रत्यय होता है। जैसे—'पक्तुं व्रजति' इत्यादि।

कच्चायन **किरियायं ण्वुतवो** (४/६/२९)।

भविष्यत्काल में क्रिया के गम्यमान रहने पर 'तु' प्रत्यय होता है। जैसे—'भोत्ता वजति' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा पूर्ववत्।। १४९।

१५०/(१) 'तुम्' प्रत्यय (५८)

कातन्त्र **इच्छार्थेष्वेककर्तृकेषु तुम्, कालसमयवेलाशक्त्यर्थेषु च** (४/५/१०६-१०७)।

समान कर्त्ता वाली इच्छार्थक धातुओं के उपपद में रहने पर धातु से 'तुम्' प्रत्यय होता है। जैसे—'इच्छति भोक्तुम्, वेला भोक्तुम्' इत्यादि।

कच्चायन **इच्छत्थेसु समानकत्तुकेसु तवेतुं वा, अरहसक्कादिसु च, पत्तवचने अलमत्थेसु च** (४/२/१२-१४)।

उक्त अर्थ में 'तुं' प्रत्यय होता है। जैसे—'कातुं इच्छति, सक्का जेतुं धनेन वा, अलमेव दानानि दातुं' इत्यादि।

समीक्षा सामान्यतया उभयत्र समानता ही है।। १५०/१।

१५०/(२) **कातन्त्र** **इच्छार्थेष्वेककर्तृकेषु तुम्, कालसमयवेलाशक्त्यर्थेषु च** (४/५/१०६-७)।

समानकर्तृक इच्छा अर्थ वाली तथा काल आदि शब्दों के उपपद वाली धातुओं से 'तुम्' प्रत्यय होता है। जैसे—'इच्छति भोक्तुम्, भोक्तुं कालः' इत्यादि।

कच्चायन **अरहसक्कादीहि तुं** (४/६/१४)।

'अर्ह, शक्य' आदि प्रातिपदिकों के योग में सभी धातुओं से 'तुं' प्रत्यय होता है। जैसे—'सक्को भवं हन्तुं, अरहा भवं वत्तुं' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायनकार ने इच्छार्थक उपपदों की योजना नहीं की है। इसका स्पष्ट कारण नहीं बताया जा सकता। प्रयोग की दृष्टि से इसका होना आवश्यक प्रतीत होता है। इस प्रकार कातन्त्र में की गई इस योजना के अतिरिक्त अन्य प्रकार की समानता ही है।। १५०/२।

१५१. 'तृच्' प्रत्यय (५९)

कातन्त्र **वुण्तृचौ** (४/२/४७)।

सभी धातुओं से कर्त्ता अर्थ में 'तृच्' प्रत्यय होता है। जैसे—'कर्ता, हर्ता, गन्ता' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **सब्बतो ण्वुत्वावी वा** (४/१/४)।

कर्म तथा अकर्म के आदि में होने पर सभी धातुओं से 'तु' प्रत्यय होता है। जैसे—'दाता, कत्ता' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण होने वाले शब्दभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की प्रायः समानता ही है।। १५१।

१५२. 'त्र' प्रत्यय (६०)

कातन्त्र **त्र सप्तम्याः** (२/६/२९)।

द्वयादिभिन्न सप्तम्यन्त सर्वनामसंज्ञक तथा 'बहु' शब्द से वैकल्पिक 'त्र' प्रत्यय होता है। जैसे—'सर्वत्र, बहुत्र' इत्यादि।

कच्चायन **त्रथ सत्तमिया सब्बनामेहि** (२/५/३)।

सप्तमी के अर्थ में सर्वनामों के बाद 'त्र' प्रत्यय होता है। जैसे—'सब्बत्र, तत्र' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद से होने वाले शब्दभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की तो उभयत्र समानता ही है।। १५२।

१५३. 'त्रि' प्रत्यय (६१)

कातन्त्र **रातेस्त्रिः; अतेस्त्रिः** (कात० उ० ३/४४; ६/२७)।

'रा' तथा 'अत्' धातु से 'त्रि' प्रत्यय होता है। जैसे—'रात्रिः, अत्रिः'।

कच्चायन **मिदादीहि त्तितियो** (४/६/३५)।

'मिद' आदि धातुओं से 'ति' तथा 'त्ति' प्रत्यय होते हैं। जैसे—'रत्ति, तन्ति, धाति' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने केवल दो ही धातुओं से 'त्रि' प्रत्यय का विधान किया है, जबकि कच्चायनकार ने मिदादिगणपठित सभी धातुओं से 'ति' तथा 'त्ति' प्रत्यय किए हैं। यह भेद सम्भवतः अपनी-अपनी भाषाओं में होने वाले शब्दव्यवहार के आधार पर है। अतः येन केन प्रकारेण समानता ही परिलक्षित होती है।। १५३।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१५४. 'त्रिमक्' प्रत्यय (६२)

कातन्त्र **ड्वनुबन्धात् त्रिमक् तेन निर्वृत्ते (४/५/६८)।**

'डु' अनुबन्ध वाली धातुओं से 'निर्वृत्त' अर्थ में 'त्रिमक्' प्रत्यय होता है। जैसे—'कृत्रिमम्, पक्त्रिमम्' इत्यादि।

कच्चायन **वेपुसिदववमुकुदामूह्वादीहि थुत्तिमणिमा निब्बत्ते (४/६/२१)।**

'दा' आदि धातुओं से 'निर्वृत्त' अर्थ में 'त्तिम' प्रत्यय होता है। जैसे—'दत्तिमं' इत्यादि।

समीक्षा भाषागत भेद के अतिरिक्त शेष उभयत्र समानता है।। १५४।

१५५. 'त्व' प्रत्यय (६३)

कातन्त्र **तत्वौ भावे (२/६/१३)।**

शब्दप्रवृत्तिनिमित्तरूप भाव के अभिधेय होने पर लिङ्ग से 'त्व' प्रत्यय होता है। जैसे—'शुक्लत्वम्' इत्यादि।

कच्चायन **ण्यत्तता भावे तु (२/८/१७)।**

भाव अर्थ में 'त्त' प्रत्यय होता है। जैसे—'पंसुकूलिकत्तं' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण 'त्व-त्त' प्रत्ययों में भेद देखा जाता है। अतः सामान्यतया उभयत्र समानता ही है। यह भी ज्ञातव्य है कि कातन्त्रकार 'जडत्वम्' आदि रूप सिद्ध करने के लिए अग्रिम सूत्र ''यण् च प्रकीर्तितः'' (२/६/१४) से भी 'त्व' प्रत्यय करते हैं।। १५५।

१५६. 'थ' प्रत्यय (६४)

कातन्त्र **उषिकुषिगार्तिभ्यस्थः (कात० उ० ५/६३)।**

'उष' इत्यादि धातुओं से 'थ' प्रत्यय होता है। जैसे—'ओष्ठः' इत्यादि।

कच्चायन **कुटादीहि ठो (४/६/४९)।**

'कुट' आदि धातुओं—प्रातिपदिकों से 'ठ' प्रत्यय होता है। जैसे—'कोट्ठो' इत्यादि।

समीक्षा भाषागत व्यवहारभेद के अतिरिक्त अन्य प्रकार की उभयत्र समानता है।। १५६।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१५७ (१) 'थक्' प्रत्यय (६५)

कातन्त्र **रमिकासिकुषिपातृवचिरिचिसिचिगुभ्यस्थक्** (कात० उ० २/१०)।

'रम्' आदि धातुओं से 'थक्' प्रत्यय होता है। जैसे—'रथः' इत्यादि।

कच्चायन **समादीहि थमा** (४/६/५)।

'सम' आदि धातुओं से 'थ' प्रत्यय होता है। जैसे—'समथो, दमथो' इत्यादि।

समीक्षा उभयत्र धातुभेद तथा कातन्त्रीय ककारानुबन्ध के अतिरिक्त (प्रत्ययों में) प्रायः समानता देखी जा सकती है।। १५७/१।

१५७ (२) **कातन्त्र** **रमिकासिकुषिपातृवचिरिचिसिचिगुभ्यस्थक्, अवे भृञः, न्युदो शीङ्गाभ्याम्, पृष्ठयूथप्रोथाः** (कात० उ० २/१०-१३)।

'रम्' आदि धातुओं से 'थक्' प्रत्यय होता है। जैसे—'रथः, अवभृथः, निशीथः, पृष्ठम्' इत्यादि।

कच्चायन **कुटादीहि ठो** (४/६/४९)।

'कुट' आदि धातुओं एवं प्रातिपदिकों से 'ठ' प्रत्यय होता है। जैसे—'कुट्ठो' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रीय गुणनिषेधार्थक 'क्' अनुबन्ध को छोड़कर शेष प्रायः समानता ही है।। १५७/२।

१५८. 'थमु' प्रत्यय (६६)

कातन्त्र **इदंकिम्भ्यां थमुः कार्यः** (२/६/३९)।

'प्रकार' अर्थ में 'इदम्, किम्' शब्दों से 'थमु' प्रत्यय होता है। जैसे—'इत्थम्, कथम्' इत्यादि।

कच्चायन **किमिमेहि थं** (२/८/५६)।

'प्रकार' अर्थ में 'किं-इम' शब्दों से 'थं' प्रत्यय होता है। जैसे—'कथं, इत्थं' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रीय प्रत्यय में उकारानुबन्ध तथा भाषागत भिन्नता को छोड़कर अन्य सभी प्रकार की दोनों व्याकरणों में समानता ही है।।१५८।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१५९. 'था' प्रत्यय (६७)

कातन्त्र **प्रकारवचने तु था** (२/६/३८)।

द्वि-आदि भिन्न सर्वनामसंज्ञक शब्दों से प्रकार अर्थ में 'था' प्रत्यय होता है। जैसे—'यथा, तथा, अन्यथा' इत्यादि।

कच्चायन **सब्बनामेहि पकारवचने तु था** (२/८/५५)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'सब्बथा, अञ्ञथा, तथा' इत्यादि।

समीक्षा शब्द-अर्थ तथा प्रत्ययविधान की दृष्टि से दोनों में पूर्ण समानता ही परिलक्षित होती है।। १५९।

१६०. 'दा' प्रत्यय (६८)

कातन्त्र **काले किंसर्वयदेकान्येभ्य एव दा, दादानीमौ तदः स्मृतौ** (२/६/३४, ३६)।

काल-अर्थ की विवक्षा में सप्तम्यन्त 'किम्' आदि शब्दों से 'दा' प्रत्यय होता है। जैसे—'कदा, तदा, सर्वदा' इत्यादि।

कच्चायन **किं सब्बञ्ञेकयकूहि दादाचनं, तम्हा दानि च** (२/५/११, १२)।

कालवाचक सप्तमी के अर्थ में 'किं' आदि शब्दों से 'दा' प्रत्यय होता है। जैसे—'कदा, सब्बदा, तदा' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ कुछ शब्दरूपों में उभयत्र जो भेद देखा जाता है, वह भाषाभेद के कारण है। प्रत्यय की दृष्टि से तो उभयत्र समानता ही कही जाएगी।। १६०।

१६१. 'दानीम्' प्रत्यय (६९)

कातन्त्र **इदमो र्ह्यधुनादानीम्, दादानीमौ तदः स्मृतौ** (२/६/३५-३६)।

'काल' अर्थ की विवक्षा में सप्तम्यन्त 'इदम-तद्' शब्दों से 'दानीम्' प्रत्यय होता है। जैसे—'इदानीम्' तथा 'तदानीम्'।

कच्चायन **तम्हा दानि च, इमस्मा रहिधुनादानि च** (२/५/१२-१३)।

कालवाची सप्तमी के अर्थ में 'इम' तथा 'त' शब्द के बाद 'दानि' प्रत्यय होता है। जैसे—'इदानी' तथा 'तदानी'।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा भाषाभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की दोनों व्याकरणों में समानता ही कही जा सकती है।। १६१।

१६२. 'धा' प्रत्यय (७०)

कातन्त्र **आख्याताच्च तमादयः—बहोरविप्रकर्षे धा च** (२/६/४०-१२)।

'सांनिध्य' अर्थ में 'बहु' शब्द से 'धा' प्रत्यय होता है। जैसे—'बहुधा'।

कच्चायन **विभागे धा च** (२/८/५४)।

'विभाग' अर्थ में 'धा' प्रत्यय होता है। जैसे—'एकधा, पञ्चधा' इत्यादि।

समीक्षा अर्थ और उदाहरणों की भिन्नता होने पर भी अर्थगत उभयत्र समानता ही है।। १६२।

१६३. 'नु' प्रत्यय (७१)

कातन्त्र **दाभारिवृञ्भ्यो नुः, सूविषिभ्यां यण्वत्, धेन्वादयः** (कात० उ० २/७-९)।

'दा' आदि धातुओं से 'नु' प्रत्यय होता है। जैसे—'भानुः, विष्णुः, धेनुः, सूनुः, रेणुः' इत्यादि।

कच्चायन **हनादीहि नुणुतवो** (४/६/४८)।

'हन' आदि धातुओं से 'नु' प्रत्यय होता है। जैसे—'हनु, जानु' इत्यादि।

समीक्षा सामान्यतया प्रायः सभी अंशों में उभयत्र समानता ही देखी जाती है।। १६३।

१६४/(१) 'म' प्रत्यय (७२)

कातन्त्र **अर्तिहुसुधृक्षिणीपदभायास्तुभ्यो मः** (कात० उ० १/५३)।

'ऋ-धृ' इत्यादि १० धातुओं से 'म' प्रत्यय होता है। जैसे—'होमः, धर्मः, स्तोमः, सोमः' इत्यादि।

कच्चायन **धरादीहि रम्मो** (४/१/८)।

'धर' आदि धातुओं से 'रम्म' प्रत्यय होता है। जैसे—'धम्मो, कम्मं' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा उभयत्र प्रत्ययभेद होने पर भी शब्दरूप आदि की दृष्टि से प्रायः समानता ही है।। १६४/१।

१६४ (२) **कातन्त्र** **अर्तिहुसुधृक्षिणीपदभायास्तुभ्यो मः, ग्रसेरा च** (कात०उ० १/५३,५४)।

'ऋ' आदि धातुओं से 'म' प्रत्यय होता है। जैसे—'धर्मः, क्षेमम्, ग्रामः, होमः, सोमः' इत्यादि।

कच्चायन **समादीहि थमा** (४/६/५)।

'सम' आदि धातुओं से 'म' प्रत्यय होता है। जैसे—'यामो, भीमो' इत्यादि।

समीक्षा धातुभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की दोनों व्याकरणों में समानता है।। १६४/२।

१६४ (३) **कातन्त्र** **संख्यायाः पूरणे डमौ** (२/६/१६)।

संख्यावाची शब्द से 'पूरण' अर्थ में 'म' प्रत्यय होता है। जैसे—'पञ्चमः, सप्तमः, नवमः' इत्यादि।

कच्चायन **सङ्ख्यापूरणे मो** (२/८/३०)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'पञ्चमो, नवमो' इत्यादि।

समीक्षा अर्थ तथा प्रत्यय की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। १६४/३।

१६५. 'मन्' प्रत्यय (७३)

कातन्त्र **सर्वधातुभ्यो मन्** (कात० उ० ४/२८)।

सभी धातुओं से 'मन्' प्रत्यय होता है। जैसे—'भस्म, कर्म' इत्यादि।

कच्चायन **ख्यादीहि मन म च तो वा** (४/६/४)।

'खी' आदि धातुओं से 'मन' प्रत्यय होता है। जैसे—'खेमो, सोमो' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायन में धातुभेद तथा वैकल्पिक तकारादेश के अतिरिक्त अन्य प्रकार की यहाँ समानता ही कही जाएगी।। १६५।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१६६. 'मन्तु' प्रत्यय (७४)

कातन्त्र तदस्यास्तीति मन्त्वन्त्वीन् (२/६/१५)।

'अस्यास्ति' इस अर्थ में प्रथमान्त शब्दों से 'मन्तु' प्रत्यय होता है। जैसे—'आयुष्मान्' इत्यादि।

कच्चायन सत्यादीहि मन्तु (२/८/२६)।

'तदस्स अत्थि' अर्थ में, 'मन्तु' प्रत्यय होता है। जैसे—'सतिमा' इत्यादि।

समीक्षा 'मन्तु' प्रत्यय तथा अर्थ की दृष्टि से उभयत्र पूर्ण रूप से समानता ही है।। १६६।

१६७. 'मयट्' प्रत्यय (७५)

कातन्त्र आख्याताच्च तमादयः-प्रस्तुतवृत्तेर्मयट्, प्रकृतेर्विकारेऽवयवे वा भक्षाच्छादनयोः, एकस्वरान्नित्यम् (२/६/४०-१४, १५, १६)।

प्रकृति, उसके विकार, अवयव तथा एक स्वर वाले शब्द से 'मयट्' प्रत्यय होता है। जैसे—'अन्नमयम्, सुवर्णमयम्, वाङ्मयम्' इत्यादि।

कच्चायन तप्पकतिवचने मयो (२/८/२९)।

प्रकृतिवचनार्थ में 'मय' प्रत्यय होता है। जैसे—'रजतमयं, गोपमयं' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने तीन सूत्रों द्वारा पर्याप्त विस्तार दिखाया है, जबकि कच्चायनकार ने एक सूत्र द्वारा संक्षेप का आश्रय लिया है। इस प्रकार विस्तार की दृष्टि से कातन्त्र में उत्कर्ष तथा संक्षेप की दृष्टि से कच्चायन में अपेक्षाकृत अपकर्ष कहा जा सकता है।। १६७।

१६८. 'य' प्रत्यय (७६)

कातन्त्र स्वराद् यः (४/२/१०)।

स्वरान्त धातु से 'य' प्रत्यय होता है। जैसे—'चेयम्, जेयम्' इत्यादि।

कच्चायन ण्यो च (४/१/१८)।

भाव तथा कर्म अर्थ में सभी धातुओं से 'ण्य' प्रत्यय होता है। जैसे—'चेय्यं' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा व्याकरण की प्रक्रियाभेद के कारण यहाँ प्रत्ययभेद देखा जाता है, परन्तु फल या अर्थ आदि की दृष्टि से समानता ही है।। १६८।

१६९. 'यण्' प्रत्यय (तद्धित-७७)

कातन्त्र **यण् च प्रकीर्तितः** (२/६/१४)।

भाव अर्थ में 'यण्' प्रत्यय होता है। जैसे—'जाड्यम्, ब्राह्मण्यम्' इत्यादि।

कच्चायन **ण विसमादीहि** (२/८/१८)।

भाव अर्थ में 'ण' प्रत्यय होता है। जैसे—'वेसमं' इत्यादि।

समीक्षा प्रत्यय तथा शब्दरूपों में जो अन्तर दृष्ट है, वह भाषाभेद के कारण ही मानना चाहिए। अर्थ की दृष्टि से उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। १६९।

१७०. 'यण्' प्रत्यय (कृत्-७८)

कातन्त्र **सार्वधातुके यण्** (३/२/३१)।

भाववाच्य तथा कर्मवाच्य में सार्वधातुकसंज्ञक प्रत्ययों के परे रहते सभी धातुओं से 'यण्' प्रत्यय होता है। जैसे—भाववाच्य में-'भवता शय्यते'। कर्मवाच्य में-'ग्रामो गम्यते भवता' इत्यादि।

कच्चायन **भावकम्मेसु यो** (३/२/९)।

भाव तथा कर्म अर्थ में सभी धातुओं से 'य' प्रत्यय होता है। जैसे—'करीयते, ढीयते' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रीय प्रत्ययगत 'ण्' अनुबन्ध को छोड़कर अन्य प्रकार की उभयत्र प्रायः समानता ही है।। १७०।

१७१. 'यिन्' प्रत्यय (७९)

कातन्त्र **नाम्न आत्मेच्छायां यिन्** (३/२/५)।

'आत्मेच्छा' अर्थ में नाम-पद से 'यिन्' प्रत्यय होता है। जैसे—'पुत्रीयति' इत्यादि।

कच्चायन **ईयुपमाना च, नामम्हात्तिच्छत्थे** (३/२/५, ६)।

'आचार' तथा 'आत्मेच्छा' अर्थ में नाम से 'ईय' प्रत्यय होता है। जैसे—'छत्तीयति, चीवरीयति' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा 'यिन्' प्रत्यय करने पर कातन्त्रकार को 'पुत्रीयति' आदि शब्दों के सिद्ध्यर्थ इत्त्व तथा दीर्घ आदेश करना पड़ता है, जबकि कच्चायनकार द्वारा 'ईय' प्रत्यय करके 'छत्तीयति' आदि रूप निष्पन्न किये जाते हैं। इस प्रकार सूत्र और कार्य की दृष्टि से कच्चायनकार ने लाघव प्रदर्शित किया है।। १७१।

१७२/(१) 'यु' प्रत्यय (८०)

कातन्त्र नन्द्यादेर्युः (४/२/४९)।

'नन्द्' इत्यादि धातुओं से 'कर्ता' अर्थ में 'यु' प्रत्यय होता है। जैसे—'नन्दनः, शोभनः' इत्यादि।

कच्चायन नन्दादीहि यु, कत्तुकरणप्पदेसेसु च (४/१/२४, २५)।

'भाव, कर्म, कर्ता, करण' तथा 'अधिकरण' अर्थों में धातु से 'यु' प्रत्यय होता है। जैसे—'नन्दनं, करणं, ठानं' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र व्याकरण की अपेक्षा कच्चायन में जो अर्थभेद उपलब्ध होता है, वह अपनी भाषा में स्वीकृत किए जाने वाले अर्थों के अनुसार है। अतः यहाँ रूपभेद न होने पर भी अर्थनिर्देश में भिन्नता द्रष्टव्य है।। १७२/१।

१७२/(२) कातन्त्र क्रुधिमण्डिचलिशब्दार्थेभ्यो युः, रुचादेश्च व्यञ्जनादेः (४/४/३०, ३१)।

'क्रुध-रुच्' इत्यादि धातुओं से 'यु' प्रत्यय होता है। जैसे—'क्रोधनः, मण्डनः, रोचनः' इत्यादि।

कच्चायन सद्दकुधचलमण्डत्थरुचादीहि यु (४/१/१०)।

शब्द आदि अर्थ वाली तथा 'रुच' आदि धातुओं से 'ताच्छील्य' आदि अर्थों में 'यु' प्रत्यय होता है। जैसे—'भासनो, कम्पनो, थन्दनो, रोचनो' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ भाषाभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की दोनों ही व्याकरणों में प्रायः समानता ही है।। १७२/२।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१७२/(३) **कातन्त्र** **ईषिश्रन्थ्यासिवन्दिविदिकारितान्तेभ्यो युः, कीर्तीषोः क्तिश्च** (४/५/८५-८६)।

'ईष' आदि धातुओं से 'यु' प्रत्यय होता है। जैसे—'वन्दना, वेदना, एषणा, अन्वेषणा' इत्यादि।

कच्चायन **इत्थियमतियवो वा** (४/२/४)।

स्त्रीलिङ्ग में 'यु' प्रत्यय होता है। जैसे—'चेतना, वेदना' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ 'कातन्त्र-कच्चायन' दोनों ही व्याकरणों में पूर्णरूपेण समानता ही कही जा सकती है।। १७२/३।

१७३. 'र' प्रत्यय (८१)

कातन्त्र **दीपिकम्प्यजसिहिंसिकमिस्मिनमां रः** (४/४/५०)।

'दीप्' आदि सात धातुओं से 'र' प्रत्यय होता है। जैसे—'नम्रः, कम्रः, अजस्रम्, स्मेरः, हिंस्रः' इत्यादि।

कच्चायन **मध्वादितो रो** (२/८/२४)।

'तदस्स अत्थि' अर्थ में 'मधु' आदि शब्दों से 'रो' प्रत्यय होता है। जैसे—'मधुरो, कुञ्जरो' इत्यादि।

समीक्षा 'र' प्रत्यय की दृष्टि से उभयत्र समानता है, फिर भी कातन्त्रकार ने धातुओं से तथा कच्चायनकार ने इसे लिङ्गसंज्ञक शब्दों से विहित किया है। अतः उभयत्र प्रकृतिभेद देखा जाता है। इसके अतिरिक्त कातन्त्रकार ने ६ उणादि सूत्रों से भी 'रक्' प्रत्यय करके 'मदिरा, मन्दिरम्' आदि अनेक शब्द सिद्ध किये हैं—(द्रष्टव्यम्-कात० उ० २/१४-१७; ६/४-५)।। १७३।

१७४. 'रक्' प्रत्यय (८२)

कातन्त्र **स्फायितञ्चिवञ्चिशकिक्षिपिक्षुदिरुदिमदिमन्दिचन्द्युन्दीदिभ्यो रक्, सुसूधाञ्गृधिश्वितिवृतिछिदिमुदितृपिदम्भिशुभिभ्यश्च, तम्यमिजिनां दीर्घश्च, शूद्रादयः** (कात० उ० २/१४-१७)।

'स्फायि' आदि धातुओं से 'रक्' प्रत्यय होता है। जैसे—'चन्द्रः, रुद्रः, क्षुद्रः, छिद्रः, ताम्रः, शूद्रः' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन रन्जुदादीहि धदिद्दकिरा क्वचि जदलोपो च (४/६/३८)।

'रन्ज' आदि धातुओं से 'द, इद्द, इर' प्रत्यय होते हैं। जैसे—'इन्दो, छिद्दो, वजिरं' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने सभी धातुओं का पाठ चार सूत्रों में किया है, जबकि कच्चायनकार ने रन्ज्वादि गण के उल्लेख से अभीष्ट सभी धातुओं को स्वीकार किया है। सामान्यतया भाषाभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की तो उभयत्र समानता ही है।। १७४।

१७५. 'र्हि' प्रत्यय (८३)

कातन्त्र इदमो र्ह्यधुनादानीम् (२/६/३५)।

काल-अर्थ की विवक्षा में सप्तम्यन्त 'इदम्' शब्द से 'र्हि' प्रत्यय होता है। जैसे—'एतर्हि'।

कच्चायन इमस्मा रहिधुनादानि च (२/५/१३)।

कालवाची सप्तमी के अर्थ में 'इम' शब्द के बाद 'रहि' प्रत्यय होता है। जैसे—'एतरहि'।

समीक्षा भाषा-भेद के कारण प्रत्यय तथा शब्दरूपों में भेद देखा जाता है, तथापि पर्याप्त अंश में समानता भी देखी जाती है।। १७५।

१७६. 'वन्तु' प्रत्यय (८४)

कातन्त्र तदस्यास्तीति मन्तवन्त्वीन् (२/६/१६)।

'अस्यास्ति' इस अर्थ में प्रथमान्त शब्दों से 'वन्तु' प्रत्यय होता है। जैसे—'लक्ष्मीवान्' इत्यादि।

कच्चायन गुणादितो वन्तु (२/८/२५)।

'तदस्स अत्थि' अर्थ में 'वन्तु' प्रत्यय होता है। जैसे—'धनवा' इत्यादि।

समीक्षा 'वन्तु' प्रत्यय तथा 'अस्यास्ति' इस अर्थ की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। १७६।

१७७. 'विन्' प्रत्यय (८५)

कातन्त्र तदस्यास्तीति मन्तवन्त्वीन् (२/६/१५)।

'अस्यास्ति' इस अर्थ में प्रथमान्त शब्दों से 'विन्' प्रत्यय होता है। जैसे—'मायावी, यशस्वी, मेधावी' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन तदस्सात्थीति वी च, तपादितो सी (२/८/२१, २२)।

'तदस्स अत्थि' अर्थ में 'वी' तथा 'सी' प्रत्यय होते हैं। जैसे—'मेधावी, तपस्सी' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने 'विन्' प्रत्यय तथा कच्चायनकार ने 'वी' तथा 'सी' दो प्रत्यय किए हैं। यह योजना भाषागत शब्दभेद के कारण है। अतः प्रकृति और अर्थ आदि की दृष्टि से पर्याप्त समानता है।। १७७।

१७८. 'वुण्' प्रत्यय (कृत्-८६)

कातन्त्र वुण्तृचौ (४/२/४७)।

सभी धातुओं से 'कर्ता' अर्थ में 'वुण्' प्रत्यय होता है। जैसे—'कारकः, हारकः, धारकः' इत्यादि।

कच्चायन सब्बतो ण्वु त्वावी वा (४/१/४)।

कर्म अथवा अकर्म के आदि में होने पर सभी धातुओं से 'ण्वु' प्रत्यय होता है। जैसे—'रथकारको' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण होने वाले शब्दभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की तो प्रायः समानता ही है।। १७८।

१७९. 'वुण्' प्रत्यय (उपपद कृत्-८७)

कातन्त्र वुण्तुमौ क्रियायां क्रियार्थायाम् (४/४/६९)।

क्रियार्थक क्रिया के उपपद में रहने पर भविष्यत्कालार्थक धातु से 'वुण्' प्रत्यय होता है। जैसे—'पाचको व्रजति' इत्यादि।

कच्चायन किरियायं ण्वुतवो (४/६/२९)।

भविष्यत्काल में क्रिया के गम्यमान रहने पर 'ण्वु' प्रत्यय होता है। जैसे—'कारको वजति' इत्यादि।

समीक्षा भाषागत भेद को छोड़कर अन्य सभी प्रकार की उभयत्र समानता ही देखी जाती है।। १७९।

१८०/(१) 'शन्तृङ्' प्रत्यय (८८)

कातन्त्र वर्तमाने शन्तृङानशावप्रथमैकाधिकरणामन्त्रितयोः, लक्षणहेत्वोः क्रियायाः (४/४/२-३)।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

वर्तमान आदि अर्थों में 'शन्तृङ्' प्रत्यय होता है। जैसे—'पचन्तं छात्रम् पश्य, अर्जयन् वसति' इत्यादि।

कच्चायन वत्तमाने मानन्ता (४/२/१६)।

वर्तमानकाल में सभी धातुओं से 'अन्त' प्रत्यय होता है। जैसे—'गच्छन्तो' इत्यादि।

समीक्षा अर्थगत संक्षेप-विस्तार को छोड़कर सामान्यतया उभयत्र समानता ही है।। १८०/१।

१८०/(२) **कातन्त्र** **शन्त्रानौ स्यसंहितौ शेषे च (४/४/७२)।**

क्रियार्थक क्रिया तथा कर्म के उपपद में रहने पर भविष्यत्कालार्थक धातु से स्य-सहित 'शन्तृङ्' प्रत्यय होता है। जैसे—'करिष्यन् व्रजति' इत्यादि।

कच्चायन **सेसे स्सन्तुमानाना (४/६/३२)।**

कर्म के उपपद में रहने पर भविष्यत् काल में धातु से 'न्तु' प्रत्यय होता है। जैसे—'कम्मं करोन्तो' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के अतिरिक्त अन्य प्रकार की उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। १८०/२।

१८१. 'ष्ट्रन्' प्रत्यय (८९)

कातन्त्र **कर्मणि धेटः ष्ट्रन्, नीदाप्शसुयुयुजस्तुतुदसिसिचमिहपतदंशनहां करणे, हलसूकरयोः पुवः (४/४/६०, ६१, ६२)।**

'धेट्' धातु से 'कर्म' अर्थ में तथा 'नी' आदि धातुओं से 'करण' अर्थ में 'ष्ट्रन्' प्रत्यय होता है। जैसे—'धातृ, पत्रम्, पोत्रम्' इत्यादि।

कच्चायन छदादीहि तत्रण (४/६/३३)।

'नी-दा' आदि धातुओं से 'त्रण' प्रत्यय होता है। जैसे—'मन्त्रं, पवित्रं' इत्यादि।

समीक्षा दोनों व्याकरणों में अनुबन्धों की भिन्नता रहने पर भी प्रयोग में केवल 'त्र' ही देखा जाता है। इस प्रकार सामान्यतया तो उभयत्र समानता ही कही जायगी।। १८१।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१८२. 'सन्' प्रत्यय (९०)

कातन्त्र गुप्तिज्किद्भ्यः सन्, मान्वधदान्शान्भ्यो दीर्घश्चाभ्यासस्य, धातोर्वा तुमन्तादिच्छतिनैककर्तृकात् (३/२/२, ३, ४)।

'गुप्-तिज्-कित्, मान्-वध्-दान्-शान्' तथा इच्छार्थक धातु के बाद 'सन्' प्रत्यय होता है। जैसे—'जुगुप्सते, मीमांसते, चिकीर्षति' इत्यादि।

कच्चायन तिजगुपकितमानेहि खछसा वा, भुजघसहरसुपादीहि तुमिच्छत्थेसु च (३/२/२, ३)।

'तिज-गुप-कित-मान' धातुओं से स्वार्थ में, 'भुज-घस-हर-सु-पा' इन धातुओं से तुमर्थ तथा इच्छार्थ में 'स' प्रत्यय होता है। जैसे—'विमंसति, पिवासति' इत्यादि।

समीक्षा धातुओं में तथा प्रत्यय के स्वरूप में जो भेद दृष्ट है, वह वस्तुतः भाषाभेद के कारण है। सामान्यतया तो उभयत्र प्रायः समानता ही कही जा सकती है।। १८२।

१८३. 'ह' प्रत्यय (९१)

कातन्त्र इदमो हः, किमः (२/६/३०, ३१)।

सप्तम्यन्त 'इदम्-किम्' शब्दों से 'ह' प्रत्यय होता है। जैसे—'इह, कुह'।

कच्चायन हिंहं हिञ्चनं, इमस्सा हधा च (२/५/६, ८)।

सप्तमी के अर्थ में 'किं-इम' शब्दों से 'हिं-ह' प्रत्यय होते हैं। जैसे— 'इह, कुहिं'।

समीक्षा 'इदम्-इम' लिङ्गसंज्ञक शब्दों में भिन्नता के अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार की समानता है, जब कि 'किम्' शब्द से होने वाले 'ह-हं' प्रत्ययों में भेद है।। १८३।

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

९. विभक्तियों का समीक्षात्मक अध्ययन

१८४. 'अद्यतनी' विभक्ति का विधान (१)

कातन्त्र **भूतकरणवत्यश्च, मायोगेऽद्यतनी, मास्मयोगे ह्यस्तनी च** (३/१/१४, २२, २३)।

अतीत काल में, 'मा' तथा 'मास्म' शब्द के योग में धातु से अद्यतनी विभक्ति होती है। जैसे—'अकार्षीत्, मा कार्षीत्, मास्म कार्षीत्' इत्यादि।

कच्चायन **समीपेज्जतनी, मायोगे सब्बकाले च** (३/१/१४, १५)।

वर्तमान के समीप अतीतकाल में तथा 'मा' के योग में 'अज्जतनी' विभक्ति होती है। जैसे—'सो मग्गं आगमी, मा गमी' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार 'अद्यतनी-ह्यस्तनी', दोनों विभक्तियों का प्रयोग सामान्य भूतकाल में मानते हैं, परन्तु कच्चायनकार ने 'अद्यतनी' का विधान समीपवर्ती अतीत काल में किया है। इसे स्पष्टता का बोधक कहा जा सकता है। 'मा' के योग में दोनों का विधान समान है।। १८४।

१८५. 'क्रियातिपत्ति' विभक्ति का विधान (२)

कातन्त्र **भूतकरणवत्यश्च** (३/१/१४)।

अतीत काल में क्रियातिपत्तिसंज्ञक विभक्ति होती है। जैसे—'अकरिष्यत्, अभविष्यत्, अगमिष्यत्' इत्यादि।

कच्चायन **क्रियातिपन्नेतीते कालातिपत्ति** (३/१/१७)।

क्रियातिपन्नमात्र अतीत काल में 'कालातिपत्ति' विभक्ति होती है। जैसे—'सो चे तं यानं अलभिस्सा' इत्यादि।

समीक्षा संज्ञा-शब्दों में क्रिया और काल के भेद को छोड़कर अन्य सभी प्रकार की उभयत्र समानता है।। १८५।

१८६/(१) 'चतुर्थी' विभक्ति का विधान (३)

कातन्त्र **शेषाः कर्मकरणसम्प्रदानापादानस्वाम्याद्यधिकरणेषु, नमःस्वस्ति-स्वाहास्वधाऽलंवषड्योगे चतुर्थी** (२/४/१९, २६)।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

सम्प्रदान कारक में तथा 'नमः' आदि शब्दों के योग में लिङ्ग से चतुर्थी विभक्ति होती है। जैसे—'गुरवे गां ददाति, नमो देवेभ्यः' इत्यादि।

कच्चायन **सम्पदाने चतुत्थी, नमोयोगादिस्वपि च** (२/६/२३, २४)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'बुद्धस्स दानं देति, नमो करोहि नागस्स' इत्यादि।

समीक्षा संज्ञा, अर्थ तथा विभक्ति के विधान की दृष्टि से दोनों में पूर्ण समानता है। कातन्त्र में चार अन्य सूत्र भी चतुर्थी विभक्ति का विधान करते हैं—''गत्यर्थकर्मणि द्वितीयाचतुर्थ्यौ चेष्टायामनध्वनि, मन्यकर्मणि चानादरेऽप्राणिनि, तादर्थ्ये, तुमर्थाच्च भाववाचिनः'' (२/४/२४, २५, २७, २८)।। १८६/१।

१८६ (२) **कातन्त्र** **तुमर्थाच्च भाववाचिनः** (२/४/२८)।

भाववाचक-प्रत्ययान्त लिङ्ग से चतुर्थी विभक्ति होती है। जैसे—'पाकाय व्रजति, यागाय याति' इत्यादि।

कच्चायन **भाववाचिम्हि चतुत्थी** (४/६/३०)।

भाव के कथन में भविष्यत् काल के गम्यमान होने पर चतुत्थी विभक्ति होती है। जैसे—'भोगाय वजति' इत्यादि।

समीक्षा अर्थ, विधि तथा काल के उल्लेख में उभयत्र समानता होने पर भी कच्चायन का प्रकृत सूत्र वस्तुतः 'कारक कप्पो' में होना चाहिए।। १८६/२।

१८७. 'द्वितीया' विभक्ति का विधान (४)

कातन्त्र **शेषाः कर्मकरणसम्प्रदानापादानस्वाम्याद्यधिकरणेषु, द्वितीयैनेन, कर्मप्रवचनीयैश्च** (२/४/१९, २२, २३)।

कर्म कारक, 'एन'-प्रत्ययान्त शब्द के योग में तथा कर्मप्रवचनीय-संज्ञक शब्दों के योग में लिङ्ग से द्वितीया विभक्ति होती है। जैसे—'कटं करोति, उत्तरेण हिमवन्तम्, वृक्षमनु विद्योतते विद्युत्' इत्यादि।

कच्चायन **कम्मत्थे दुतिया, कालद्धानमच्चन्तसंयोगे, कम्मप्पवचनीययुत्ते, गतिबुद्धिभुजपठहरकरसयादीनं कारिते वा** (२/६/२७,२८,२९,३०)।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कर्म कारक में, 'काल-अध्व' के अत्यन्त संयोग में, कर्मप्रवचनीय के योग में तथा गति आदि धातुओं के प्रयोग में दुतिया विभक्ति होती है। जैसे—'कटं करोति, मासमधीते, पब्बजितमनुपब्बजिंसु, पाठयति' इत्यादि।

समीक्षा सामान्यतया कर्म संज्ञा, कर्मप्रवचनीय संज्ञा तथा द्वितीया-विधान की दृष्टि से दोनों में पर्याप्त समानता ही देखी जाती है। कातन्त्र में ये दो सूत्र भी द्रष्टव्य हैं—''गत्यर्थकर्मणि द्वितीयाचतुर्थ्यौ चेष्टायामनध्वनि, मन्यकर्मणि चानादरेऽप्राणिनि'' (२/४/२४, २५)।। १८७।

१८८. 'तृतीया' विभक्ति का विधान (५)

कातन्त्र **शेषाः कर्मकरणसम्प्रदानापादानस्वाम्याद्यधिकरणेषु, तृतीया सहयोगे, हेत्वर्थे, कुत्सितेऽङ्गे, विशेषणे, कर्तरि च** (२/४/१९,२९-३३)।

करण कारक में, 'सह' शब्द के योग में, हेत्वर्थ में, निन्दार्थबोधक अङ्गवाची शब्द से, विशेषणवाची शब्दों से तथा कर्तृसंज्ञक शब्दों से तृतीया विभक्ति होती है। जैसे—'परशुना छिनत्ति, पुत्रेण सहागतः पिता, धनेन कुलम्, अक्ष्णा काणः, जटाभिस्तापसः, देवदत्तेन हन्यते' इत्यादि।

कच्चायन **करणे ततिया, सहादियोगे च, कत्तरि च, हेत्वत्थे च, सत्तम्यत्थे च, येनङ्गविकारो, विसेसने च** (२/६/१६-२२)।

सूत्र-संख्या (२/६/१६-१९, २१, २२) का अर्थ पूर्ववत् है। जैसे—'कायेन कम्मं करोति, सहा पि गग्गेन सङ्घो उपोसथं करेय्य, अहिना दट्ठो नरो, धम्मेन वसति, हत्थेन कुणी, तपसा उत्तमो' इत्यादि। सूत्र संख्या २/६/२० के अनुसार सत्तमी के अर्थ में भी ततिया विभक्ति की जाती है। जैसे—'तेन समयेन' इत्यादि।

समीक्षा संज्ञा, अर्थ तथा विभक्ति के विधान की दृष्टि से दोनों में समानता ही है, केवल सप्तम्यर्थ में तृतीया का विधान ही कच्चायनकार का कातन्त्र से अतिरिक्त है।। १८८।

१८९/(१) 'पञ्चमी' विभक्ति का विधान (६)

कातन्त्र **शेषाः कर्मकरणसम्प्रदानापादानस्वाम्याद्यधिकरणेषु** (२/४/१९)।

अपादान कारक में पञ्चमी विभक्ति होती है। जैसे—'वृकाद् भयम्, ग्रामादायाति, धावतोऽश्वात् पतति' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **अपादाने पञ्चमी (२/६/२५)।**

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'भया मुच्चति सो नरो' इत्यादि।

समीक्षा संज्ञा और विभक्ति के विधान की दृष्टि से दोनों में पूर्ण समानता है, किन्तु कच्चायनकार द्वारा कारण अर्थ में सूत्र ''कारणत्थे च'' (२/६/२६) से पञ्चमी का विधान कातन्त्रकार से भिन्न कहा जाएगा। सामान्यतया हेत्वर्थ में प्रायः सभी विभक्तियों का विधान किया जाता है। (द्र०-निमित्तकारणहेतुषु सर्वासां प्रायदर्शनम्-काशिका २/३/२७-वा० सू०)।। १८९/१।

१८९/(२) **कातन्त्र** **पञ्चम्यनुमतौ, समर्थनाशिषोश्च (३/१/१८, १९)।**

'अनुमति, समर्थना' तथा 'आशीः' अर्थों में वर्त्तमान धातु से पञ्चमी विभक्ति होती है। जैसे—'कुरु दयाम्, जीवतु भवान्' इत्यादि।

कच्चायन **आणत्यासिट्ठेनुत्तकाले पञ्चमी (३/१/१०)।**

काल के अनुक्त रहने पर 'आज्ञा' तथा 'आशीष' के अर्थ में पञ्चमी विभक्ति होती है। 'करोतु कुसलं, सुखं ते होतु' इत्यादि।

समीक्षा अनुमति तथा आशीर्वाद अर्थों में पञ्चमी विभक्ति का विधान दोनों में समान रूप से किया गया है। कच्चायनकार ने 'समर्थना' अर्थ को छोड़ दिया है। कातन्त्रकार का विधि आदि अर्थों में भी पञ्चमी विभक्ति-विधान द्रष्टव्य है-''विध्यादिषु सप्तमी च''(३/१/२०)।।१८९/२।

१९०. 'परोक्षा' विभक्ति का विधान (७)

कातन्त्र **परोक्षा (३/१/१३)।**

भूतकाल में परोक्षासंज्ञक विभक्ति होती है। जैसे—'जघान कंसं किल वासुदेवः, रामो राजा बभूव ह' इत्यादि।

कच्चायन **अपच्चक्खे परोक्खातीते (३/१/१२)।**

अप्रत्यक्ष अतीतकाल में परोक्खा विभक्ति होती है। जैसे—'एवं किल पोराणा आहु' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायनकार ने 'अतीते' शब्द का सूत्र में साक्षात् पाठ किया है, जबकि कातन्त्रकार ने पूर्ववर्ती सूत्र से 'अतीते' शब्द की अनुवृत्ति की है। इस प्रकार उभयत्र पूर्ण समानता ही है।। १९०।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१९१. 'प्रथमा' विभक्ति का विधान (८)

कातन्त्र **प्रथमाविभक्तिर्लिङ्गार्थवचने, आमन्त्रणे च (२/४/१७, १८)।**

लिङ्गार्थवचन तथा आमन्त्रण अर्थ में प्रथमा विभक्ति होती है। जैसे—'वृक्षः, कुमारी, घृतम्, हे पुत्र' इत्यादि।

कच्चायन **लिङ्गत्थे पठमा, आलपने च (२/६/१४, १५)।**

लिङ्गार्थ के अभिधानमात्र में तथा आलपनार्थ के आधिक्य में पठमा विभक्ति होती है। जैसे—'पुरिसो, द्वे, हरे, हे सखे' इत्यादि।

समीक्षा लिङ्ग संज्ञा तथा प्रथमा-विधान की दृष्टि से उभयत्र पूर्ण समानता ही है, परन्तु जिस सम्बोधन के लिए कातन्त्र में 'आमन्त्रण' संज्ञा की गई है, तदर्थ कच्चायन में 'आलपन' संज्ञा की मान्यता है।। १९१।

१९२. 'भविष्यन्ती' विभक्ति का विधान (९)

कातन्त्र **भविष्यति भविष्यन्त्याशीःश्वस्तन्यः (३/१/१५)।**

भविष्यत् काल में 'भविष्यन्ती' विभक्ति होती है। जैसे—'कटं करिष्यति, प्रयागं गमिष्यति' इत्यादि।

कच्चायन **अनागते भविस्सन्ती (३/१/१६)।**

अनागत काल में 'भविस्सन्ती' विभक्ति होती है। जैसे—'गच्छिस्सति' इत्यादि।

समीक्षा शब्दभेद को छोड़कर अन्य सभी प्रकार की दोनों में समानता ही देखी जाती है।। १९२।

१९३. 'वर्त्तमाना' विभक्ति का विधान (१०)

कातन्त्र **सम्प्रति वर्तमाना, स्मेनातीते (३/१/११, १२)।**

वर्तमान काल में तथा 'स्म' शब्द के योग में अतीतकाल में भी 'वर्तमाना' विभक्ति होती है। जैसे—'यजते, दहति स्म त्रिपुरं हरः' इत्यादि।

कच्चायन **वत्तमाना पच्चुपन्ने (३/१/९)।**

प्रत्युत्पन्न काल में 'वत्तमाना' विभक्ति होती है। जैसे—'गच्छति' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा कातन्त्रीय प्रथम सूत्र की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। १९३।

१९४. 'षष्ठी' विभक्ति (११)

कातन्त्र **शेषाः कर्मकरणसम्प्रदानापादानस्वाम्याद्यधिकरणेषु, स्वामीश्वराधिपतिदायादसाक्षिप्रतिभूप्रसूतैः षष्ठी च, निर्धारणे च, षष्ठी हेतुप्रयोगे** (२/४/१९, ३५, ३६, ३७)।

सम्बन्ध में तथा 'स्वामी-ईश्वर' आदि शब्दों के योग में 'षष्ठी' विभक्ति होती है। यथा—'देवदत्तस्य स्वामी, गवामीश्वरः, पुरुषाणां क्षत्रियः शूरः, अन्नस्य हेतोर्वसति' इत्यादि।

कच्चायन **सामिस्मिं छट्ठी, सामिस्सराधिपतिदायादसक्खिपतिभूपसूतकुसलेहि च, निद्धारणे च, छट्ठी च** (२/६/३१. ३३, ३४, ३८)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'तस्स भिक्खुनो मुखं, गोणानं कुसलो, कण्हा गावीनं सम्पन्नखीरतमा, कुसलो त्वं रथस्स अङ्गपच्चङ्गानं' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद से शब्दभेद होने पर भी प्रक्रिया में उभयत्र समानता है। कातन्त्र में एतदर्थ कुछ अन्य सूत्र भी द्रष्टव्य हैं-(२/४/३८, ३९, ४०, ४१)।। १९४।

$\frac{१९५}{(१)}$ 'सप्तमी' विभक्ति का विधान (१२)

कातन्त्र **शेषाः कर्मकरणसम्प्रदानापादानस्वाम्याद्यधिकरणेषु, कालभावयोः सप्तमी, स्वामीश्वराधिपतिदायादसाक्षिप्रतिभूप्रसूतैः षष्ठी च, निर्धारणे च** (२/४/१९, ३४, ३५, ३६)।

अधिकरण कारक, काल-भाव-निर्धारण अर्थों में तथा 'स्वामी' आदि शब्दों के योग में 'सप्तमी' विभक्ति होती है। जैसे—'अधीती व्याकरणे, शरदि पुष्प्यन्ति सप्तच्छदाः, गोषु स्वामी, गोषु कृष्णा सम्पन्नक्षीरा' इत्यादि।

कच्चायन **ओकासे सत्तमी, सामिस्सराधिपतिदायादसक्खिपतिभूपसूतकुसलेहि च, निद्धारणे च, कालभावेसु च** (२/६/३२, ३३, ३४, ४३)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'गम्भीरे ओदकण्णवे, गोणेसु अधिपति, पथिकेसु धावन्तो सीघतमो, पुब्बण्ह समये गतो' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा प्रक्रिया की दृष्टि से उभयत्र समानता ही परिलक्षित होती है। कच्चायन में अन्य तीन सूत्र भी द्रष्टव्य हैं-(२/६/४०-४२)।। १९५/१।

१९५/(२) **कातन्त्र** **विध्यादिषु सप्तमी च** (३/१/२०)।

विधि, निमन्त्रण आदि अर्थों में विद्यमान धातु से 'सप्तमी' विभक्ति का विधान होता है। जैसे—'कटं कुर्यात्, माणवकम् अध्यापयेत्' इत्यादि।

कच्चायन **अनुमतिपरिकप्पत्थेसु सत्तमी** (३/१/११)।

अनुमति तथा परिकल्प अर्थ में 'सत्तमी' विभक्ति होती है। जैसे—'त्वं गच्छेय्यासि, किमहं करेय्यामि' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार विधि, निमन्त्रण, आमन्त्रण, अध्ययन, सम्प्रश्न तथा प्रार्थना इत्यादि ६ से भी अधिक अर्थों में तथा कच्चायनकार अनुमति-परिकल्प इन दो अर्थों में 'सप्तमी' विभक्ति करते हैं। इस प्रकार अर्थभेद होने पर भी विधान की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। १९५/२।

१९६. 'सामान्य' विभक्ति का विधान (१३)

कातन्त्र **तस्मात् परा विभक्तयः** (२/१/२)।

लिङ्गसंज्ञक शब्दों से पर में 'सि-औ-जस्' आदि विभक्तियाँ होती हैं। जैसे 'वृक्षः' आदि शब्दों को सिद्ध करने के लिए 'वृक्ष' आदि लिङ्ग से 'सि-औ-जस्' आदि विभक्तियाँ करनी पड़ती हैं। प्रथमा विभक्ति=सि, औ, जस्। द्वितीया=अम्, औ, शस्। तृतीया=टा, भ्याम्, भिस्। चतुर्थी=ङे, भ्याम्, भ्यस्। पञ्चमी=ङसि, भ्याम्, भ्यस्। षष्ठी=ङस्, ओस्, आम्। सप्तमी=ङि, ओस्, सुप्।

कच्चायन **ततो च विभत्तियो, सियो अंयो नाहि सनं स्माहि सनं स्मिंसु** (२/१/३, ४)।

सूत्र में निर्दिष्ट लिङ्गसंज्ञक शब्दों से विभक्तियाँ लगाई जाती हैं। जैसे—'ब्रह्मा' आदि लिङ्ग-शब्दों से 'सि' आदि विभक्तियों का विधान इस प्रकार है—पठमा=सि, यो। दुतिया=अं, यो। ततिया=ना, हि। चतुत्थी=स, नं। पञ्चमी=स्मा, हि। छट्ठी=स, नं। सत्तमी=स्मिं, सु।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा विभक्ति इसलिए कहते हैं कि इससे धातु-लिङ्ग तथा पद के संख्या-कर्मादि अर्थों का विभाजन होता है। 'गोपथब्राह्मण' आदि प्राचीन ग्रन्थों में इसका प्रयोग देखा जाता है। कातन्त्र में 'विभक्ति' की कोई परिभाषा सूत्र में उपलब्ध नहीं होती है, परन्तु उसके प्रयोग की व्यवस्था की गई है।। १९६।

१९७. 'ह्यस्तनी' विभक्ति का विधान (१४)

कातन्त्र **भूतकरणवत्यश्च, मास्मयोगे ह्यस्तनी च** (३/१/१४, २३)।

अतीत काल में एवं 'मास्म' शब्द के योग में धातु से 'ह्यस्तनी' विभक्ति होती है। जैसे—'अकरोत्, मास्म करोत्' इत्यादि।

कच्चायन **हीयोप्पभुति पच्चक्खे हीयत्तनी, मायोगे सब्बकाले च** (३/१/१३, १५)।

प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष अतीत काल में तथा 'मा' के योग में 'हीयत्तनी' विभक्ति होती है। जैसे—'सो मग्गं अगमा, मा गमा' इत्यादि।

समीक्षा अतीत काल में 'ह्यस्तनी' का विधान उभयत्र समान है, परन्तु कातन्त्रकार 'मा' के योग में अद्यतनी (मायोगेऽद्यतनी-३/१/२२) तथा 'मास्म' के योग में 'अद्यतनी-ह्यस्तनी' दोनों का विधान करते हैं, जबकि कच्चायनकार ने 'मा' के योग में ही दोनों विभक्तियाँ की हैं। यह विधान भाषा में प्रयुक्त शब्दों के आधार पर किया गया है। अतः किसी में भी उत्कर्षापकर्ष नहीं कहा जा सकता।। १९७।

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१०. विकरणों का समीक्षात्मक अध्ययन

१९८. 'अन्' विकरण (१)

कातन्त्र अन् विकरण: कर्तरि (३/२/३२)।

सार्वधातुकसंज्ञक प्रत्यय के पर में रहने पर धातु के बाद में 'अन्' प्रत्यय होता है और उसकी 'विकरण' संज्ञा भी होती है। जैसे—'भवति, भवन्, भवतु, गच्छति, अगच्छत' इत्यादि।

कच्चायन भूवादितो अ (३/२/१४)।

कर्ता अर्थ में 'भू' आदि धातुगण से 'अ' प्रत्यय होता है। जैसे—'पठति, जयति' इत्यादि।

समीक्षा प्रकृति और प्रत्यय के बीच में होने वाले प्रत्यय को विकरण कहते हैं—'प्रकृतिप्रत्ययमध्यपतितत्वं विकरणत्वम्'। कच्चायनकार ने मध्यवर्ती 'अ' प्रत्यय तो किया है, परन्तु उसकी विकरण संज्ञा नहीं की है। इसके अतिरिक्त तो उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। १९८।

१९९. 'उ' विकरण (२)

कातन्त्र तनादेरु: (३/२/३७)।

सार्वधातुकसंज्ञक प्रत्यय के परे रहते तनादिगणपठित धातुओं से विकरणसंज्ञक 'उ' प्रत्यय होता है। जैसे—'तनोति, सनोति' इत्यादि। 'तनुते' आदि शब्दरूपों में 'उ' विकरण को गुण आदेश नहीं होता है।

कच्चायन तनादितो ओयिरा (३/२/२०)।

तनादिगणपठित धातुओं से 'कर्त्ता' अर्थ में 'ओ' प्रत्यय होता है। जैसे—'तनोति, करोति' इत्यादि। 'तनुते, कुरुते' इत्यादि प्रयोगों के सिद्ध्यर्थ "उत्तमोकारो" (३/४/३०) सूत्र द्वारा ओकार को 'उकार' आदेश करना पड़ता है।

समीक्षा यहाँ कच्चायनकार के 'ओ' प्रत्यय-विधान में कथञ्चित् लाघव कहा जा सकता है, क्योंकि 'तनोति' आदि शब्दरूपों को सिद्ध करने के लिए कच्चायनकार को 'ओ' आदेश के अतिरिक्त अन्य कोई

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कार्य नहीं करना पड़ता है, जबकि कातन्त्रकार को 'उ' के स्थान में गुणादेश भी करना पड़ता है। परन्तु 'तनुते, कुरुते' आदि की सिद्धि के लिए कच्चायनकार 'ओ' को 'उ' आदेश करते हैं। इस समीक्षात्मक दृष्टि से उभयत्र समानता ही समझनी चाहिए।। १९९।

२००. 'न' विकरण (३)

कातन्त्र **स्वराद् रुधादेः परो नशब्दः** (३/२/३६)।

सार्वधातुकसंज्ञक प्रत्यय के परे रहते रुधादिगण-पठित धातुओं से 'न' प्रत्यय होता है और उसकी 'विकरण' संज्ञा भी होती है। जैसे—'रुणद्धि, भिनत्ति, छिनत्ति' इत्यादि।

कच्चायन **रुधादितो निग्गहीतपुब्बञ्च** (३/२/१५)।

रुधादिगण-पठित धातुओं से 'अ' प्रत्यय होता है तथा उससे पूर्व में निग्गहीत का आगम भी होता है। जैसे—'रुन्धति, छिन्दति' इत्यादि।

समीक्षा भाषागत भेद के कारण कच्चायनकार को 'अ' प्रत्यय तथा नकारागम दोनों कार्य करने पड़ते हैं, जबकि कातन्त्र के अनुसार 'न' विकरण से ही कार्य सम्पन्न हो जाता है। इस दृष्टि से प्रायः समानता ही कही जा सकती है।। २००।

२०१. 'ना' विकरण (४)

कातन्त्र **ना क्र्यादेः** (३/२/३८)।

सार्वधातुकसंज्ञक प्रत्यय के परे रहते क्र्यादिगण-पठित धातुओं से विकरणसंज्ञक 'न' प्रत्यय होता है। जैसे—'क्रीणाति, प्रीणाति' इत्यादि।

कच्चायन **कियादितो ना** (३/२/१८)।

कियादिगण-पठित धातुओं से कर्त्ता अर्थ में 'ना' प्रत्यय होता है। जैसे—'किणाति, पुनाति' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ उभयत्र पूर्ण समानता है, परन्तु कच्चायनकार ने इसके अतिरिक्त गहादि धातुओं से 'ण्हा' प्रत्यय भी किया है-द्र०, सूत्र सं० ३/२/१९।। २०१।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२०२. 'नु' विकरण (५)

कातन्त्र नुः ष्वादेः (३/२/३४)।

सार्वधातुकसंज्ञक प्रत्यय के परे रहते ष्वादिगणपठित धातुओं से 'नु' प्रत्यय होता है तथा उसकी 'विकरण' संज्ञा भी होती है। जैसे—'सुनोति, चिनोति, वृणोति, वृणुते' इत्यादि।

कच्चायन स्वादितो णुणा उणा च (३/२/१७)।

स्वादिगण-पठित धातुओं से कर्त्ता अर्थ में 'णु' प्रत्यय होता है। जैसे—'अभिसुणोति, आवुणोति' इत्यादि।

समीक्षा भाषागत भेद के कारण कातन्त्रकार ने 'नु' प्रत्यय तथा कच्चायनकार ने 'णु' प्रत्यय किया है। अन्य प्रकार की तो समानता ही कही जा सकती है।। २०२।

२०३. 'यन्' विकरण (६)

कातन्त्र दिवादेर्यन् (३/२/३३)।

सार्वधातुकसंज्ञक प्रत्यय के परे रहते दिवादिगण-पठित धातुओं से 'यन्' प्रत्यय होता है तथा उसकी 'विकरण' संज्ञा भी होती है। जैसे—'दीव्यति, सीव्यति, आद्रियते' इत्यादि।

कच्चायन दिवादितो यो (३/२/१६)।

दिवादिगणपठित धातुओं से कर्त्ता अर्थ में 'य' प्रत्यय होता है। जैसे—'दिब्बति, सिब्बति' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रीय 'न्' अनुबन्ध को छोड़कर विकरण में उभयत्र समानता है, केवल भाषाभेद के कारण शब्दरूप भिन्न-भिन्न होते हैं।। २०३।

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

११. आदेशों का समीक्षात्मक अध्ययन

२०४/(१) 'अ' आदेश (१)

कातन्त्र तेषु त्वेतदकारताम् (२/६/२७)।

विभक्तिसंज्ञक तकारादि के परे रहते 'एतद्' शब्द को 'अ' आदेश होता है। जैसे—'अधुना, अतः, अत्र'।

कच्चायन सब्बस्सेतस्साकारो वा, त्रे निच्चं, ए तोथेसु वा, अ धुनाम्हि च (२/४/२१, २२, २३, २५)।

'तो, थ, त्र' प्रत्ययों की परता में 'एत' शब्द को तथा धुना प्रत्यय की परता में 'इम' शब्द को 'अ' आदेश होता है। जैसे—'अतो, अत्थ, अत्र, अधुना'।

समीक्षा आदेश में उभयत्र प्रायः समानता होने पर भी शब्दरूपों में भिन्नता भाषाभेद के कारण है।। २०४/१।

२०४/(२) **कातन्त्र** ऋवर्णस्याकारः, भवतेरः (३/३/१६, २२)।

अभ्याससंज्ञक ऋवर्ण तथा अभ्याससंज्ञक 'भू' धातु-घटित उकार को अकारादेश होता है। जैसे—'चक्रतुः, बभूव' इत्यादि।

कच्चायन अन्तस्सिवण्णाकारो वा (३/३/८)।

अभ्यास के अन्तिम स्वर को अकारादेश होता है। जैसे—'बभूव, दधाति' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायन के वर्णसमाम्नाय में 'ऋ' वर्ण का पाठ न होने से उसके स्थान में अकारादेश करने के लिए सूत्र नहीं बनाया गया है। केवल धातुपठित उकार-आकार के स्थान में अकारादेश किया गया है। इस प्रकार आंशिक ही समानता कही जा सकती है।। २०४/२।

२०५. 'अक' आदेश (२)

कातन्त्र युवुझामनाकान्ताः (४/६/५४)।

कृत्प्रत्ययघटित 'वु' के स्थान में 'अक' आदेश होता है। जैसे—'कारकम्, धारकम्' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन (१) अनका युण्वूनं (४/५/१६)।

'ण्वु' प्रत्यय के स्थान में 'अक' आदेश होता है। जैसे—'नलकारको' इत्यादि।

कच्चायन (२) नुदादीहि युण्वूनमनाननाकाननका सकारितेहि च (४/६/१८)।

'ण्वु' के स्थान में 'अक' तथा 'आननक' आदेश होते हैं। जैसे—'जनको, सञ्ञाननको' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार 'वुण्' प्रत्यय करते हैं और कच्चायनकार 'ण्वु'। यहाँ केवल अन्त तथा आदि में की गई णकारानुबन्ध की योजना से कोई अन्तर नहीं आता। अतः उभयत्र समानता है।। २०५।

२०६. 'अत्' आदेश (३)

कातन्त्र अद् व्यञ्जनेऽनक् (२/३/३५)।

व्यञ्जनादि विभक्ति के परे रहते 'इदम्' शब्द के स्थान में 'अत्' आदेश होता है। जैसे—'आभ्याम्' इत्यादि।

कच्चायन इमसद्दस्स च (२/३/१७)।

'स, स्मा, स्मिं, सं' तथा 'सा' की परता में 'इम' शब्द को अकारादेश होता है। जैसे—'अस्स, स्मा' इत्यादि।

समीक्षा उभयत्र प्रायः समानता ही देखी जाती है।। २०६।

२०७. 'अन' आदेश (४)

कातन्त्र टौसोरनः (२/३/३६)।

'टा' तथा 'ओस्' प्रत्यय के परे रहते 'इदम्' शब्द को 'अन' आदेश होता है। जैसे—'अनेन, अनयोः' इत्यादि।

कच्चायन अनिमि नाम्हि च (२/३/११)।

'ना' विभक्ति की परता में सम्पूर्ण 'इम' शब्द को 'अन' आदेश होता है। जैसे—'अनेन' इत्यादि।

समीक्षा तृतीया-एकवचन में पूर्ण समानता है। पालि में द्विवचन न होने के कारण 'ओस्' प्रत्यय की परता में यह आदेश नहीं किया गया है।। २०७।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२०८. 'अनुस्वार' आदेश (५)

कातन्त्र मनोरनुस्वारो धुटि (२/४/४४)।

धुट्संज्ञक वर्णों के परवर्ती होने पर पद के मध्य में रहने वाले 'म्' तथा 'न्' के स्थान में अनुस्वार आदेश होता है। जैसे—'शान्तिः, उञ्छिता, युञ्जौ' इत्यादि।

कच्चायन (१) नु निग्गहीतं पदन्ते (४/१/१४)।

पदान्त में विद्यमान 'नु' आगम को निग्गहीत आदेश हो जाता है। जैसे—'अरिन्दमो, पभंङ्करो' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायनकार ने अनुस्वार की निग्गहीत संज्ञा की है। अतः इस संज्ञाभेद के रहने पर भी फल की दृष्टि से प्रायः उभयत्र समानता ही है।

कच्चायन (२) निग्गहीतं संयोगादि नो (४/५/१)।

संयोग में आदिभूत नकार को निग्गहीत होता है। जैसे—'रङ्गो, सङ्गो' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र में 'म्-न्' को तथा कच्चायन में केवल 'न' को ही अनुस्वार आदेश किया जाता है। सम्भवतः यह भाषा की प्रकृति के अनुसार है अतः सामान्यतया समानता ही कही जा सकती है।। २०८।

२०९. 'अन' आदेश (६)

कातन्त्र युवुझामनाकान्ताः (४/६/५४)।

कृत्प्रत्यय-घटित 'यु' के स्थान में 'अन' आदेश होता है। जैसे—'गमनम्, नन्दनः' इत्यादि।

कच्चायन (१) अनका युण्वूनं (४/५/१६)।

'यु' के स्थान में 'अन' आदेश होता है। जैसे—'नन्दनं' इत्यादि।

समीक्षा प्रत्यय, आदेश तथा शब्दरूप आदि की दृष्टि से उभयत्र प्रायः समानता ही कही जा सकती है।

कच्चायन (२) नुदादीहि युण्वूनमनानननाकाननका सकारितेहि च (४/६/१८)।

'यु' प्रत्यय के स्थान में 'अन' तथा 'आनन' आदेश होते हैं। जैसे—'समणो, काननं' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा कच्चायनकार ने भाषा के प्रयोगानुसार 'अन' आदेश के अतिरिक्त 'आनन' आदेश भी किया है। इस भाषागत भिन्नता के अतिरिक्त अन्य प्रकार की उभयत्र समानता है।। २०९।

२१०. 'अम्' आदेश (७)

कातन्त्र अव्ययीभावादकारान्ताद् विभक्तीनाममपञ्चम्याः, वा तृतीया-सप्तम्योः (२/४/१, २)।

अकारान्त अव्ययीभाव समास से परवर्ती विभक्ति के स्थान में नित्य 'अम्' आदेश तथा तृतीया-सप्तमी विभक्तियों के स्थान में वैकल्पिक 'अम्' आदेश होता है। जैसे—'उपकुम्भम्, उपकुम्भेन, उपकुम्भे' इत्यादि।

कच्चायन अं विभत्तीनमकारन्तब्ययीभावा (२/७/२६)।

अकारान्त अव्ययीभाव समास के बाद आने वाली विभक्तियों का कहीं-कहीं 'अं' आदेश हो जाता है। जैसे—'अधिचित्तं, अधिचित्तस्स' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने नित्य और विकल्प विधान के लिए दो सूत्र पृथक् रूप में बनाये हैं, परन्तु कच्चायनकार ने यह आदेश प्रायः सर्वत्र विकल्प रूप से माना है। यह भेद संस्कृत-पालि भाषा की विशिष्टता के कारण है। अतः किसी में उत्कर्ष-अपकर्ष नहीं कहा जा सकता।। २१०।

२११. 'अय्' आदेश (८)

कातन्त्र ए अय् (१/२/१२)।

असवर्ण स्वर के परे रहते पूर्ववर्ती एकार के स्थान में 'अय्' आदेश होता है। जैसे—'नयति, अग्नये' इत्यादि।

कच्चायन ए अय (३/४/३३)।

स्वर की परता में धात्वन्त एकार को 'अय' आदेश होता है। जैसे—'नयति, जयति' इत्यादि।

समीक्षा स्वरान्त तथा व्यञ्जनान्त आदेश के भेद को छोड़कर शेष उभयत्र पूर्ण समानता है।। २११।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२१२. 'अयम्' आदेश (९)

कातन्त्र इदमियमयम्पुंसि (२/३/३४)।

'सि' विभक्ति के परे रहते 'इदम्' शब्द को पुंल्लिङ्ग में 'अयम्' आदेश होता है। जैसे—'अयं, पुमान्'।

कच्चायन अनपुंसकस्सायं सिम्हि (२/३/१२)।

'सि' विभक्ति की परता में नपुंसकलिङ्ग को छोड़कर सम्पूर्ण 'इम' शब्द के स्थान में 'अयं' आदेश होता है। जैसे—'अयं पुरिसो'।

समीक्षा पुंल्लिङ्ग में उभयत्र समानता है, जबकि स्त्रीलिङ्ग में कातन्त्रकार 'इयम्' आदेश तथा कच्चायनकार अयं आदेश करते हैं।। २१२।

२१३. 'अर्' आदेश (१०)

कातन्त्र अर् ङौ (२/१/६६)।

'ङि' प्रत्यय के परे रहते ऋकारान्त लिङ्ग के अन्त्यावयव 'ऋ' को 'अर्' आदेश होता है। जैसे—'पितरि, मातरि' इत्यादि।

कच्चायन अञ्ञेस्वारत्तं, ततो स्मिमि, आरो रस्समिकारे (२/३/४०, ४६, ४८)।

'सि' विभक्ति से भिन्न विभक्तियों की परता में 'पितु' आदि शब्दों के अन्तिम वर्ण को 'आर' तथा स्मिं विभक्ति को इकारादेश होता है। 'आर' आदेश होने पर 'स्मिं' विभक्ति को इकारादेश होने पर उस 'आर' को ह्रस्व हो जाता है। जैसे—'मातरि, पितरि' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र में साक्षात् 'आर' आदेश का विधान है, जबकि कच्चायनकार ने पहले 'आ' आदेश करके उसको ह्रस्व किया है।। २१३।

२१४. 'अव्' आदेश (११)

कातन्त्र ओ अव् (१/२/१४)।

असवर्ण स्वर के परे रहते पूर्ववर्ती 'ओ' के स्थान में 'अव्' आदेश होता है। जैसे—'लवणम्, भवति' इत्यादि।

कच्चायन ओ अव सरे (३/४/३२)।

स्वर की परता में धात्वन्त ओकार का विकल्प से 'अव' आदेश होता है। जैसे—'चवति, भवति' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा यहाँ भाषागत भेद के अतिरिक्त आदेश और स्थानी आदि में प्रायः उभयत्र समानता ही देखी जाती है।। २१४।

२१५. 'अहम्' आदेश (१२)

कातन्त्र **त्वमहं सौ सविभक्त्योः** (२/३/१०)।

'सि' प्रत्यय के परे रहते 'अस्मद्' शब्द के स्थान में 'सि' विभक्ति-सहित 'अहम्' आदेश होता है। जैसे—अहम्।

कच्चायन **त्वमहं सिम्हि च** (२/२/२१)।

'अम्ह' शब्द के स्थान में 'अहं' आदेश होता है। जैसे—अहं।

समीक्षा यहाँ कातन्त्र और कच्चायन की प्रक्रिया में पूर्ण समानता ही देखी जाती है।। २१५।

२१६/(१) 'आ' आदेश (१३)

कातन्त्र **आ सौ सिलोपश्च** (२/१/६४)।

'सि' प्रत्यय के परे रहते ऋकारान्त लिङ्गवर्ती अन्तिम वर्ण को 'आ' आदेश होता है। जैसे—'पिता, माता' इत्यादि।

कच्चायन **सत्थुपितादीनमा सिस्मिं सिलोपो च** (२/३/३९)।

'सि' विभक्ति की परता में 'पितु' आदि शब्दों के अन्तिम वर्ण को 'आ' आदेश होता है। जैसे—'पिता, माता' इत्यादि।

समीक्षा मूलतः शब्दभेद होने पर भी आदेश में उभयत्र पूर्णतया एकरूपता है।। २१६/१।

२१६/(२) **कातन्त्र** **आकारो महतः कार्यस्तुल्याधिकरणे पदे** (२/५/२१)।

तुल्याधिकरण पद के परे रहते 'महन्त्' शब्द के अन्तिम वर्ण 'त्' के स्थान में आकारादेश होता है। जैसे—'महाद्देवः, महावक्त्रः' इत्यादि।

कच्चायन **महतं महा तुल्याधिकरणे पदे** (२/७/१५)।

तुल्य अधिकरण वाले पद की परता में 'महन्त' शब्द का 'महा' आदेश हो जाता है। जैसे—'महादेवी, महाफलं' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा यद्यपि कातन्त्र की अपेक्षा कच्चायन के आदेश-विधान में भिन्नता है, तथापि परिणाम की दृष्टि से आदेश में कोई भिन्नता उपस्थित न होने के कारण उभयत्र समानता है।। २१६/२।

२१६ (३) **कातन्त्र** धुटि खनिसनिजनाम् (४/१/७१)।

धुडादि प्रत्यय के परे रहते 'खन्-सन्-जन्' धातुओं के नकार को आकारादेश होता है। जैसे—'जात:, जाति:' इत्यादि।

कच्चायन जनादीनमा तिम्हि च (४/३/१५)।

'त' तथा 'ति' प्रत्ययों की परता में 'जन' आदि धातुओं के अन्तिम व्यञ्जन का आत्व होता है। जैसे—'जातो, जाति' इत्यादि।

समीक्षा व्याकरणभेद से सूत्र निर्देश में आंशिक भिन्नता होने पर भी आदेश तथा निमित्त आदि की दृष्टि से उभयत्र पूर्ण समानता है।। २१६/३।

२१७. 'आकम्' आदेश (१४)

कातन्त्र सामाकम् (२/३/१६)।

'युष्मद्-अष्मद्' शब्दों से परवर्ती 'आम्' प्रत्यय (सु-आगम सहित-साम) को 'आकम्' आदेश होता है। जैसे—'युष्माकम्, अस्माकम्'।

कच्चायन तुम्हाम्हेहि नमाकं (२/३/१)- द्र०-वा ख्वप्पठमो (२/३/२)।

'तुम्ह' तथा 'अम्ह' शब्दों के पश्चात् आने वाली 'नं' विभक्ति का 'आकं' आदेश हो जाता है। जैसे—'तुम्हाकं, अम्हाकं'।

समीक्षा व्याकरणभेद से षष्ठी-बहुवचन में 'आम् (साम्)-नं' का भेद भाषाभेद के कारण देखा जाता है।। २१७।

२१८. 'आयि' आदेश (१५)

कातन्त्र आयिरिच्यादन्तानाम् (३/६/२०)।

'इच्' प्रत्यय के परे रहते आकारान्त धातुओं में आकार को 'आयि' आदेश होता है। जैसे—'अदायि, अस्थायि' इत्यादि।

कच्चायन आकारन्तानमायो (४/४/४)।

णानुबन्ध वाले प्रत्ययों की परता में आकारान्त धातुओं के अन्तिम स्वर को 'आय' आदेश होता है। जैसे—'दानदायी, नगरयायी' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा कातन्त्रीय आदेशगत इकारानुबन्ध को छोड़कर शेष उभयत्र समानता है।। २१८।

२१९ (१) 'आय्' आदेश (१६)

कातन्त्र घुटि त्वै, ऐ आय् (२/२/२४; १/२/१३)।

सखि-शब्दस्थ अन्तिम वर्ण के स्थान में 'ऐ' आदेश तथा उसको 'आय्' आदेश होता है। जैसे—'सखायौ, सखायः' इत्यादि।

कच्चायन सखातो चायो नो (२/३/३१)।

'सख' शब्द के पश्चात् आने वाली 'यो' विभक्ति को 'आयो' आदेश होता है। जैसे—'सखायो' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद से शब्दभेद होने पर भी शब्दरूप और आदेश में प्रायः समानता ही देखी जाती है। 'सखायौ' इत्यादि के सिद्ध्यर्थ कातन्त्रकार को पहले 'ऐ' आदेश भी करना पड़ता है। इस प्रकार कच्चायन में लाघव कहा जा सकता है।। २१९/१।

२१९ (२) **कातन्त्र** ऐ आय् (१/२/१३)।

असवर्ण स्वर के परे रहते पूर्ववर्ती 'ऐ' के स्थान में 'आय्' आदेश होता है। जैसे—'नायकः' इत्यादि।

कच्चायन ते आवाया कारिते (३/४/३४)।

कारित-प्रत्ययों की परता में 'ए' को 'आय' आदेश होता है। जैसे—'नायेति, गायति' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायन व्याकरण के वर्णसमाम्नाय में 'ऐ' वर्ण की मान्यता नहीं है। अतः उसमें 'ए' को ही 'आय' आदेश किया गया है, जबकि कातन्त्रीय वर्णसमाम्नाय में 'ऐ' वर्ण के पठित होने से उसके ही 'आय्' आदेश का विधान है। इस प्रकार वर्णमालाओं में भेद होने पर भी आदेश में उभयत्र समानता ही है।। २१९/२।

२२०. 'आर्' आदेश (१७)

कातन्त्र धातोस्तृशब्दस्याऽऽर् (२/१/६८)।

घुट्संज्ञक वर्णों के परे रहते धातुविहित 'तृ' प्रत्यय में विद्यमान ऋकार को 'आर्' आदेश होता है। जैसे—'कर्तारौ, कर्तारः' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन अञ्ञेस्वारत्तं (२/३/४०)।

'सि' से भिन्न विभक्तियों की परता में 'पितु' आदि शब्दों के अन्तिम वर्ण को 'आर' आदेश होता है। जैसे—'सत्थारं' इत्यादि।

समीक्षा शब्दभेद होने पर भी आदेश में प्रायः उभयत्र समानता ही देखी जाती है।। २२०।

२२१. 'आव्' आदेश (१८)

कातन्त्र औ आव् (१/२/१५)।

असवर्ण स्वर के परे रहते पूर्ववर्ती 'औ' को 'आव्' आदेश होता है। जैसे—'गावौ, गावः' इत्यादि।

कच्चायन ते आवाया कारिते (३/४/३४)।

कारितसंज्ञक प्रत्ययों की परता में 'ओ' को 'आव' आदेश होता है। जैसे—'लावेति' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायन व्याकरण के वर्णसमाम्नाय में 'औ' वर्ण नहीं पढ़ा गया है। अतः 'ओ' के स्थान में 'आव' आदेश का विधान है।। २२१।

२२२. 'आव्' आदेश (१९)

कातन्त्र औ आव्, गोरौ घुटि (१/२/१५; २/२/३३)।

असवर्ण स्वर के परे रहते 'औ' को 'आव्' आदेश होता है तथा परवर्ती वर्ण का लोप नहीं होता। जैसे—'गावौ, गावः' इत्यादि।

कच्चायन गाव से, योसु च, अवम्हि च (२/१/२२-२४)।

'स, यो, अं' विभक्तियों के परे रहते गो-शब्दगत ओकार के स्थान में 'आव' आदेश होता है। जैसे—'गावस्स, गावो गच्छन्ति, गावं' इत्यादि।

समीक्षा पालिभाषा में औकार के न होने से ओकार के स्थान में ही आवा-आदेश किया गया है, परन्तु संस्कृत में ''गोरौ घुटि'' (कात० २/२/३३) से 'ओ' को 'औ' आदेश करने के बाद उस औकार के स्थान में 'आव्' आदेश किया जाता है। कच्चायन में अन्य सूत्र भी द्रष्टव्य हैं-(२/१/२५-२६)।। २२२।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२२३ (१) 'इ' आदेश (२०)

कातन्त्र जस् सर्व इः, अल्पादेर्वा, द्वन्द्वस्थाच्च (२/१/३०, ३१, ३२)।

सर्वनामसंज्ञक अकारान्त लिङ्ग, अल्पादिगण-पठित शब्द तथा द्वन्द्व समास में विद्यमान सर्वनामसंज्ञक लिङ्ग से परवर्ती 'जस्' प्रत्यय को 'इ' आदेश होता है। जैसे—'सर्वे, अल्पे, कतरकतमे' इत्यादि।

कच्चायन सब्बनामकारते पठमो, द्वन्दट्ठा वा (२/३/४, ५)।

सभी सर्वनामसंज्ञक अकारान्त शब्दों के पश्चात् आने वाली तथा द्वन्द्व समास में भी प्रथमा-बहुवचन 'यो' विभक्ति को 'ए' आदेश होता है। जैसे—'ते, कतरकतमे' इत्यादि।

समीक्षा उभयत्र प्रायः समानता देखी जाती है, लेकिन कातन्त्रीय अल्पादिगण का कच्चायन में उल्लेख नहीं है।। २२३/१।

२२३ (२) **कातन्त्र** औरिम् (२/१/४१)।

स्त्रीलिङ्ग आकारान्त शब्दों से परवर्ती 'औ' प्रत्यय के स्थान में 'इ' आदेश होता है। जैसे—'श्रद्धे, माले, द्वे' इत्यादि।

कच्चायन योसु द्विन्नं द्वे च (२/२/१३)।

'यो' विभक्तियों की परता में स्त्रीलिङ्ग-पुंल्लिङ्ग-नपुंसकलिङ्ग में विद्यमान संख्यावाचक 'द्वि' शब्द को विभक्तिसहित 'द्वे' आदेश होता है। जैसे—'द्वे धम्मा, द्वे रूपानि।

समीक्षा व्याकरणभेद से कच्चायन की प्रक्रिया में जो भेद है, उसमें सूत्र-कार्य-संख्या की दृष्टि से लाघव सन्निहित है।। २२३/२।

२२३ (३) **कातन्त्र** भृञ्ह्राङ्माङामित्, अर्त्तिपिपर्त्त्योश्च, सन्यवर्णस्य ,

(३/३/२४, २५, २६)।

'भृञ्-हाङ्-माङ्-ऋ-पृ' धातुगत अभ्याससंज्ञक अकार को तथा सन्-प्रत्यय के परे रहते अभ्याससंज्ञक अकार को इकारादेश होता है। जैसे—'बिभर्ति, पिपर्ति, पिपासति' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन अन्तस्सिवण्णाकारो वा (३/३/८)।

अभ्यास के अन्तिम स्वर को इवर्णादेश होता है। जैसे—'पिवासति, वीमंसति' इत्यादि।

समीक्षा भिन्न-भिन्न भाषागत शब्दरूपों में भेद के कारण कच्चायनकार ने इवर्णादेश तथा कातन्त्रकार ने इकारादेश किया है। इस प्रकार आंशिक ही समानता कही जा सकती है।। २२३/३।

२२३ (४) **कातन्त्र** दामागायतिपिबतिस्थास्यतिजहातीनामीकारो व्यञ्जनादौ (३/४/२९)।

व्यञ्जनादि प्रत्यय के परे रहते 'दा-मा' इत्यादि धातुओं के आकार को ईकारादेश होता है। जैसे—'दीयते, गीयते' इत्यादि।

कच्चायन यम्हि दाधामाठाहापामहमथादीनमी (३/४/२१)।

य-प्रत्यय की परता में 'दा धा' आदि धातुओं के आकार को ईकारादेश होता है। जैसे—'हीयति, पीयति' इत्यादि।

समीक्षा आदेश आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है।। २२३/४।

२२३ (५) **कातन्त्र** तिष्ठतेरित् (३/५/४७)।

चण्-परवर्ती इण्-प्रत्यय के परे रहते 'स्थाप्' धातु की उपधा (आ) को ईकारादेश होता है। जैसे—'अतिष्ठिपत्' इत्यादि।

कच्चायन ठापानमिई च (४/३/१८)।

'त-ति' प्रत्ययों की परता में 'ठा' धातु के अन्तिम आकार को इकारादेश होता है। जैसे—'ठितो, ठिति' इत्यादि।

समीक्षा आदेश तथा निमित्त की दृष्टि से उभयत्र प्रायः समानता ही देखी जाती है।। २२३/५।

२२३ (६) **कातन्त्र** आत्खनोरिच्च (४/२/१२)।

आकारान्त धातु तथा 'खन्' धातु के अन्तिम वर्ण को इकारादेश होता है। जैसे—'देयम्, खेयम्' इत्यादि।

कच्चायन वदमदगमयुजगरहाकारादीहि ज्जम्मग्गय्हेय्या गारो वा (४/१/२१)।

आकारान्त धातुओं से 'ण्य' प्रत्यय के परे रहते अन्तिम वर्ण को 'एय्य' आदेश होता है। जैसे—'देय्यं, पेय्यं' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा कातन्त्रकार के अनुसार दा-धातु से 'य' प्रत्यय, आकार को इकारादेश तथा ''नाम्यन्तयोर्धातुविकरणयोर्गुण:'' (३/५/१) से गुणादेश करने पर 'देयम्' आदि रूप सिद्ध होते हैं, जबकि कच्चायनकार के अनुसार 'दा' धातु से 'ण्य' प्रत्यय होने पर धातु के अन्तिम वर्ण तथा 'ण्य' प्रत्यय के स्थान में 'एय्य' आदेश होकर ही 'देय्यं' की सिद्धि हो जाती है। इस प्रकार कच्चायन में लाघव कहा जा सकता है।। २२३/६।

२२४. 'इत्' आदेश (२१)

कातन्त्र रथोरेतेत् (२/६/२६)।

रेफ तथा थकार के परवर्ती होने पर 'इदम्' शब्द को 'इत्' आदेश होता है। जैसे—'इत्थम्' इत्यादि।

कच्चायन इमस्सित्थन्दानिहतोधेसु च (२/४/२४)।

'थं-दानि' आदि प्रत्ययों की परता में 'इम' शब्द को 'इ' आदेश होता है। जैसे—'इत्थं, इदानि' इत्यादि।

समीक्षा आदेश में उभयत्र प्राय: समानता होने पर भी शब्दरूप में भाषाभेद के अनुसार भिन्नता देखी जाती है।। २२४।

२२५. 'इन' आदेश (२२)

कातन्त्र इन टा (२/१/२३)।

अकारान्त लिङ्ग से परवर्ती 'टा' प्रत्यय के स्थान में 'इन' आदेश होता है। जैसे—'वृक्षेण, रामेण, बालकेन' इत्यादि।

कच्चायन अतो नेन (२/१/५२)।

अकारान्त प्रातिपादिकों के बाद आने वाली 'ना' विभक्ति को 'एन' आदेश होता है। जैसे—'सब्बेन' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र और कच्चायन में 'इन' और 'एन' आदेश भिन्न रूप में किए गये हैं, जिससे रूपसिद्धि के लिए कातन्त्रकार को गुण आदेश तथा कच्चायनकार को पूर्ववर्ती अकार का लोप करना पड़ता है।। २२५।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२२६ (१) 'इय्' आदेश (२३)

कातन्त्र ईदूतोरियुवौ स्वरे (२/२/५६-द्र०, २/२/५७, ५८)।

विभक्तिगत स्वर के परे रहते धातुस्थ ईकार को 'इय्' आदेश होता है। जैसे—'नियः' इत्यादि।

कच्चायन झलानमियुवा सरे वा (२/१/१९)।

इसके अनुसार स्वर के परे रहते 'झ' संज्ञक 'इ' वर्ण के स्थान में 'इय' आदेश होता है। जैसे—'अग्गियागारे' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने केवल दीर्घ ईकार के स्थान में 'इय्' आदेश किया है, जबकि कच्चायन में ह्रस्व-दीर्घ दोनों के लिए विधान प्राप्त होता है। इस प्रकार कातन्त्रीय विधान में लाघव कहा जाएगा।। २२६/१।

२२६ (२) **कातन्त्र** वाम्शसोः (२/२/६२)।

'अम्-शस्' प्रत्ययों के परे रहते 'स्त्री' शब्द को वैकल्पि धातुवद्भाव होता है। जैसे—'स्त्रियम्, स्त्रियः' इत्यादि।

कच्चायन अं यमीतो पसञ्ञातो (२/४/१३)।

स्त्रीवाचक इकारान्त शब्दों से आने वाली 'अं' विभक्ति को विकल्प से 'यं' आदेश होता है। जैसे—'इत्थियं' इत्यादि।

समीक्षा शब्दरूपों में प्रायः समानता होने पर भी आदेशों में आंशिक भेद देखा जाता है। धातुवद्भाव से 'इय्' आदेश प्रवृत्त होता है।। २२६/२।

२२७. 'इर्' आदेश (२४)

कातन्त्र ॠदन्तस्येरगुणे (३/५/४२)।

धातुघटित दीर्घ ॠकार के स्थान में 'इर्' आदेश होता है। जैसे—'जीर्यते, कीर्यते, गीर्यते' इत्यादि।

कच्चायन जरमरानं जीरजिय्यमिय्या वा (३/४/२४)।

जर-धातु को 'जीर' आदेश होता है। जैसे—'जीरति, जीरन्ति' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा अपनी-अपनी भाषा की प्रकृति के अनुसार दोनों विधान उचित कहे जा सकते हैं। अतः यहाँ किसी में लाघव-गौरव की कल्पना नहीं की जा सकती।। २२७।

२२८. 'ई' आदेश (२५)

कातन्त्र दामागायतिपिबतिस्थास्यतिजहातीनामीकारो व्यञ्जनादौ (३/४/२८)।

गुणनिषेधक आदि प्रत्ययों के परे रहते पा-इत्यादि धातु-घटित आकार के स्थान में ईकारादेश होता है। जैसे—'पीयते, दीयते' इत्यादि।

कच्चायन ठापानमिई च (४/३/१८)।

'त-ति' प्रत्ययों की परता में पा-धातु के अन्तिम आकार को ईकारादेश होता है। जैसे—'पीति' इत्यादि।

समीक्षा आदेश तथा निमित्त की दृष्टि से उभयत्र प्रायः समानता ही कही जा सकती है।। २२९।

२२९/(१) 'उ' आदेश (२६)

कातन्त्र अघोषवतोश्च (१/५/८)।

अकार तथा घोषवान् वर्णों के मध्य में स्थित विसर्ग (:) को उकारादेश होता है। जैसे—'को धावति, मनोमयम्' इत्यादि।

कच्चायन एतेसमो लोपे (२/३/२३)।

विभक्तिलोप होने पर मनोगणादि के अन्तिम स्वर का ओकारादेश होता है। जैसे—'मनोमयं, अयोमयं' इत्यादि।

समीक्षा शब्दरूपों में समानता होने पर भी आदेशभेद देखा जाता है। इससे कच्चायन में गुण करने की आवश्यकता नहीं रहती, जबकि कातन्त्र में 'उ' आदेश के बाद गुण भी करना पड़ता है।। २२९/१।

२२९/(२) **कातन्त्र** ऋदन्तात् सपूर्वः (२/१/६३)।

ऋकारान्त लिङ्ग से परवर्ती 'ङसि-ङस्' प्रत्यय-घटित अकार को पूर्ववर्ती स्वर के साथ उकारादेश होता है। जैसे—'पितुः, मातुः' इत्यादि।

कच्चायन उ सस्मिं सलोपो च (२/३/४३)।

'स' विभक्ति की परता में 'पितु' आदि के अन्तिम वर्ण को विकल्प से 'उ' होता है। जैसे—'पितु, मातु' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा शब्द रूपों में तथा स्थानी में भेद होने पर भी उकारादेश में उभयत्र समानता है।। २२९/२।

२२९/(३) **कातन्त्र** भवतो वादेरुत्वं संबुद्धौ (२/२/६३)।

संबुद्धिसंज्ञक 'सि' प्रत्यय के परे रहते 'भवन्त्' शब्द के अन्तर्गत 'वन्तु'-भाग को उकारादेश विकल्प से होता है। जैसे—'हे भोः, हे भवन्'।

कच्चायन भो गे तु (२/४/३३)।

ग-संज्ञक 'सि' विभक्ति (आलपन) की परता में सम्पूर्ण 'भवन्त' शब्द का 'भो' आदेश हो जाता है। जैसे—'भो पुरिस, भो राज'।

समीक्षा यहाँ प्रक्रिया-सारल्य की दृष्टि से कच्चायन के निर्देश में उत्कर्ष माना जा सकता है। इसकी अपेक्षा कातन्त्रीय प्रक्रिया में कार्याधिक्य होने के कारण गौरव सिद्ध होता है।। २२९/३।

२२९/(४) **कातन्त्र** अस्योकारः सार्वधातुकेऽगुणे (३/४/३९)।

सार्वधातुकसंज्ञक अगुण प्रत्यय के परे रहते धातु के अन्तर्गत आने वाले अकार को उकारादेश होता है। जैसे—'कुरुते, कुरुषे' इत्यादि।

कच्चायन करस्सकारो च (३/४/३१)।

'कर' धातु के अकार को विकल्प से उकारादेश होता है। जैसे—'कुरुते, कुब्बते' इत्यादि।

समीक्षा स्थानी तथा आदेश इत्यादि में उभयत्र पूर्ण समानता ही कही जा सकती है।। २२९/४।

२३०. 'उव्' आदेश (२७)

कातन्त्र ईदूतोरियुवौ स्वरे (२/२/५६-६०, २/२/५७, ५८)।

विभक्तिगत स्वर के परे रहते धातुस्थ ऊकार को 'उव्' आदेश होता है। जैसे—'लुवः, पुवः' इत्यादि।

कच्चायन झलानमियुवा सरे वा (२/१/१९)।

स्वर के परे रहते 'ल' संज्ञक उवर्ण के स्थान में 'उव' आदेश होता है। जैसे—'पुथुवासने' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा कातन्त्रकार ने केवल दीर्घ ऊकार के स्थान में 'उव्' आदेश किया है, जबकि कच्चायन में दोनों उकार (उवर्ण) के लिए विधान प्राप्त होता है। अभिधान की दृष्टि से इस प्रकार कातन्त्रीय निर्देश में लाघव कहा जायगा।। २३०।

२३१. 'ऊ' आदेश (२८)

कातन्त्र **गोहेरूदुपधायाः, दुषेः कारिते (३/४/६३, ६४)।**

'गुह्' तथा 'दुष्' धातु की उपधा में वर्तमान उकार का ऊकारादेश होता है। जैसे—'गूहति, दूषयति' इत्यादि।

कच्चायन **गुहदुसानं दीघं (३/४/५)।**

कारित प्रत्यय की परता में 'गुह' तथा 'दुस' धातुओं के स्वर को दीर्घ हो जाता है। जैसे—'गूहयति, दूसयति' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र में ऊकारादेश तथा कच्चायन में दीर्घ निर्देश होने पर भी फल की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। २३१।

२३२/(१) 'ए' आदेश (२९)

कातन्त्र **धुटि बहुत्वे त्वे (२/१/१९)।**

बहुवचन में धुडादि वर्ण वाली विभक्ति के परे रहते लिङ्ग के अन्तिम अकार को एकारादेश होता है। जैसे—'एषु, वृक्षेभ्यः' इत्यादि।

कच्चायन **सब्बस्सिमस्से वा (२/३/१०)।**

सु, नं तथा 'हि' विभक्तियों की परता में सम्पूर्ण 'इम' शब्द के स्थान में 'ए' आदेश विकल्प से होता है। जैसे—'एसु' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने एकारादेश नित्य रूप में किया है, जबकि कच्चायन में यह आदेश विकल्प से होता है। पक्ष में 'इम' शब्द के अन्त में विद्यमान अकार को ''सुहिस्वकारो ए'' (२/१/५०) सूत्र से एकारादेश होने पर 'इमेसु' आदि शब्दरूप बनते हैं।। २३२/१।

२३२/(२) **कातन्त्र** **धुटि बहुत्वे त्वे, ओसि च (२/१/१९-२०)।**

बहुवचन तथा 'ओस्' प्रत्यय के परे रहते लिङ्गान्तवर्ती अकार को एकारादेश होता है। जैसे—'एषु, वृक्षयोः' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **सुहिस्वकारो ए, सब्बनामानं नम्हि च** (२/१/५०-५१)।

सु-हि तथा 'नं' विभक्तियों की परता में पूर्ववर्ती अकार को एकारादेश होता है। जैसे—'सब्बेसु, सब्बेहि, सब्बेसानं' इत्यादि।

समीक्षा पालि भाषा में द्विवचन न होने से उसमें एकारादेश का विधान नहीं किया गया है। 'नं' विभक्ति बहुवचन है, अतः उसका समावेश किया जा सकता था, लेकिन उसमें सर्वनाम शब्दों का ग्रहण अभीष्ट है, अतः सूत्र पृथक् बनाया गया है।। २३२/२।

२३२ (३) **कातन्त्र** **संबुद्धौ च** (२/१/३९)।

संबुद्धि-संज्ञक प्रत्यय के परे रहते श्रद्धासंज्ञक आकार को एकारादेश होता है। जैसे—'हे श्रद्धे, हे माले' इत्यादि।

कच्चायन **घते च** (२/१/६३)।

स्त्रीवाचक आकारान्त शब्दों के बाद आने वाली ग-संज्ञक विभक्ति (सि) को एकारादेश होता है। जैसे—'भोति, अय्ये' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र में लिङ्गसंज्ञक शब्द के अन्तिम आकार को एकारादेश किये जाने के कारण 'सि' प्रत्यय का लोप करना पड़ता है, जबकि कच्चायन में 'सि' को 'ए' आदेश तथा लिङ्गसंज्ञक शब्द में आकार का लोप करना आवश्यक हो जाता है।। २३२/३।

२३२ (४) **कातन्त्र** **इरेदुरोज्जसि, सम्बुद्धौ च** (२/१/५५-५६)।

लिङ्ग के अन्त्यावयव इकार को एकार आदेश होता है, जस् प्रत्यय तथा सम्बोधन के परे रहते। जैसे—'अग्नयः, हरयः, हे अग्ने!, हे हरे!' इत्यादि।

कच्चायन **योस्वकतरस्सोज्झो** (२/१/४५)।

'यो' विभक्ति के परे रहते पूर्ववर्ती इवर्ण को अकारादेश होता है। जैसे—'अग्गयो' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र और कच्चायन के शब्दरूपों में प्रायः समानता है तथा विभक्ति से पूर्व अकार का उच्चारण होता है—'अग्नयः-अग्गयो' इत्यादि। परन्तु कातन्त्र में यह समानता एकार को अयादेश होने के बाद ही होती है।। २३२/४।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२३२/(५) **कातन्त्र** एत्वमस्थानिनि (२/३/१७)।

स्यादि प्रत्यय के परे रहते 'युष्मद्-अष्मद्' शब्दों में अन्त्य वर्ण को एकारादेश होता है। जैसे—'त्वयि, मयि' इत्यादि।

कच्चायन तुम्हाम्हानं तयि मयि, तयातयीनं तकारो त्वत्तं वा (२/२/२०; ३/५०)।

'स्मिं' विभक्ति की परता में विभक्ति-सहित सम्पूर्ण 'तुम्ह' तथा 'अम्ह' शब्दों के क्रमशः 'तयि' तथा 'मयि' आदेश होते हैं। 'तया' तथा 'तयि' के तकार को विकल्प से 'त्व' आदेश भी होता है। जैसे—'त्वयि-तयि, मयि'।

समीक्षा सूत्र तथा कार्य-संख्या की दृष्टि से कच्चायन का लाघव द्रष्टव्य है।। २३२/५।

२३२/(६) **कातन्त्र** एत्वमस्थानिनि (२/३/१७)।

'त्वया-मया' तथा 'त्वयि-मयि' आदि शब्दों को सिद्ध करने के लिए कातन्त्र में युष्मद् को त्वद् तथा अस्मद् को मद् आदेश किए जाते हैं। दकार-लोप करने के बाद अन्तिम अकार के स्थान में एकारादेश होता है। जैसे—'त्वया, मया'।

कच्चायन नाम्हि तया मया (२/२/२६)।

'ना' विभक्ति की परता में विभक्ति-सहित सम्पूर्ण तुम्ह को 'तया' तथा अम्ह को 'मया' आदेश होता है।

समीक्षा रूपभेद तथा प्रक्रियाभेद अपने-अपने व्याकरणों के अनुसार है। ''एत्वमस्थानिनि'' (२/३/१७) सूत्र को ज्ञापक मानकर कातन्त्र में 'त्वद्-मद्' आदेश किये जाते हैं।। २३२/६।

२३३. 'एत' आदेश (३०)

कातन्त्र रथोरेतेत् (२/६/२६)।

रेफ तथा थकार के परवर्ती होने पर 'इदम्' को 'एत' आदेश होता है। जैसे—'एतर्हि'।

कच्चायन एत रहिम्हि (२/४/२६)।

'रहि' प्रत्यय की परता में 'इम' को 'एत' आदेश होता है। जैसे—'एतरहि'।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा आदेश में समानता होने पर भी प्रत्ययभेद तथा रूपभेद भाषा की विशेषता के कारण हैं।। २३३।

२३४ (१) **'ओ' आदेश (३१)**

कातन्त्र **इरेदुरोज्जसि, सम्बुद्धौ च** (२/१/५५, ५६)।

लिङ्ग के अन्त्यावयव उकार को ओकार आदेश होता है। 'जस्' प्रत्यय तथा सम्बोधन विभक्ति के परे रहते। जैसे—'पटव:, हे पटो!' इत्यादि।

कच्चायन **वेवोसु लो च** (२/१/४६)।

'वे-वो' प्रत्ययों के परे रहते पूर्ववर्ती ल-संज्ञक वर्ण (उवर्ण) को अकारादेश होता है। जैसे—'भिक्खवे, भिक्खवो' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्र और कच्चायन के शब्दरूपों में प्राय: समानता है तथा विभक्ति से पूर्व अकार का उच्चारण होता है—'भिक्षव:-भिक्खवो, भिक्षवे-भिक्खवे' इत्यादि। एतदर्थ कच्चायन में अकारादेश का साक्षात् विधान किया गया है, जबकि कातन्त्रकार को ओकार के स्थान में 'अव्' आदेश करना पड़ता है।। २३४/१।

२३४ (२) **कातन्त्र** **अणि वचेरोद् उपधाया:** (३/६/९४)।

'अण्' प्रत्यय के परे रहते 'वच्' धातु की उपधा को ओकारादेश होता है। जैसे—'अवोचत्' इत्यादि।

कच्चायन **वचस्सज्जतनिस्मिमकारो ओ** (३/३/२०)।

अद्यतनी विभक्ति की परता में 'वच' धातुगत अकार को ओकारादेश होता है। जैसे—'अवोच' इत्यादि।

समीक्षा भाषागत भेद के कारण शब्दरूपों में भिन्नता होने पर भी आदेश आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। २३४/२।

२३५ (१) **'क' आदेश (३२)**

कातन्त्र **किम् क:** (२/३/३०)।

विभक्ति के परे रहते 'किम्' शब्द को 'क' आदेश होता है। जैसे—'क:, कदा, कथम्'।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन सेसेसु च (२/४/१९)।

शेष विभक्तियों तथा प्रत्ययों की परता में 'किं' शब्द को 'क' आदेश होता है। जैसे—'को, कथं'।

समीक्षा आदेश में उभयत्र समानता होने पर भी शब्दरूपों में भेद भाषा के अनुसार कहा जा सकता है।। २३५/१।

२३५ (२) **कातन्त्र** चजोः कगौ धुड्घानुबन्धयो (४/६/५६)।

धुट् तथा घानुबन्ध वाले प्रत्यय के परे रहते चकार को ककारादेश होता है। जैसे—'पाकः' इत्यादि।

कच्चायन कगा चजानं (४/५/१७)।

'ण' अनुबन्ध वाले प्रत्ययों की परता में धात्वन्त चकार को ककारादेश होता है। जैसे—'पाको' इत्यादि।

समीक्षा निमित्त के अतिरिक्त अन्य प्रकार की उभयत्र समानता है।। २३५/२।

२३५ (३) **कातन्त्र** चजोः कगौ धुड्घानुबन्धयो (४/६/५६)।

धुट्-संज्ञक वर्ण के तथा घानुबन्ध वाले प्रत्यय के परे रहते चकार के स्थान में ककारादेश होता है। जैसे—'भोक्ता, पाकः' इत्यादि।

कच्चायन सचजानं कगा णानुबन्धे (४/६/१७)।

'ण' अनुबन्ध वाले प्रत्यय की परता में धातु के अन्त में स्थित चकार को ककारादेश होता है। जैसे—'पाको, विवेको' इत्यादि।

समीक्षा निमित्तभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की उभयत्र समानता ही देखी जाती है।। २३५/३।

२३६. 'कत्' आदेश (३३)

कातन्त्र कोः कत् (२/५/२४)।

तत्पुरुष समास में 'कु' को 'कत्' आदेश होता है। जैसे—'कदश्वः, कदन्नम्' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **कदं कुस्स** (२/७/२०)।

तत्पुरुष समास में 'कु' का 'कद' आदेश हो जाता है। जैसे—'कदन्नं' इत्यादि।

समीक्षा पालि भाषा के अनुसार कच्चायन में 'कद' आदेश अकारान्त होता है, परन्तु कातन्त्र में यह हलन्त आदेश है। इस भाषागत भेद के अतिरिक्त अन्य समानता है।। २३६।

२३७. 'का' आदेश (३४)

कातन्त्र **का त्वीषदर्थेऽक्षे, पुरुषे तु विभाषया** (२/५/२५, २६)।

तत्पुरुष समास में ईषदर्थक 'कु' शब्द को तथा पुरुष शब्द के परवर्ती होने पर कुत्सितार्थक 'कु' शब्द को 'का' आदेश होता है। जैसे—'कालवणम्, कातन्त्रम्, कापुरुषः' इत्यादि।

कच्चायन **काप्पत्थेसु च** (२/७/२१)।

अल्पार्थ व्यक्त करने में 'कु' को 'का' आदेश होता है। जैसे—'कालवणं' इत्यादि।

समीक्षा ईषदर्थ में 'का' आदेश-विधान की दृष्टि से उभयत्र समानता है, परन्तु कातन्त्रकार ने 'कापुरुषः-कुपुरुषः' इन वैकल्पिक रूपों को सिद्ध करने के लिए साक्षात् सूत्र बनाया है, जबकि कच्चायनकार ने वृत्ति में इस अंश की पूर्ति की है।। २३७।

२३८. 'कु' आदेश (३५)

कातन्त्र **तहोः कुः** (२/६/३३)।

तकार और हकार के परवर्ती होने पर 'किम्' शब्द का 'कु' आदेश होता है। जैसे—'कुतः, कुत्र, कुह'।

कच्चायन **कु हिंहंसु च; त्रतोथेसु च** (२/४/१८, २०)।

'हिं, हं, त्र, तो' तथा थ के परे रहते किं को 'कु' आदेश होता है। जैसे—'कुहिं, कुहं, कुत्र, कुतो, कुत्थ'।

समीक्षा 'कु' आदेश में उभयत्र समानता होने पर भी शब्दरूपों में भेद भाषा की विशेषता के कारण कहा जा सकता है।। २३८।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२३९. 'क्व' आदेश (३६)

कातन्त्र **किमः, अत् क्व च (२/६/३१-३२)।**

सप्तम्यन्त 'किम' शब्द से अत् प्रत्यय तथा किम् को क्व आदेश होता है। जैसे—'क्व'।

कच्चायन **किस्स क वे च (२/४/१७)।**

'व' प्रत्यय के बाद में रहने पर किं को 'क' आदेश होता है। जैसे—'क्व'।

समीक्षा कातन्त्र और कच्चायन में जो आदेश और प्रत्यय में भेद है, वह उनके व्याकरण की प्रक्रिया के अनुसार है, परिणाम की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। २३९।

२४०/(१) 'ग' आदेश (३७)

कातन्त्र **चजोः कगौ धुड्घानुबन्धयोः (४/६/५६)।**

घुट्संज्ञक वर्ण के तथा घानुबन्ध प्रत्ययों के परे रहते जकार को गकारादेश होता है। जैसे—'भोगः, भुग्नः' इत्यादि।

कच्चायन **कगा चजानं (४/५/१७)।**

'ण' अनुबन्ध वाले प्रत्ययों की परता में धात्वन्त-घटित जकार को गकारादेश होता है। जैसे—'भोगो' इत्यादि।

समीक्षा पूर्ववत्।। २४०/१।

२४०/(२) **कातन्त्र** **चजोः कगौ धुड्घानुबन्धयोः (४/६/५६)।**

धुट्संज्ञक वर्ण के तथा घानुबन्ध वाले प्रत्यय के परे रहते जकार को गकारादेश होता है। जैसे—'भोगः, भुग्नः' इत्यादि।

कच्चायन **सचजानं कगा णानुबन्धे (४/६/१७)।**

'ण' अनुबन्ध वाले प्रत्यय की परता में धात्वन्त-स्थित जकार को गकारादेश होता है। जैसे—'योगो, रङ्गो' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ पर भी निमित्तभेद को छोड़कर अन्य अंशों में समानता ही देखी जाती है।। २४०/२।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२४१. घकारादेश (३८)

कातन्त्र हस्य हन्तेर्घिरिनिचोः (३/६/२८)।

इन् तथा इच् प्रत्यय के परे रहते 'हन्' धातु-घटित हकार को घकारादेश होता है। जैसे—'घातः, घातयति' इत्यादि।

कच्चायन हनस्स घातो (४/४/२)।

'ण' प्रत्यय की परता में सम्पूर्ण हन धातु के स्थान में 'घात' आदेश होता है। जैसे—'उपघातो, गोघातको' इत्यादि।

समीक्षा वस्तुतः कच्चायनकारीय एक 'घात' आदेश में लाघव है, परन्तु कातन्त्र में 'घ्-त्' दो आदेश पृथक् सूत्रों द्वारा करने पड़ते हैं।। २४१।

२४२. 'च्' आदेश (३९)

कातन्त्र द्वितीयचतुर्थयोः प्रथमतृतीयौ, गमिष्यमां छः (३/३/११; ६/६९)।

अभ्याससंज्ञक शब्दरूप में स्थित छकार के स्थान में चकार आदेश होता है। जैसे—'चिच्छेद' इत्यादि।

कच्चायन ब्यञ्जनन्तस्स चो छप्पच्चयेसु च (३/३/१५)।

छ-प्रत्यय की परता में धातु के अन्तिम व्यञ्जन को 'च' आदेश हो जाता है। जैसे—'जिगुच्छति' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण होने वाले शब्दभेद को छोड़कर आदेश-विधान में तो उभयत्र समानता ही है।। २४२।

२४३. 'चतसृ' आदेश (४०)

कातन्त्र त्रिचतुरोः स्त्रियां तिसृ चतसृ विभक्तौ (२/३/२५)।

विभक्ति के परवर्ती होने पर 'चत्वार्' शब्द के स्थान में 'चतसृ' आदेश होता है। जैसे—'चतस्रः, चतसृभिः, चतसृणाम्' इत्यादि।

कच्चायन तिचतुन्नं तिस्सो चतस्सो तयो चत्तारो तीणि चत्तारि (२/२/१४)।

'यो' विभक्ति की परता में स्त्रीलिङ्ग में विद्यमान संख्यावाचक 'चतु' शब्द को विभक्ति-सहित 'चतस्सो' आदेश होता है। जैसे—'चतस्सो दिसा' इत्यादि।

समीक्षा रूपभेद होने पर भी अर्थ आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। २४३।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२४४. 'चवर्ग' आदेश (४१)

कातन्त्र **कवर्गस्य चवर्गः** (३/३/१३)।

अभ्याससंज्ञक कवर्गीय वर्णों के स्थान में चवर्गीय वर्ण होते हैं। जैसे—'चकार, जगाम' इत्यादि।

कच्चायन **कवग्गस्स चवग्गो** (३/३/५)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'चङ्कमति, जङ्गमति' इत्यादि।

समीक्षा आदेश-स्थानी आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। २४४।

२४५. 'छ्' आदेश (४२)

कातन्त्र **गमिष्यमां छः** (३/६/६९)।

'गम्-इष्' तथा 'यम्' धातुओं में विद्यमान अन्तिम वर्ण को 'छ्' आदेश होता है। जैसे—'गच्छति, इच्छति, यच्छति' इत्यादि।

कच्चायन **गमिस्सन्तो च्छो वा सब्बासु, इसुयमानमन्तो च्छो वा** (३/३/१९; ४/४१)।

सभी प्रत्ययों तथा विभक्तियों की परता में 'गमु-इसु-यमु' धातुओं के अन्तिम वर्ण को विकल्प से चकारसहित छकार (च्छ) आदेश होता है। जैसे—'इच्छति' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार द्वारा केवल छकारादेश किए जाने पर शब्दसिद्धि के लिए अन्य कार्य भी करने पड़ते हैं, जबकि कच्चायनकार ने चकार के साथ छकारादेश करके सुगमता प्रदर्शित की है।। २४५।

२४६. 'ज्' आदेश (४३)

कातन्त्र **हो जः** (३/३/१२)।

अभ्याससंज्ञक हकार के स्थान में जकारादेश होता है। जैसे—'जघान, जुहोति, जहास, जहार' इत्यादि।

कच्चायन **हस्स जो** (३/३/७)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'जहाति, जहार' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा स्थानी-आदेश तथा शब्दरूप की दृष्टि से उभयत्र समानता ही प्रतीत होती है।। २४६।।

२४७. 'जा' आदेश (४४)

कातन्त्र **जाजनेर्विकरणे, ज्ञश्च** (३/६/८१, ८२)।

विकरण के रहने पर 'जन्' तथा 'ज्ञा' धातु को 'जा' आदेश होता है। जैसे—'जानाति, जायते' इत्यादि।

कच्चायन **ञास्स जाजन्ना** (३/३/१३)।

ञा-धातु के स्थान में विकल्प से 'जा-ना' आदेश होते हैं। जैसे—'जानाति, नायति' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के कारण होने वाले शब्दभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की प्रायः समानता ही है।। २४७।

२४८. 'ण्' आदेश (४५)

कातन्त्र **रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरोऽपि** (२/४/४८)।

रेफ से परवर्ती नकार को णकारादेश होता है, स्वरादि वर्णों का व्यवधान होने पर भी। जैसे—'हरणम्, अर्हेण' इत्यादि।

कच्चायन **रहादितो नो ण** (४/१/२६)।

'र' आदि से अन्त होने वाली धातुओं के पश्चात् आने वाले 'न' को 'ण' आदेश होता है। जैसे—'करणं, पूरणं' इत्यादि।

समीक्षा सूत्रपठित सभी अंशों में समानता न होने पर भी केवल रेफ से परवर्ती 'न' के स्थान में होने वाले 'ण' आदेश तथा शब्दरूपों में उभयत्र समानता है।। २४८।

२४९. 'त्' आदेश (४६)

कातन्त्र **हन्तेस्तः** (४/१/२)।

ञानुबन्ध तथा णानुबन्ध वाले कृत् प्रत्यय के परे रहते 'हन्' धातु के नकार को तकारादेश होता है। जैसे—'घातः, घातकः' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन हनस्स घातो (४/४/२)।

'ण' प्रत्यय की परता में सम्पूर्ण 'हन्' धातु के स्थान में 'घात' आदेश होता है। जैसे—'उपघातो, गोघातको' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायनकार ने एक ही आदेश करके शब्दसिद्धि में लाघव दिखाया है, जबकि कातन्त्रकार ने दो आदेश करके रूपसिद्धि की है।। २४९।

२५०. 'तव' आदेश (४७)

कातन्त्र तव मम ङसि (२/३/१३)।

'ङस्' प्रत्यय के परे रहते विभक्ति के साथ 'युष्मद्' शब्द को 'तव' आदेश होता है। जैसे—'तव'।

कच्चायन तव मम से (२/२/२२)।

स-विभक्ति की परता में विभक्तिसहित 'तुम्ह' शब्द के स्थान में 'तव' आदेश होता है। जैसे—'तव'।

समीक्षा यहाँ सभी प्रकार की समानता है।। २५०।

२५१. 'तिष्ठ' आदेश (४८)

कातन्त्र स्थस्तिष्ठः (३/६/७३)।

सार्वधातुकसंज्ञक प्रत्ययों के परे रहते 'स्था' धातु के स्थान में 'तिष्ठ' आदेश होता है। जैसे—'तिष्ठति' इत्यादि।

कच्चायन ठा तिट्ठो (३/३/११)।

'ठा' धातु के स्थान में विकल्प से 'तिट्ठ' आदेश होता है। जैसे—'तिट्ठति' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद के अतिरिक्त अन्य प्रकार की उभयत्र समानता ही कही जा सकती है।। २५१।

२५२. 'तिसृ' आदेश (४९)

कातन्त्र त्रिचतुरोः स्त्रियां तिसृ चतसृ विभक्तौ (२/३/२५)।

विभक्ति के परे रहते 'त्रि' शब्द के स्थान में 'तिसृ' आदेश होता है। जैसे—'तिस्रः, तिसृभिः, तिसृणाम्' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन तिचतुन्नं तिस्सो चतस्सो तयो चत्तारो तीणि चत्तारि (२/२/१४)।

यो-विभक्ति की परता में स्त्रीलिङ्ग में विद्यमान संख्यावाचक 'ति' शब्द को विभक्तिसहित 'तिस्सो' आदेश होता है। जैसे—'तिस्सो वेदना'।

समीक्षा रूपभेद होने पर भी अर्थ की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। २५२।

२५३. 'तुभ्यम्' आदेश (५०)

कातन्त्र तुभ्यं मह्यं ङयि (२/३/१२)।

ङे-प्रत्यय के परे रहते विभक्तिसहित 'युष्मद्' शब्द को 'तुभ्यम्' आदेश होता है। जैसे—'तुभ्यम्'।

कच्चायन तुय्हं मय्हं च (२/२/२३)।

स-विभक्ति की परता में विभक्तिसहित सम्पूर्ण 'तुम्ह' को 'तुय्हं' आदेश होता है। जैसे—'तुय्हं'।

समीक्षा यहाँ पर उभयत्र अधिक अंशों में समानता है।। २५३।

२५४ (१) तृतीयवर्णादेश (५१)

कातन्त्र धुटां तृतीयः (२/३/६०)।

धुट्-संज्ञक वर्णों के स्थान में वर्गीय तृतीय वर्ण होते हैं। जैसे—'योषिद्भ्याम्, मज्जति' इत्यादि।

कच्चायन हचतुत्थानमन्तानं दो धे, डो ढकारे (४/५/५-६)।

धातु के अन्त में पठित चतुर्थ वर्णों के स्थान में 'द' और 'ड' आदेश होता है। जैसे—'सिद्धो, वुड्ढो' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार ने सूत्र में तृतीय शब्द का पाठ करके सामान्य निर्देश किया है, जबकि कच्चायनकार ने दो सूत्रों में विशेष विधान किया है। यह निर्देशभेद संस्कृत-पालि भाषाओं में प्रयुक्त शब्दों के आधार पर हो सकता है। अतः सामान्यतया उभयत्र समानता ही है।। २५४/१।

२५४ (२) **कातन्त्र** द्वितीयचतुर्थयोः प्रथमतृतीयौ (३/३/११)।

अभ्यासस्थ चतुर्थ वर्ण के स्थान में तृतीय वर्ण आदेश होता है। जैसे—'जुघोष, बभार' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन दुतियचतुत्थानं पठमततिया (३/३/४)।

अभ्यास में विद्यमान चतुर्थ वर्ण के स्थान में तृतीय वर्ण आदेश होता है। जैसे—'बभूव, दधाति' इत्यादि।

समीक्षा आदेश तथा स्थानी आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। २५४/२।

२५५. 'ते' आदेश (५२)

कातन्त्र त्वन्मदोरेकत्वे ते मे त्वा मा तु द्वितीयायाम् (२/३/३)।

'तव-तुभ्यम्' के स्थान में 'ते' आदेश होता है। जैसे—'पुत्रस्ते' इत्यादि।

कच्चायन तेमेकवचने (२/२/२९)।

चतुर्थी तथा षष्ठी विभक्तियों के एकवचन में सम्पूर्ण 'तुम्ह' शब्द के स्थान में विभक्तिसहित ते-आदेश होता है। जैसे—'इदं ते रट्ठं' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ उभयत्र पूर्ण समानता है।। १५५।

२५६. 'त्रय' आदेश (५३)

कातन्त्र त्रेस्त्रयश्च (२/१/७३)।

संख्यावाची 'त्रि' शब्द को जस्-प्रत्यय के परे रहते पुंल्लिङ्ग में 'त्रय' आदेश होता है। जैसे—'त्रय:'।

कच्चायन तिचतुन्नं तिस्सो चतस्सो तयो चत्तारो तीणि चत्तारि (२/२/१४)।

यो-विभक्ति की परता में पुंल्लिङ्ग में विद्यमान संख्यावाचक ति-शब्द को विभक्तिसहित 'तयो' आदेश होता है। जैसे—'तयो जना'।

समीक्षा रूपभेद को छोड़कर अन्य प्रकार की उभयत्र समानता है।। २५६।

२५७. 'त्वम्' आदेश (५४)

कातन्त्र त्वमहं सौ सविभक्त्यो: (२/३/१०)।

सि-प्रत्यय के परे रहते 'युष्मद्' शब्द के स्थान में सि-विभक्तिसहित 'त्वम्' आदेश होता है। जैसे—'त्वम्'।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **त्वमहं सिम्हि च** (२/२/२१)।

सि-विभक्ति की परता में विभक्ति सहित सम्पूर्ण 'तुम्ह' शब्द को 'त्वं' आदेश होता है। जैसे—'त्वं'।

समीक्षा यहाँ कातन्त्र और कच्चायन की प्रक्रिया में पूर्ण समानता है।। २५७।

२५८. 'दीर्घ' आदेश (५५)

कातन्त्र **समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम; दीर्घमामि सनौ, नान्तस्य चोपधायाः** (१/२/१; २/२/१५-१६)।

यह दीर्घ-विधान तीन प्रकार का है—(१) सवर्णसंज्ञक स्वर के परे रहते समानसंज्ञक स्वर को दीर्घ, (२) 'नाम्' के परे रहते नाम्यन्त लिङ्ग को दीर्घ तथा (३) 'नाम्' के परे रहते नकारान्त लिङ्ग की उपधा को दीर्घ। जैसे—'अग्नी, अग्नीनाम्, पञ्चानाम्' इत्यादि।

कच्चायन **योसु कतनिकारलोपेसु दीघं, सुनंहिसु च** (२/१/३७, ३८)।

यो-विभक्तियों का लोप होने पर तथा 'सु, नं, हि' विभक्तियों के परे रहते पूर्ववर्ती सभी स्वरों का दीर्घ होता है। जैसे—'अग्गी, अग्गीनं' इत्यादि।

समीक्षा दो विशेषतायें ज्ञातव्य हैं—(१) कातन्त्र के अनुसार द्विवचन 'औ' प्रत्यय को पूर्ववर्ती स्वरादेश होने के बाद ही दीर्घ होता है। (औकारः पूर्वम्-२/१/५१)। (२) पालि व्याकरण के अनुसार संख्यावाचक नकारान्त शब्दों में उपधा-दीर्घ नहीं होता। (पञ्चादीनमत्तं-२/१/३९)।। २५८।

२५९ (१) 'दीर्घ' आदेश (५६)

कातन्त्र **समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्** (१/२/१)।

सवर्णसंज्ञक वर्ण के परवर्ती होने पर समानसंज्ञक वर्ण को दीर्घ होता है तथा परवर्ती सवर्णसंज्ञक वर्ण का लोप हो जाता है। जैसे—'सागता, नदीहते' इत्यादि।

कच्चायन **दीघं, पुब्बो च** (१/२/४, ५)

पूर्व स्वर का लोप हो जाने पर परवर्ती स्वर कहीं-कहीं दीर्घ होता है। कहीं-कहीं पर परवर्ती स्वर का लोप होने के बाद पूर्ववर्ती स्वर का दीर्घ होता है। जैसे—'सद्धीध, किंसूध' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा इस दीर्घ-सन्धि में भी कातन्त्र और कच्चायन की प्रक्रिया बिल्कुल भिन्न है। केवल सूत्र (१/२/५) के अनुसार कच्चायन व्याकरण तथा कातन्त्र व्याकरण का साम्य दिखाई देता है—ऐसा कहा जा सकता है।। २५९/१।

२५९ (२) **कातन्त्र** **घुटि चासंबुद्धौ (२/२/१७)।**

घुट्-संज्ञक प्रत्ययों के परे रहते नकारान्त लिङ्ग की उपधा को दीर्घ आदेश होता है। जैसे—'राजा, राजानम्' इत्यादि।

कच्चायन **ब्रह्मत्तसखराजादितो अमानं, योनमाञो (२/३/२८, ३०)।**

'ब्रह्म, अत्त, सख' तथा 'राज' शब्दों के बाद आने वाली 'अं' विभक्ति को 'आनं' एवम् 'यो' विभक्ति को 'आनो' आदेश होता है। जैसे—'ब्रह्मानं, ब्रह्मानो' इत्यादि।

समीक्षा शब्दों का परिगणन तथा सामान्य निर्देश भाषाभेद के अनुसार किया गया है। शब्दरूपों में प्रायः समानता ही है।। २५९/२।

२५९ (३) **कातन्त्र** **अन्त्वसन्तस्य चाधातोः सौ (२/२/२०)।**

'मन्तु-वन्तु' प्रत्ययान्त शब्दों में मकारोत्तरवर्ती तथा वकारोत्तरवर्ती 'अ' को दीर्घ आदेश होता है। जैसे—'मतिमान्, शीलवान्' इत्यादि।

कच्चायन **आ सिम्हि (२/२/५)।**

'न्तु' प्रत्यय के स्थान में आकारादेश होता है। जैसे—'सीलवा, बलवा' इत्यादि।

समीक्षा अपनी-अपनी व्याकरण-प्रक्रिया के अनुसार कातन्त्रकार ने दीर्घ आदेश तथा कच्चायनकार ने आकारादेश किया है। फल की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है।। २५९/३।

२५९ (४) **कातन्त्र** **अस्य वमोर्दीर्घः (३/८/११)।**

वकारादि तथा मकारादि प्रत्ययों के परे रहते पूर्ववर्ती ह्रस्व अकार को दीर्घ होता है। जैसे—'पचामि, पचावः' इत्यादि।

कच्चायन **अकारो दीघं हिमिमेसु (३/३/२१)।**

'हि, मि' तथा 'म' विभक्तियों की परता में अकार को दीर्घ होता है। जैसे—'गच्छामि, गच्छाम' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा भाषाभेद के कारण शब्दरूपों में भिन्नता देखे जाने पर भी आदेश की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। २५९/४।

२६०. 'ध्' आदेश (५७)

कातन्त्र **घढधभेभ्यस्तथोर्धोऽधः** (३/८/३)।

'घ्-ढ्-ध्-भ्' से परवर्ती तकार को धकारादेश होता है। जैसे—'अदुग्ध, अबुद्ध' इत्यादि।

कच्चायन **धढभहेहि धढा च** (४/३/६)।

'ध-ढ-भ' तथा 'ह' से अन्त होने वाली धातुओं के पश्चात् आने वाले 'त' को 'ध' आदेश होता है। जैसे—'बुद्धो, लद्धं' इत्यादि।

समीक्षा उभयत्र आदेश में पूर्ण समानता तथा वर्णों में अधिकांश समानता देखी जाती है।। २६०।

२६१. 'न्' आदेश (५८)

कातन्त्र **मो नो धातोः, वमोश्च** (४/६/७३-७४)।

धातुगत मकार के स्थान में नकारादेश होता है। जैसे—'प्रशान्, जगन्वान्' इत्यादि।

कच्चायन **गमखनहनादीनं तुंतब्बादिसु न** (४/४/७)।

'तुं' आदि प्रत्ययों की परता में धातुघटित 'म' के स्थान में 'न' आदेश होता है। जैसे—'गन्तुं, गन्तब्बं' इत्यादि।

समीक्षा सामान्यतया उभयत्र पूर्ण समानता परिलक्षित होती है।। २६१।

२६२. 'नस्' आदेश (५९)

कातन्त्र **युष्मदस्मदोः पदं पदात् षष्ठीचतुर्थीद्वितीयासु वस्नसौ** (२/३/१)।

'अस्माकम्, अस्मभ्यम्' तथा 'अस्मान्' के स्थान में 'नस्' आदेश विकल्प से होता है। जैसे—'पुत्रो नः' इत्यादि।

कच्चायन **पदतो दुतिया-चतुत्थी-छट्ठीसु वो नो** (२/२/२८)।

पद के पश्चात् आने वाले सम्पूर्ण द्वितीया, चतुर्थी तथा छट्ठी विभक्तियों में 'अम्ह' शब्द को विभक्तिसहित 'नो' आदेश विकल्प से होता है। जैसे—'संविभजेथ नो रज्जेन' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा शब्दरूपों को छोड़कर शेष सभी अंशों में उभयत्र समानता है।। २६२।

२६३. 'पश्य' आदेश (६०)

कातन्त्र **दृशेः पश्यः** (३/६/७६)।

सार्वधातुकसंज्ञक प्रत्यय के परे रहते 'दृश्' धातु को 'पश्य' आदेश होता है। जैसे—'पश्यति, पश्यामि' इत्यादि।

कच्चायन **दिसस्स पस्सदिस्सदक्खा वा** (३/३/१४)।

'दिस' धातु को 'पस्स' आदेश होता है। जैसे—'पस्सति' इत्यादि।

समीक्षा भाषा, धातु, आदेश तथा शब्दरूप में भिन्नता होने पर भी अर्थगत तो उभयत्र समानता ही है।। २६३।

२६४. 'पिब' आदेश (६१)

कातन्त्र **पः पिबः** (३/६/७०)।

सार्वधातुकसंज्ञक प्रत्ययों के परे रहते पानार्थक 'पा' धातु के स्थान में 'पिब' आदेश होता है। जैसे—'पिबति' इत्यादि।

कच्चायन **पा पिबो** (३/३/१२)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'पिबति' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ स्थानी-आदेश आदि की दृष्टि से उभयत्र पूर्ण समानता ही प्रतीत होती है।। २६४।

२६५. प्रथमवर्णादेश (६२)

कातन्त्र **द्वितीयचतुर्थयोः प्रथमतृतीयौ** (३/३/११)।

अभ्यासस्थ द्वितीय वर्ण के स्थान में प्रथम वर्ण आदेश होता है। जैसे—'चिच्छेद, चफाल' इत्यादि।

कच्चायन **दुतियचतुत्थानं पठमततिया** (३/३/४)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'चिच्छेदति, बुभुक्खति' इत्यादि।

समीक्षा आदेश तथा स्थानी आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। २६५।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitized by eGangotri

२६६. 'भू' आदेश (६३)

कातन्त्र अस्तेर्भूरसार्वधातुके (३/४/८७)।

असार्वधातुकसंज्ञक प्रत्ययों के परे रहते 'अस्' धातु को 'भू' आदेश होता है। जैसे—'बभूव, भविष्यति' इत्यादि।

कच्चायन असब्बधातुके भू (३/४/२६)।

असार्वधातुक विभक्तियों की परता में 'अस' धातु का विकल्प से 'भू' आदेश होता है। जैसे—'भविस्सति, भविस्सन्ति' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ निमित्त, स्थानी तथा आदेश की दृष्टि से दोनों व्याकरणों में समानता ही है।। २६६।

२६७. 'मम' आदेश (६४)

कातन्त्र तव मम ङसि (२/३/१३)।

'ङस्' प्रत्यय के परे रहते विभक्ति के साथ 'अस्मद्' शब्द को 'मम' आदेश होता है। जैसे—'मम'।

कच्चायन तव मम से (२/२/२२)।

स–विभक्ति की परता में विभक्तिसहित 'अम्ह' शब्द के स्थान में 'मम' आदेश होता है। जैसे—'मम'।

समीक्षा यहाँ उभयत्र सर्वविध समानता है।। २६७।

२६८. 'मह्यम्' आदेश (६५)

कातन्त्र तुभ्यं मह्यं ङयि (२/३/१२)।

'ङे' प्रत्यय के परे रहते विभक्तिसहित 'अस्मद्' शब्द को 'मह्यम्' आदेश होता है। जैसे—'मह्यम्'।

कच्चायन तुय्हं मय्हञ्च (२/२/२३)।

'स' विभक्ति की परता में विभक्तिसहित सम्पूर्ण 'अम्ह' को 'मय्हं' आदेश होता है। जैसे—'मय्हं'।

समीक्षा यहाँ पर उभयत्र अधिक अंशों में समानता है।। २६८।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२६९. 'मे' आदेश (६६)

कातन्त्र त्वन्मदोरेकत्वे ते मे त्वा मा तु द्वितीयायाम् (२/३/३)।

'मम, मह्यम' के स्थान में 'मे' आदेश होता है। जैसे—'पुत्रो मे, गां मे देहि' इत्यादि।

कच्चायन तेमेकवचने (२/२/२९)।

चतुर्थी तथा षष्ठी विभक्तियों के एकवचन में सम्पूर्ण 'अम्ह' शब्द के स्थान में विभक्ति-सहित 'मे' आदेश होता है। जैसे—'अयं मे पुत्तो' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ उभयत्र पूर्ण समानता है।। २६९।

२७०/(१) 'य्' आदेश (६७)

कातन्त्र इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः (१/२/८)।

इवर्ण के स्थान में यकारादेश होता है यदि इवर्ण से परवर्ती स्वर सवर्णसंज्ञक न हो, परन्तु यहाँ परवर्ती वर्ण का लोप नहीं होता है। जैसे—'दध्यत्र, नद्येषा' इत्यादि।

कच्चायन पसञ्ञस्स च (२/१/२१)।

स्वर के परे रहते प-संज्ञक वर्ण (इवर्ण) के स्थान में 'य' आदेश होता है। जैसे—'पुथव्या, रत्या' इत्यादि।

समीक्षा ये निर्देश प्रायः सभी व्याकरणों में समानरूप से उपलब्ध होते हैं, परन्तु यहाँ प्रक्रियाभेद उभयत्र द्रष्टव्य है।। २७०/१।

२७०/(२) **कातन्त्र** ङेर्यः (२/१/२४)।

अकारान्त लिङ्ग से परवर्ती 'ङे' प्रत्यय को 'य' आदेश होता है। जैसे—'वृक्षाय' इत्यादि।

कच्चायन आय चतुत्थेकवचनस्स तु (२/१/५८)।

अकारान्त प्रातिपदिक के बाद आने वाली चतुर्थी-एकवचन विभक्ति (स) को विकल्प से 'आय' आदेश होता है। जैसे—'अत्थाय, हिताय' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा कातन्त्रकार को 'य' आदेश करने के कारण पूर्ववर्ती अकार को दीर्घ भी करना पड़ता है और कच्चायनकार को 'आय' आदेश में पूर्ववर्ती अकार का लोप करना पड़ता है। 'ना, स, स्मा, स' तथा 'स्मिं' प्रत्यय के स्थान में 'आय' आदेश के लिए 'घतो नादीनं' (२/१/६०) सूत्र द्रष्टव्य है।। २७०/२।

२७०/(३) **कातन्त्र** **अनेकाक्षरयोस्त्वसंयोगाद् यवौ** (२/२/५९)।

अनेकाक्षर वाले लिङ्ग में विद्यमान अधातु-संयोग से परवर्ती ईकार के स्थान में 'य्' आदेश होता है। जैसे—'ग्रामण्यः' इत्यादि।

कच्चायन **यवकारा** (२/१/२०)।

स्वर के परे रहते इवर्ण (इ) स्थान में विकल्प से 'य' आदेश होता है। जैसे—'अग्यागारे' इत्यादि।

समीक्षा इस प्रसङ्ग में प्रायः सभी अंशों में समानता है, लेकिन लाघव की दृष्टि से कातन्त्रीय निर्देश को अधिक संगत कहा जा सकता है।। २७०/३।

२७१. 'यप्' आदेश (६८)

कातन्त्र **समासे भाविन्यनञः क्त्वो यप्** (४/६/५५)।

समास में 'क्त्वा' प्रत्यय को 'यप्' आदेश होता है। जैसे—'प्रणम्य, अधीत्य, संगत्य' इत्यादि।

कच्चायन **सब्बेहि तूनादीनं यो** (४/४/८)।

सभी धातुओं से परवर्ती 'त्वा' प्रत्यय के स्थान में यकारादेश होता है। जैसे—'अभिवन्दिय, उपनीय' इत्यादि।

समीक्षा सूत्रपाठ में आंशिक भेद के अतिरिक्त सामान्यतया उभयत्र समानता ही है।। २७१।

२७२. 'याम्' आदेश (६९)

कातन्त्र **ङवन्ति यै-यास्-यास्-याम्** (२/१/४२)।

श्रद्धासंज्ञक शब्द से परवर्ती 'ङि' प्रत्यय को 'याम्' आदेश होता है। जैसा—'श्रद्धायाम्, मालायाम्' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **घपतो स्मिं यं वा** (२/४/६)।

आंकारान्त स्त्रीलिङ्ग-विशिष्ट शब्दों से आने वाली 'स्मिं' विभक्ति को 'यं' आदेश होता है। जैसे—'गङ्गायं' इत्यादि।

समीक्षा विंभक्तिभेद होने पर भी आदेश में प्रायः समानता ही है।। २७२।

२७३. 'वध्' आदेश (७०)

कातन्त्र **हन्तेर्वधिराशिषि, अद्यतन्यां च** (३/४/८२, ८३)।

आशीर्विभक्तिसंज्ञक तथा अद्यतनी-विभक्ति-संज्ञक प्रत्यय के परे रहते 'हन्' धातु को 'वध्' आदेश होता है। जैसे–'वध्यात्, अवधित' इत्यादि।

कच्चायन **वधो वा सब्बत्थ** (४/४/३)।

सभी स्थानों में सम्पूर्ण 'हन' धातु को विकल्प से 'वध' आदेश होता है। जैसे—'वधको, अवधि' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायनकार ने एक ही सूत्र द्वारा सभी प्रत्ययों के परे रहते 'वध' आदेश करके लाघव प्रदर्शित किया है, परन्तु कातन्त्रकार ने स्पष्टावबोध के उद्देश्य से दो सूत्रों द्वारा भिन्न-भिन्न विभक्तियों में 'वध्' आदेश किया है।। २७३।

२७४. 'वस्' आदेश (७१)

कातन्त्र **युष्मदस्मदोः पदं पदात् षष्ठीचतुर्थीद्वितीयासु वस्नसौ** (२/३/१)।

'युष्माकम्-युष्मभ्यम्-युष्मान्' के स्थान में 'वस्' आदेश विकल्प से होता है। जैसे—'पुत्रो वः' इत्यादि।

कच्चायन **पदतो दुतिया-चतुत्थी-छट्ठीसु वो नो** (२/२/२८)।

द्वितीया, चतुर्थी तथा षष्ठी विभक्तियों में पद के पश्चात् आने वाले सम्पूर्ण 'तुम्ह' शब्द को विभक्तिसहित 'वो' आदेश विकल्प से होता है। जैसे—'पहाय वो गमिस्सामि' इत्यादि।

समीक्षा शब्दरूपों को छोड़कर शेष सभी अंशों में उभयत्र समानता है।। २७४।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२७५. 'व्' आदेश (७२)

कातन्त्र **अनेकाक्षरयोस्त्वसंयोगाद् यवौ** (२/२/५९)।

अनेक अक्षर वाले लिङ्ग में विद्यमान अधातुसंयोग से परवर्ती ऊकार के स्थान में 'व्' आदेश होता है। जैसे—'यवल्वः' इत्यादि।

कच्चायन **यवकारा** (२/१/२०)।

स्वर के परे रहते उवर्ण (ल) के स्थान में विकल्प से 'व' आदेश होता है। जैसे—'चक्खायतनं' इत्यादि।

समीक्षा इस प्रसङ्ग में उभयत्र प्रायः सभी अंशों में समानता है, लेकिन लाघव की दृष्टि से कातन्त्रीय निर्देश को अधिक संगत कहा जा सकता है।। २७५।

२७६. 'शि' आदेश (७३)

कातन्त्र **जस्शसोः शिः** (२/२/१०)।

नपुंसकलिङ्ग वाले संख्यावाचक शब्दों से 'जस्-शस्' प्रत्ययों के स्थान में 'शि' आदेश होता है। जैसे—'त्रीणि, चत्वारि' इत्यादि।

कच्चायन **तिचतुन्नं तिस्सो चतस्सो तयो चत्तारो तीणि चत्तारि** (२/२/१४)।

'यो' विभक्ति की परता में नपुंसकलिङ्ग में विद्यमान संख्यावाचक 'ति' तथा 'चतु' शब्दों के स्थान में क्रमशः 'तीणि' तथा 'चत्तारि' आदेश होते हैं। जैसे—'तीणि आयतनानि, चत्तारि आरियसच्चानि' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार को 'शि' आदेश करने पर नकार का आगम आदि कार्य करने पड़ते हैं, जबकि 'तीणि-चत्तारि' आदेश करके कच्चायनकार ने संक्षेप किया है।। २७६।

२७७. 'स्' आदेश (७४)

कातन्त्र **सौ सः, तस्य च** (२/३/३२-३३)।

'सि' प्रत्यय के परे रहते त्यदादिगणपठित शब्दों में विद्यमान तकार तथा दकार को सकारादेश होता है। जैसे—'असौ, सः' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन अमुस्स मो सं, एततेसं तो (२/३/१३-१४)।

'सि' विभक्ति की परता में 'एत-त' शब्दों में तकार को तथा 'अमु' शब्द में मकार को सकारादेश होता है। जैसे—'असु राजा, एसो पुरिसो, सो पुरिसो' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद से मूल शब्दों में तथा पदों में भेद देखा जाता है।। २७७।

२७८. 'स' आदेश (७५)

कातन्त्र सर्वस्मिन् काले इत्यर्थे सदाशब्दोऽव्यय एव रूढः

(कात० वृ० टी० २/६/३६)।

'दा' प्रत्यय के परवर्ती होने पर 'सर्व' शब्द को 'स' आदेश रूढि=निपातन से होता है। जैसे—'सदा'।

कच्चायन सब्बस्स सो दाम्हि वा (२/५/१४)।

'दा' प्रत्यय की परता में 'सब्ब' शब्द को विकल्प से 'स' आदेश होता है। जैसे—'सदा'।

समीक्षा सर्वशब्द को कातन्त्रकार ने सकारादेश के लिए सूत्र नहीं बनाया है। अतः टीकाकारकलापचन्द्रकार ने 'सदा' शब्द को अव्यय के रूप में साधु माना है, जबकि कच्चायनकार ने सूत्र द्वारा सकारादेश किया है। फलतः दोनों की शब्दसाधुत्व विषयक मान्यता भिन्न-भिन्न कही जाएगी।। २७८।

२७९. 'सि' लोपादेश (७६)

कातन्त्र आ सौ सिलोपश्च (२/१/६४)।

ऋकारान्त लिङ्ग के बाद आने वाले 'सि' प्रत्यय का लोप होता है। जैसे—'पिता, माता' इत्यादि।

कच्चायन सत्थुपितादीनमा सिस्मिं सिलोपो च (२/३/३९)।

'पितु' आदि शब्दों से परवर्ती 'सि' विभक्ति का लोप होता है। जैसे—'पिता, माता' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा मूलतः शब्दभेद होने पर भी आदेश में उभयत्र पूर्ण समानता है।। २७९।

२८०. 'सीद' आदेश (७७)

कातन्त्र **सदेः सीदः** (३/६/८०)।

अन्-विकरण के परे रहते 'सद्' को 'सीद' आदेश होता है। जैसे—'सीदति, सीदन्ति' इत्यादि।

कच्चायन **सदस्स सीदत्तं** (४/५/३)।

सर्वत्र 'सद' धातु को 'सीद' आदेश होता है। जैसे—'निसीदति' इत्यादि।

समीक्षा उभयत्र सभी प्रकार की समानता है।। २८०।

२८१. 'स्मात्' आदेश (७८)

कातन्त्र **ङसिः स्मात्** (२/१/२६)।

सर्वनामसंज्ञक अकारान्त लिङ्ग से परवर्ती पञ्चमी विभक्ति-एकवचन 'ङसि' को 'स्मात्' आदेश होता है। जैसे—'सर्वस्मात्, कस्मात्' इत्यादि।

कच्चायन **स्माहिस्मिन्नं म्हाभिम्हि वा** (२/१/४८)।

सभी लिङ्गों के बाद आने वाली 'स्मा' विभक्ति को 'म्हा' आदेश होता है। जैसे—'पुरिसम्हा, पुरिसस्मा' इत्यादि।

समीक्षा वस्तुतः यहाँ कातन्त्रीय आदेशों की समानता कच्चायन की विभक्तियों से ही अधिक है, आदेशों से नहीं। कच्चायन में कहीं-कहीं इन विभक्तियों के आदेश का निषेध भी किया गया है (न तिमेहि कताकारेहि-२/१/४९)।। २८१।

२८२. 'स्मिन्' आदेश (७९)

कातन्त्र **ङिः स्मिन्** (२/१/२७)।

सर्वनामसंज्ञक अकारान्त लिङ्ग से परवर्ती सप्तमी विभक्ति-एकवचन 'ङि' प्रत्यय को 'स्मिन्' आदेश होता है। जैसे—'सर्वस्मिन्' इत्यादि।

कच्चायन **स्माहिस्मिन्नं म्हाभिम्हि वा** (२/१/४८)।

सभी लिङ्गों के बाद आने वाली 'स्मिं' विभक्ति को विकल्प से 'म्हि' आदेश होता है। जैसे—'पुरिसम्हि, पुरिसस्मिं' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा वस्तुतः यहाँ कातन्त्रीय आदेशों की समानता कच्चायन की विभक्तियों से तो अधिक है, आदेशों से नहीं। कच्चायन में कहीं-कहीं इन विभक्तियों के आदेश का निषेध भी किया गया है। (न तिमेहि कताकारेहि-२/१/४९)।। २८२।

२८३. 'स्याम्' आदेश (८०)

कातन्त्र **सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्रस्वपूर्वाश्च (२/१/४३)।**

सर्वनामसंज्ञक तथा श्रद्धासंज्ञक शब्दों से परवर्ती 'ङि' प्रत्यय को 'स्याम्' आदेश होता है। जैसे—'सर्वस्याम्' इत्यादि।

कच्चायन **घपतो स्मिंसानं संसा (२/३/१९)।**

'घ' तथा 'प' संज्ञा वाले (अकारान्त, इकारान्त तथा उकारान्त स्त्री-वाचक) सर्वनामों के पश्चात् 'स्मिं' को 'सं' आदेश होता है। जैसे—'सब्बस्सं' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ विभक्तियों तथा आदेशों में जो भेद देखा जाता है, वह भाषाभेद के कारण है। अर्थ की दृष्टि से तो समानता ही है।। २८३।

२८४. 'स्यास्' आदेश (८१)

कातन्त्र **सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्रस्वपूर्वाश्च (२/१/४३)।**

सर्वनामसंज्ञक तथा श्रद्धासंज्ञक शब्दों से परवर्ती 'ङस्' को 'स्यास्' आदेश होता है। जैसे—'सर्वस्याः' इत्यादि।

कच्चायन **घपतो स्मिंसानं संसा (२/३/१९)।**

'घ' तथा 'प' संज्ञा वाले (अकारान्त, इकारान्त तथा उकारान्त, स्त्री-वाचक) सर्वनामों के पश्चात् 'स' को 'सा' आदेश होता है। जैसे—'सब्बस्सा' इत्यादि।

समीक्षा विभक्तियों तथा आदेशों में जो भेद देखा जाता है, वह भाषाभेद के कारण है। अर्थ की दृष्टि से तो समानता ही है।। २८४।

२८५ (१) 'ह्रस्व' आदेश (८२)

कातन्त्र **स्वरो ह्रस्वो नपुंसके (२/४/५२)।**

नपुंसकलिङ्ग में वर्तमान लिङ्गसंज्ञक शब्द के अन्तिम स्वर वर्ण को ह्रस्व आदेश होता है। जैसे—'सोमपम्, सेनानि' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **सरो रस्सो नपुंसके** (२/७/२७)।

अर्थ पूर्ववत्। जैसे—'उपगङ्गं, अधिकुमारि' इत्यादि।

समीक्षा यहाँ शब्दावली, उदाहरण, संज्ञा तथा अर्थ की दृष्टि से उभयत्र पूर्ण समानता है।। २८५/१।

२८५ (२) **कातन्त्र** **ह्रस्वः** (३/३/१५)।

अभ्याससंज्ञक शब्द के अन्त में विद्यमान दीर्घ स्वर को ह्रस्व आदेश होता है। जैसे—'तस्थौ, निनीषति' इत्यादि।

कच्चायन **रस्सो** (३/३/३)।

अभ्यास में वर्तमान स्वर को ह्रस्व होता है। जैसे—'ददाति, जहाति' इत्यादि।

समीक्षा आदेश-स्थानी आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता है।।२८५/२।

* * *

१२. आगमों का समीक्षात्मक अध्ययन

२८६. अडागम (१)

कातन्त्र **अड् धात्वादिर्ह्यस्तन्यद्यतनीक्रियातिपत्तिषु** (३/८/१६)।

'ह्यस्तनी-अद्यतनी' तथा 'क्रियातिपत्ति' विभक्तियों के परे रहते धातु से पूर्व अडागम होता है। जैसे—'अकरोत्, अकार्षीत्, अकरिष्यत्' इत्यादि।

कच्चायन **अकारागमो हीयत्तनज्जतनिकालातिपत्तिसु** (३/४/३८)।

'हीयत्तनी, अज्जतनी' तथा 'कालातिपत्ति' विभक्तियों में कहीं-कहीं अकार का आगम होता है। जैसे—'अगमा, अगमि, अगमिस्सा' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रीय टकारानुबन्ध को छोड़कर अन्य प्रकार की तो उभयत्र समानता ही देखी जाती है।। २८६।

२८७. अनुस्वारागम (२)

कातन्त्र **अतोऽन्तोऽनुस्वारोऽनुनासिकान्तस्य, जपादीनां च, चरफलोरुच्च परस्यास्य** (३/३/३१, ३२, ३३)।

चेक्रीयितसंज्ञक 'य' प्रत्यय के परे रहते, 'जप, चर, फल' आदि धातुओं में अभ्यासघटित अकार के अन्त में अनुस्वार का आगम होता है। जैसे—'बाभण्यते, जञ्जप्यते, पम्फुल्यते' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन निग्गहीतञ्च (३/३/९)।

अभ्यास के अन्त में 'निग्गहीत' का विकल्प से आगम होता है। जैसे—'चञ्चलति, जङ्गमति' इत्यादि।

समीक्षा भिन्न-भिन्न भाषागत शब्दभेद के कारण उदाहरणों में भिन्नता होने पर भी आगम आदि की दृष्टि से उभयत्र समानता ही है।। २८७।

२८८/(१) इडागम (३)

कातन्त्र **इडागमोऽसार्वधातुकस्यादिर्व्यञ्जनादेरयकारादेः, स्नुक्रमिभ्यां परस्मै, रुदादेः सार्वधातुके, ईशः से, ईड्जनोः सध्वे च, से गमः परस्मै, हनृदन्तात् स्ये, अञ्जेः सिचि, स्तुसुधूञ्भ्यः परस्मै, यमिरमिनम्यादन्तानां सिरन्तश्च, स्मिङ्पूङ्रञ्ज्वशूकॄगृदृधृप्रच्छां सनि (३/७/१-११)।**

असार्वधातुकसंज्ञक प्रत्ययों के परे रहते उससे पूर्व में 'इट्' का आगम होता है। जैसे—'करिष्यति, भविष्यति, गमिष्यति' इत्यादि।

कच्चायन **इवण्णागमो वा (३/२/११)।**

'य' प्रत्यय की परता में सभी धातुओं में इवर्ण (इ-ई) आगम होता है। जैसे—'करिय्यते, गच्छिय्यते' इत्यादि।

समीक्षा भाषागत भेद के कारण कातन्त्रकार को केवल इडागम तथा कच्चायनकार को इवर्णागम करना पड़ता है। सामान्यतया तो उभयत्र समानता ही कही जाएगी।। २८८/१।

२८८/(२) कातन्त्र **इडागमोऽसार्वधातुकस्यादिर्व्यञ्जनादेरयकारादेः (३/७/१)।**

असार्वधातुकसंज्ञक व्यञ्जनादि प्रत्यय के परे रहते 'इट्' का आगम होता है। जैसे—'गमिष्यति, भविष्यति' इत्यादि।

कच्चायन **इकारागमो असब्बधातुकम्हि (३/४/३५)।**

असार्वधातुक प्रत्ययों की परता में इकार का आगम होता है। जैसे—'गमिस्सति, करिस्सति' इत्यादि।

समीक्षा निमित्त तथा आगम की दृष्टि से उभयत्र समानता ही प्रतीत होती है।। २८८/२।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२८९. ईडागम (४)

कातन्त्र ब्रुव ईड् वचनादिः (३/६/८८)।

व्यञ्जनादि गुणी सार्वधातुक प्रत्यय के परे रहते 'ब्रू' धातु से 'ईट्' आगम होता है। जैसे—'ब्रवीति, ब्रवीमि' इत्यादि।

कच्चायन ब्रूतो ई तिम्हि (३/४/३९)।

'ति' विभक्ति की परता में 'ब्रू' धातु से ईकार का आगम होता है। जैसे—'ब्रवीति' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रीय टकारानुबन्ध को छोड़कर शेष तो उभयत्र समानता है।। २८९।

२९०. 'क' आगम (५)

कातन्त्र अव्ययसर्वनाम्नः स्वरादन्त्यात् पूर्वोऽक् कः (२/२/६४)।

अव्यय, सर्वनाम तथा अन्य साधारण शब्दों से ह्रस्व, अनुकम्पित आदि विविध अर्थों में 'क' प्रत्यय होता है। जैसे—'वत्सकः, वृक्षकः, बालकः' इत्यादि।

कच्चायन सब्बतो को (२/३/१८)।

'सि' विभक्ति की परता में सभी सर्वनामों के पश्चात् विकल्प से 'क' आगम होता है। जैसे—'सब्बको, अमुको' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार 'क' को प्रत्यय तथा आगम दोनों ही मानते हैं, जब कि कच्चायनकार ने केवल आगम ही माना है। इस भेद के अतिरिक्त तो उभयत्र समानता है।। २९०।

२९१. 'थ' आगम (६)

कातन्त्र अन्तस्थो डे र्षोः (२/६/१९)।

रकारान्त तथा षकारान्त संख्यावाचक शब्दों के अन्त में 'थ' आगम होता है 'ड' प्रत्यय के परे रहते। जैसे—'चतुर्थः, षष्ठः'।

कच्चायन चतुच्छेहि थठा (२/८/४१)।

संख्यापूरणार्थ में 'चतु' तथा 'छ' शब्दों के पश्चात् 'थ' एवं 'ठ' प्रत्यय होते हैं। जैसे—'चतुत्थो, छट्ठो'।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा भाषाभेद की मान्यताओं के कारण कच्चायनकार को 'थ' और 'ठ' ये दो प्रत्यय स्वतन्त्ररूप में करने पड़ते हैं, जबकि कातन्त्र में केवल 'थ' आगम किए जाने पर भी वाञ्छित कार्य सम्पन्न हो जाता है, क्योंकि मूर्धन्य 'ष्' के बाद आने वाले 'थ्' को 'ठ्' आदेश किया गया है। इस प्रकार यहाँ आगम-प्रत्यय आदि की मान्यता से भेद स्पष्ट प्रतीत होता है।। २९१।

२९२/(१) **'नु' आगम (७)**

कातन्त्र **धुट्स्वराद् घुटि नुः (२/२/११)।**

नपुंसकलिङ्ग वाले शब्दों से परवर्ती घुट्-संज्ञक 'जस्-शस्' प्रत्ययों के रहने पर 'नु' आगम होता है। जैसे—'पद्मानि, पयांसि' इत्यादि।

कच्चायन **योनन्नि नपुंसकेहि (२/४/७)।**

नपुंसक शब्दों के पश्चात् आने वाली सम्पूर्ण 'यो' विभक्ति को वैकल्पिक 'नि' आदेश होता है। जैसे—'अट्ठीनि, आयूनि' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार के द्वारा 'नु' आगम तथा 'शि' आदेश करने की अपेक्षा कच्चायनकार के द्वारा किया गया 'नि' आदेश लाघव का बोधक कहा जा सकता है।। १९२/१।

२९२/(२) **कातन्त्र** **आमि च नुः, चतुरः (२/१/७२, ७४)।**

'ह्रस्व-नदी-श्रद्धा'-संज्ञक तथा 'चत्वार्' शब्द से षष्ठी विभक्ति-बहुवचन 'आम्' प्रत्यय के परे रहने पर 'नु' आगम होता है। जैसे—'नदीनाम्, चतुर्ण्णाम्, वृक्षाणाम्, श्रद्धानाम्' इत्यादि।

कच्चायन **नो च द्वादितो नम्हि (२/१/१६)।**

संख्यावाचक 'द्वि' आदि शब्दों के बाद छठी विभक्ति-बहुवचन 'नं' के आने पर 'न' आगम होता है। जैसे—'द्विन्नं' इत्यादि।

समीक्षा अपनी-अपनी व्याकरण-प्रक्रिया के अनुसार यहाँ 'नु' तथा 'न' आगम किये गये हैं। यह विशेष ज्ञातव्य है कि कच्चायनकार ने केवल संख्यावाचक शब्दों से ही 'न' आगम किया है, जब कि कातन्त्र में उसके अतिरिक्त ह्रस्व-नदी-श्रद्धासंज्ञक आदि शब्दों से भी 'नु' आगम का निर्देश प्राप्त होता है।। २९२/२।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

२९३. 'मु' आगम (८)

कातन्त्र अकारादसम्बुद्धौ मुश्च (२/२/७)।

नपुंसकलिङ्ग वाले अकारान्त शब्दों से परवर्ती 'मु' आगम होता है। जैसे—'कुण्डम्', अतिजरम्' इत्यादि।

कच्चायन सिं (२/४/९)।

अकारान्त नपुंसक शब्दों के पश्चात् आने वाली 'सि' विभक्ति को 'अं' आदेश होता है। जैसे—'सब्बं' इत्यादि।

समीक्षा कातन्त्रकार के द्वारा 'मु' आगम तथा 'सि' लोप करने की अपेक्षा कच्चायन में किये गये 'अं' आदेश से बोध में सुगमता होती है।। २९३।

२९४. 'व्' आगम (९)

कातन्त्र भुवो वोऽन्तः परोक्षाऽद्यतन्योः (३/४/६२)।

परोक्षा तथा अद्यतनी विभक्तियों के परे रहते 'भू' धातु के अन्त में वकारागम होता है। जैसे—'बभूव' इत्यादि।

कच्चायन ब्रूभूनमाहभूवा परोक्खायं (३/३/१८)।

परोक्षा विभक्ति की परता में 'भू' धातु को 'भूव' आदेश होता है। जैसे—'बभूव' इत्यादि।

समीक्षा आगम और आदेश-प्रयुक्त भिन्नता होने पर भी शब्दरूप में उभयत्र समानता ही देखी जाती है।। २९४।

२९५. वर्णागम आदि (१०)

कातन्त्र लोकोपचाराद् ग्रहणसिद्धिः (१/१/२३)।

जिन शब्दों के सिद्ध्यर्थ कातन्त्र व्याकरण में सूत्र नहीं बनाए गए हैं, उनकी सिद्धि वर्णागम आदि के द्वारा लोकव्यवहार के अनुसार समझ लेनी चाहिए। जैसे—'हंसः, सिंहः' इत्यादि।

कच्चायन तेसु वुद्धिलोपागमविकारविपरीतादेसा च (२/८/६१)।

बुद्धवचन के अनुसार कहीं-कहीं आदि, मध्य तथा अन्त्य स्वरों को 'वृद्धि-लोप-आगम-विकार-विपर्यय' तथा 'आदेश' होते हैं। जैसे—'सुखसेय्यं, भिक्खु, वुत्तो, आरिस्सं, दिगु, यूनं' इत्यादि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समीक्षा कातन्त्र व्याकरण के व्याख्याकारों ने कुछ कार्यों का विधान लोकव्यवहार के आधार पर माना है। कच्चायन ने भी इस प्रकार का निर्देश सूत्र द्वारा दिखाया है। अतः कातन्त्र में संक्षेप का अनुसरण किया गया है, जब कि कच्चायन में शिष्यों के बोध को ध्यान में रखकर सूत्र-निर्देश का आश्रय लिया गया है।। २९५।

२९६. 'वृद्धि' आगम (११)

कातन्त्र **न य्वोः पदाद्योर्वृद्धिरागमः** (२/६/५०)।

णकारानुबन्ध वाले तद्धित प्रत्यय के परवर्ती होने पर पद के आदि (समीप) में स्थित यकार-वकार से पूर्व वृद्धि का आगम होता है। जैसे—'वैयाकरणः, सौवश्विः' इत्यादि।

कच्चायन **मा यूनमागमो ठाने** (२/८/५८)।

आदिभूत 'इ-उ' के स्थान में 'ए, ओ' वृद्धि का आगम होता है। जैसे—'नेय्यायिको, दोवारिको' इत्यादि।

समीक्षा कच्चायन के वर्णसमाम्नाय में 'ऐ-औ' वर्णों का पाठ नहीं है। अतः वहाँ 'ए, ओ' वर्णों के रूप में वृद्धि होती है। फलतः इस वर्णप्रयुक्त भेद के अतिरिक्त अन्य प्रकार की तो उभयत्र समानता ही है।। २९६।

२९७. 'सु' आगम (१२)

कातन्त्र **सुरामि सर्वतः** (२/१/२९)।

सर्वनामसंज्ञक अवर्णान्त लिङ्ग से 'आम्' प्रत्यय के परे रहते 'सु' आगम होता है। जैसे—'सर्वेषाम्, तासाम्, केषाम्, येषाम्' इत्यादि।

कच्चायन **सब्बतो नं संसानं** (२/३/८)।

सभी सर्वनामों के पश्चात् आने वाली 'नं' विभक्ति के स्थान में 'सं' तथा 'सानं' आदेश होते हैं। जैसे—'सब्बेसं, सब्बेसानं' इत्यादि।

समीक्षा भाषाभेद से उदाहरणों में भेद होने पर भी आदेश में आंशिक समानता देखी जाती है।। २९७।

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१३. व्याकरण में लोकव्यवहार के समादर का समीक्षात्मक अध्ययन

२९८. अनुक्त शब्दों की सिद्धि का उपाय (१)

कातन्त्र लोकोपचाराद् ग्रहणसिद्धिः (१/१/२३)।

जो शब्द सूत्र द्वारा सिद्ध नहीं किए गये हैं, उनकी सिद्धि लोकव्यवहार (अन्य व्याकरण तथा शिष्टप्रयोग) के अनुसार कर लेनी चाहिए। जैसे— 'गच्छामहे, जयते' इत्यादि।

कच्चायन क्वचि धातुविभत्तिप्पच्चयानं दीघविपरीतादेसलोपागमा च (३/४/३६)।

इस आख्यात-प्रकरण में जिन प्रयोगों का व्याख्यान अलग से नहीं किया गया है, उनमें धातु-विभक्ति इत्यादि से सम्बन्धित कार्य बुद्धवचन के अनुरूप करने चाहिए। जैसे—'जायति, गच्छे' इत्यादि।

समीक्षा जिस विषय का समावेश कातन्त्रकार ने एक सूत्र में किया है, उसका कच्चायनकार ने अनेक सूत्रों में पृथक्-पृथक् प्रकरणों में निबन्धन किया है। यह अपने-अपने व्याकरण की प्रक्रिया के अनुसार किया गया प्रतीत होता है। अतः यहाँ किसी में लाघव-गौरव नहीं मानना चाहिए।। २९८।

२९९. लोकव्यवहार पर आधारित शब्दसिद्धि की प्रामाणिकता (२)

कातन्त्र लोकोपचाराद् ग्रहणसिद्धिः (१/१/२३)।

शब्दों के अनन्त होने के कारण और उन सभी अनन्त शब्दों का साधुत्वबोध किसी एक व्याकरण द्वारा सम्भव न होने के कारण सभी शाब्दिक आचार्यों ने अपने-अपने ग्रन्थों में यह निर्देश किया है कि जिन शब्दों की सिद्धि इसमें नहीं बताई गई है, उनकी सिद्धि शिष्टव्यवहार से तथा अन्य व्याकरणों से जान लेनी चाहिए। जैसे—'वरणाः' इत्यादि। यह शब्द वृक्ष की संज्ञा होने के साथ-साथ नगरबोधक भी है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **अनुपदिट्ठानं वुत्तयोगतो (१/५/१०)।**

स्वरसन्धि तथा व्यञ्जनसन्धि-सम्बन्धी जो विधान उपसर्ग और निपातों में यहाँ बताये गये हैं, उनकी योजना यथोचित रूप (शिष्टजनव्यवहार तथा अन्य व्याकरणों के अनुसार) में कर लेनी चाहिए। जैसे—'उप+अयनं= उपायनं' इत्यादि।

समीक्षा किसी भी भाषा में शब्दों की संख्या निश्चित नहीं की जा सकती, क्योंकि शब्द अनन्त होते हैं। कोई एक व्याकरणग्रन्थ उन सभी शब्दों का बोध कराने में समर्थ नहीं होता। इसलिए यह निर्देश आवश्यक प्रतीत होता है। सभी वैयाकरणों ने अपने-अपने ग्रन्थों में इस प्रकार का निर्देश किया है।। २९९।

३००. शब्दसाधुत्व में लोकव्यवहार (निपातन) की प्रामाणिकता (३)

कातन्त्र **लोकोपचाराद् ग्रहणसिद्धिः (१/१/२३)।**

कातन्त्र व्याकरण में जो शब्द सूत्रों द्वारा सिद्ध नहीं किए गये हैं, उनका साधुत्व वर्णलोप, आगम, विकार आदि के द्वारा लोकव्यवहार के अनुसार समझ लेना चाहिए। जैसे—'पञ्चालाः जनपदः, खलतिकं वनानि, हरीतक्यः फलानि' इत्यादि।

कच्चायन **यदनुपपन्ना निपातना सिज्झन्ति, दसदसकं सतं दसकानं सतं सहस्सञ्च योम्हि, सकनामेहि (२/८/४८, ५०, ५२)।**

सन्धि, प्रकृतिभाव आदि से अव्याख्यात शब्द, उत्तरपद में होने वाले आदेश तथा सूत्रों में अनिर्दिष्ट संख्याशब्द निपातन से सिद्ध होते हैं। जैसे—'दसकं, सतं, कोटि, द्विकं' इत्यादि।

समीक्षा शब्दों के अनन्त होने से किसी भी व्याकरण के द्वारा सभी शब्दों की सिद्धि करना सम्भव नहीं है। अतः प्रत्येक शाब्दिक आचार्य ने अव्याख्यात शब्दों की सिद्धि के लिए प्रायः लोकव्यवहार को ही प्रमाण माना है। जिनमें पाणिनि, हेमचन्द्र और अनुभूतिस्वरूप आदि के साथ कातन्त्रकार का स्मरण किया जा सकता है। इसी के लिए यहाँ कच्चायनकार ने निपातनविधि को अपनाया है। एतदर्थ २/८/४९ और २/८/५१ सूत्र भी द्रष्टव्य हैं। निपातन की परिभाषा करते हुए कहा गया है कि—'रूढ्यर्थं च निपातनम्'।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

"अप्राप्तेः प्रापणं चापि प्राप्तेर्वारणमेव च।
अधिकार्थविवक्षा च त्रयमेतन्निपातनात्"

इत्यादि। अर्थात् रूढिसिद्ध कार्यों के विधानार्थ निपातनविधि का आश्रय लिया जाता है। इसके लिए कहीं तो सूत्र से अप्राप्त विधि करनी पड़ती है, कहीं पर सूत्र से प्राप्त विधि का निषेध करना पड़ता है और कहीं पर एक से अधिक अर्थ की भी प्रतीति होती है। कहीं पर एक, कहीं पर दो तथा कहीं पर तीनों कार्यों को अपनाना पड़ता है।। ३००।

३०१. लोकव्यवहार के आधार पर शब्दसाधुत्व (४)

कातन्त्र **लोकोपचाराद् ग्रहणसिद्धिः** (१/१/२३)।

व्याकरणग्रन्थों में अनुक्त शब्दों का भी साधुत्व लोकव्यवहार के अनुसार माना जाता है। जैसे—'पञ्चालाः, वरणाः' इत्यादि।

कच्चायन **पच्चयादनिद्दिट्ठा निपातना सिज्झन्ति** (४/३/१)।

संख्या, नाम, समास, आख्यात आदि विषयक जिन शब्दों की सिद्धि के लिए सूत्र नहीं बनाये गये हैं, उनकी सिद्धि निपातन द्वारा होती है। जैसे—'सोळस, अज्ज, चोरभयं, वादको' इत्यादि।

समीक्षा सभी शाब्दिक आचार्यों के द्वारा कहा गया है कि अनुक्त शब्दों का साधुत्व लोकव्यवहार के आधार पर जान लेना चाहिए। यहाँ कातन्त्रकार ने अनुक्त को लोकव्यवहार कहा है और कच्चायनकार ने निपातन माना है। इस प्रकार आधारभूत निर्देशों के भिन्न-भिन्न होने पर भी फल की दृष्टि से उभयत्र समानता है।। ३०१।

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१४. समीक्षित १३ विषयों का परिचय

१. सञ्ज्ञा

भावसाधन (संज्ञानमिति संज्ञा) से 'सञ्ज्ञा' शब्द का यथोचित या सम्यक् ज्ञान अर्थ होता है—'सञ्ज्ञार्थं तान् ब्रवीमि ते' (भ० गी० १/७)। कर्मसाधन (संज्ञायते इति संज्ञा) से सञ्ज्ञा शब्द रूढि-अर्थ का बोध कराता है—'भार्या नाम क्षत्रियाः' (म० भा० प्र०, बा० म० ३/१/११२)। यहाँ क्षत्रियविशेष में 'भार्या' शब्द रूढ है। नाम अर्थ में सञ्ज्ञा शब्द करणसाधन (संज्ञायतेऽनेनेति संज्ञा) माना जाता है—'लोकसंव्यवहारार्थं याः सञ्ज्ञाः प्रथिता भुवि' (मनु० ८/१३१)। व्याकरण-शास्त्र में सञ्ज्ञाओं का प्रयोग इसी अर्थ में हुआ है। किसी भी वस्तु का व्यवहार तब तक सम्भव या सुविधाजनक नहीं होता, जब तक उसकी सञ्ज्ञा का ज्ञान न हो। इसलिए बृहद्देवता में कहा गया है कि वस्तुओं के नाम अवश्य जानने चाहिए, क्योंकि विना नामों को जाने मन्त्रों को भी नहीं जाना जा सकता—

अवश्यं वेदितव्यो हि नाम्नां सर्वस्य विस्तरः ।
न हि नामान्यविज्ञाय मन्त्राः शक्या हि वेदितुम् ।। (बृ० दे० १/८०)।

बाह्यरूप में विज्ञात क्षमा, वायु, आदित्य आदि संज्ञाएँ बुद्धिगम्य होने के कारण बौद्ध मानी जाती हैं। जहाँ वस्तुरचना से पूर्व सञ्ज्ञा का उच्चारण होता है, वहाँ उसे बुद्धिगम्य मानकर ही भाविसंज्ञापक्ष का आश्रय लिया जाता है। शास्त्र में अपूर्व संज्ञाओं का प्रयोग होता है, जिनमें कुछ अन्वर्थ होती हैं और कुछ सांकेतिक। सभी अर्थों को कहने में समर्थ शब्द की शक्ति का नियमन सञ्ज्ञाओं में करना पड़ता है—'**सर्वार्थाभिधानयोग्यशब्दस्य शक्तिनियमनमात्रं सञ्ज्ञाकरणम्**' (म० भा० प्र० १/१/२७)। साङ्केतिक व्यवहार की अपेक्षा शब्द से किए जाने वाले व्यवहार में लाघव=सरलता होती है और उसमें भी सञ्ज्ञाव्यवहार से सर्वाधिक लाघव होता है—'**शब्दव्यवहारो लघुस्ततोऽपि लघीयो नाम, लघ्वर्थं हि संज्ञाकरणम्**' (म० भा० प्र० १/१/२७)।

लोक में संज्ञाव्यवहार के तीन प्रयोजन होते हैं—१. पापसमूह का विनाश, २. सुविधा से व्यवहार की सम्पन्नता तथा ३. गुणों का प्रकाशन। परन्तु व्याकरणशास्त्र में न्यूनतः आठ प्रयोजन देखे जाते हैं—१. सुविधा से अर्थ का अवबोध कराना, २. अन्वर्थता का अवबोध, ३. सुखपूर्वक अर्थावबोध, ४. शब्दशक्ति का नियमन, ५. धर्म की प्राप्ति, ६. मङ्गलाचरण, ७. पूर्वाचार्यों की कीर्ति

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

का रक्षण तथा ८. अन्य विविध कार्यों की सम्पन्नता। सामान्यतया कहा जाता है कि व्याकरणशास्त्र में एक या दो अक्षरों वाली ही संज्ञा करनी चाहिए। इनसे अधिक अक्षरों वाली संज्ञाओं को महासंज्ञा माना जाता है और महासंज्ञाएँ अन्वर्थ होती हैं। विना सञ्ज्ञाओं का व्यवहार किए व्याकरणशास्त्र की रचना संभव नहीं होती। इसीलिए **चन्द्रगोमी** को संज्ञासूत्र न बनाने की प्रतिज्ञा करके भी सञ्ज्ञाशब्दों का व्यवहार चान्द्रव्याकरण में करना ही पड़ा है। कच्चायन न्यास में भी तीन प्रकार की संज्ञाएँ बतलाई गई हैं—'अनवत्थसञ्ञा, सकसञ्ञा, परसञ्ञा' (पृ० ३६)। कातन्त्र और कच्चायन की अधिकांश संज्ञाओं में समानता होने के साथ ही सूत्र रचनाशैली भी प्रायः समान है।

२. परिभाषा

शास्त्रीय प्रक्रिया की सङ्गति दिखाने के लिए जिन नियम-वचनों को स्वीकार किया जाता है, उन्हें ही परिभाषा कहते हैं। विधिसूत्रों से पूर्व तथा पर में ये परिभाषाएँ की जाती हैं—'भाष्यन्ते परितो यस्मात् परिभाषास्ततः स्मृताः' (कात० परि० वृ०)। शास्त्रीय परिभाषाएँ दो प्रकार की होती हैं—१. लिङ्गवती तथा २. विध्यङ्गशेषभूत। विशिष्ट लिङ्ग=लक्षण वाली परिभाषाएँ लिङ्गवती होती हैं। जैसे—"**आगम उदनुबन्धः स्वरादन्त्यात् परः**" (कात० २/१/६)। इसके अनुसार उकारानुबन्धविशिष्ट 'नु' आदि आगम अन्तिम स्वर के बाद में प्रवृत्त होते हैं। दीपक तथा सूर्य की तरह ये परिभाषाएँ एक स्थान में रहकर भी सम्पूर्ण शास्त्र को प्रकाशित करती रहती हैं—

एकस्थः सविता देवो यथा विश्वप्रकाशकः ।
तथा लिङ्गवती शास्त्रमेकस्थापि प्रदीपयेत् ।।

किसी विधि के प्रवर्तन-हेतु नियम का निर्धारण करती हुई प्रत्येक विधिसूत्र के साथ जो सम्बन्ध स्थापित करती है, उसे विध्यङ्गशेष परिभाषा माना जाता है। जैसे—"प्रत्ययः परः" (कात० ३/२/१)—

एकापि पुंश्चली पुंसां यथैकैकं प्रयाति हि ।
विध्यङ्गशेषभूता तद्विधिं प्रत्यनुगच्छति ।।

किन्हीं परिभाषाओं से कुछ वचनों को ज्ञापित किया जाता है, वे भी सूत्र की तरह प्रमाण होते हैं। वृत्तिकार आदि के द्वारा आवश्यकतानुसार जो न्यायवचन स्वीकार किया जाता है उसे वाचनिक परिभाषा कहते हैं। कातन्त्र तथा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन की ३ परिभाषाओं में से दो में पूर्ण समानता है, जो परिभाषाएँ पाणिनि ने नहीं की हैं।

३. विधि

प्राप्त न होने पर जो कार्य किया जाता है, उसे विधि कहते हैं—'विधिरत्यन्तमप्राप्तौ'। विधियाँ दो प्रकार की होती हैं—१. वर्णोत्पादनरूप तथा २. अभावरूप। वर्णोत्पादनरूप विधियों में वृद्धि-गुण आदि कार्य स्वीकार किए जाते हैं, जहाँ "**अवर्णादूटो वृद्धिः**" (कात० ४/६/११६) इत्यादि सूत्रों द्वारा 'आर्-ऐ-औ' आदि वर्णों की निष्पत्ति होती है। अभावरूपविधि के भी दो भेद हैं—१. नाशरूप तथा २. निषेधरूप। नाशरूप विधि में लोप आदि कार्य किए जाते हैं, जबकि निषेधरूप विधि में कार्य का बाध होता है। दीर्घादि विधियों की प्रक्रिया भिन्न-भिन्न व्याकरणों में पृथक्-पृथक् देखी जाती है। जैसे पाणिनीय व्याकरण के अनुसार 'श्री+ईशः=श्रीशः' शब्दरूप दोनों=पूर्व-पर ईकारों के स्थान में एक दीर्घ ईकार आदेश होता है, परन्तु कातन्त्र में पूर्ववर्ती ईकार को ईकार और परवर्ती ईकार का लोप करके रूपसिद्धि की जाती है। इसी प्रकार 'सुर+ईशः =सुरेशः' की सिद्धि पाणिनि 'अ-ई' दो वर्णों के स्थान में एक 'ए' आदेश करके बताते हैं, परन्तु कातन्त्रकार एतदर्थ पूर्ववर्ती अकार के स्थान में एकारादेश तथा परवर्ती ईकार का लोप करते हैं। कच्चायन का विधिनिर्देश कातन्त्र के अधिक समीप है। वृद्धि-गुण आदि विधियों का निर्देश स्थानी-आदेश-निमित्त की अपेक्षा रखता है। पाणिनि ने स्थानी का निर्देश षष्ठ्यन्त, आदेश का प्रथमान्त तथा निमित्त का सप्तम्यन्त किया है, परन्तु कातन्त्र में स्थानी का निर्देश प्रथमान्त, आदेश का द्वितीयान्त तथा निमित्त का सप्तम्यन्त प्राप्त होता है। निपातन से होने वाले कार्य भी विधि के ही अन्तर्गत परिगणित होते हैं। कुछ विधियाँ नित्य होती हैं तो कुछ वैकल्पिक। वैकल्पिक विधियों का निर्देश 'वा-अन्यतरस्याम्' इत्यादि शब्दों से या फिर किसी पूर्वाचार्य के नामोल्लेख से किया जाता है। कातन्त्र-कच्चायन की विधि-निषेध प्रक्रिया भी अधिकांश समानता रखती है।

४. नियम

विधियों की नित्य प्रवृत्ति होने पर जिससे नियमन किया जाता है, उसे नियम कहते हैं। सामान्यरूप से प्राप्त कार्य का जहाँ विशेषरूप में निश्चय किया जाता है, वहाँ नियम होता है। यह नियम दो प्रकार का मान्य है—१. प्रकृतिनियम तथा २. प्रत्ययनियम। यह प्रकृति-प्रत्ययनियम 'एव' शब्द के प्रयोग से जाना जाता है। जहाँ प्रत्यय के बाद 'एव' शब्द का प्रयोग होता है, वहाँ प्रत्ययनियम और

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

जहाँ प्रकृति के बाद 'एव' शब्द का प्रयोग किया जाता है, वहाँ प्रकृतिनियम समझना चाहिए। परन्तु यह नियमविधि प्रायिक ही होती है सार्वत्रिक नहीं। "सिद्धो वर्णसमाम्नायः" (कात० १/१/१) इस सूत्र की व्याख्या में कलापचन्द्रकार आचार्य सुषेण विद्याभूषण ने कहा है कि प्रसिद्ध-अप्रसिद्ध रूप दो प्रकार का वर्णसमाम्नाय उपलब्ध होता है। प्रसिद्ध वर्णसमाम्नाय तो वह है जो लोक में प्रचलित है और अप्रसिद्ध 'अ इ उण्, ऋ लृक्' इत्यादि माहेश्वरसूत्रों में पठित प्रत्याहाररूप। परन्तु कातन्त्र में अप्रसिद्ध=अप्रचलित को बाधकर लोकप्रसिद्ध वर्णसमाम्नाय स्वीकार किया गया है।

परिभाषा से भी किसी का नियमन किया जाता है, परन्तु उसे नियम नहीं माना जा सकता, क्योंकि विधियों की नित्य प्रवृत्ति में जिसके द्वारा नियमन होता है वह नियम और विधियों की पाक्षिक प्रवृत्ति में जिसके द्वारा नियमन होता है वह परिभाषा होती है। सूत्र में कहीं एक ही पद नियम बनाता है तो कहीं पर योगविभाग के द्वारा नियम स्वीकार किया जाता है। कहीं पर एक ही विषय में दो-तीन-चार प्रकार के नियम अपनाए जाते हैं। जैसे—"**क्विप् च**" (कात० ४/३/६८) सूत्र से 'ब्रह्महा' इत्यादि में भी क्विप् प्रत्यय के सिद्ध होने पर फिर जो "क्विब् ब्रह्मभ्रूणवृत्तेषु, कृञः सुपुण्यपापकर्ममन्त्रपदेषु, सोमे सुञः, चेरग्नौ" (कात० ४/३/८३-८६) ये चार सूत्र बनाए गए हैं, उससे दो-तीन-चार प्रकार के नियम आचार्यों (व्याख्याकारों) द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। कातन्त्र-कच्चायन के ४ नियमों का विधान प्रायः समान ही है।

५. अतिदेश

उपचार या आरोप को अतिदेश कहते हैं। इसमें अन्य के धर्म को अन्य में आरोपित करना पड़ता है—'अतिदिश्यते, अतिदिश्यतेऽनेनेति वा अतिदेशः'। यह मुख्यरूप से चार प्रकार का होता है—१. शास्त्रातिदेश, २. निमित्तातिदेश, ३. व्यपदेशातिदेश तथा ४. रूपातिदेश। कुछ आचार्य कार्यातिदेश तथा तादात्म्यातिदेश को भी पृथक् मानते हैं। अतः अतिदेश छह प्रकार का भी माना जाता है। किसी के विचार से शास्त्रातिदेश तथा कार्यातिदेश में अभिन्नता स्वीकार की जाती है। कातन्त्र में तादात्म्यातिदेश का कोई उदाहरण नहीं है। अतः वहाँ ५ ही अतिदेश मान्य हैं। पञ्जिकाकार के अनुसार रूपातिदेश भी स्वतन्त्र नहीं होता, किन्तु वह कार्यातिदेश का ही एक भेद होता है। तत्त्वबोधिनीकार ज्ञानेन्द्र सरस्वती तो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अर्थातिदेश को भी स्वतन्त्र अतिदेश मानते हैं। अतः अतिदेश के सात भेद कहे जा सकते हैं—

कार्यरूपनिमित्तार्थशास्त्रतादात्म्यशब्दिताः ।
व्यपदेशश्च सप्तैतानतिदेशान् प्रचक्षते ।।

(त० बो० ७/१/९५ - अजन्तपुंल्लिङ्ग)।

अतिदेशव्यवहार के लिए 'इव' या 'वत्' शब्द का प्रयोग किया जाता है। कहीं-कहीं पर सादृश्यवाचक शब्द-प्रयोग के अभाव में भी अतिदेश परिलक्षित होता है—''अन्तरेणापि वतिमतिदेशो गम्यते''। गाय के समान गवय होता है। अर्थात् गाय के रूप के सदृश ही गवय होता है। इस प्रकार लोकव्यवहार में भी अतिदेश का प्रचलन देखा जाता है। कुछ आचार्य अतिदेशप्रयुक्त कार्य को अनित्य मानते हैं, परन्तु महाभाष्यकार द्वारा इसे न कहे जाने के कारण प्रामाणिक नहीं माना जाता। कातन्त्र में **''अग्निवच्छसि, स्त्री नदीवत्, भाषितपुंस्कं पुंवद् वा''** (२/१/६५; २/३, १४) इत्यादि सूत्र अतिदेश के उदाहरण हैं। कातन्त्र-कच्चायन का पुंवद्भावविधान समानता रखता है।

६. अधिकार

स्वामित्व स्थापित करना या जिसके द्वारा स्वामित्व स्थापित किया जाए, उसे अधिकार कहते हैं—'अधिकरणम् अधिक्रियतेऽनेन वेत्यधिकारः'। कहीं पर सम्पूर्ण सूत्र का तथा कहीं पर एकदेश का ही अधिकार प्रवृत्त होता है। आचार्य बिल्वेश्वर के अनुसार आगे कहे जाने वाले अर्थ में लाघव पैदा करने के लिए कार्यी-कार्य-निमित्त रूप पदों का जो कथन किया जाता है, उसे ही अधिकार कहते हैं—

कार्यिकार्यनिमित्तानां पदानां यदुदीरणम् ।
वक्ष्यमाणार्थसंक्षेपायाधिकारः स उच्यते ।। (बि० टी० ३/३/१)।

अर्थात् पूर्वसूत्रवर्ती पदादि का उत्तरवर्ती सूत्रों में आकाङ्क्षादिवश जो अनुवर्तन किया जाता है, उसे ही अधिकार माना गया है। आकाङ्क्षा के ही कारण अनुवृत्ति की मान्यता होने से अव्यवहितोत्तरवर्ती सभी सूत्रों में अधिकार की प्रवृत्ति नहीं होती—**'इष्टितो ह्यधिकाराणां प्रवृत्तिनिवृत्ती स्याताम्'** (वि० प० ३/४/६७)। महाभाष्यकार ने परिभाषारूप अधिकार को उस दीपक की तरह माना है जो घर के मध्य में एकत्र विद्यमान रहकर अपने प्रकाश से सम्पूर्ण घर को प्रकाशित करने की तरह शास्त्र में एकत्र पठित होने पर भी समस्त शास्त्र को

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्याप्त किए रहता है। दूसरा अधिकार ऐसा होता है जैसे कोई पुरुष जञ्जीर या रस्सी से किसी काष्ठपिण्ड को खींचकर अभीष्ट स्थान में ले जाता है, उसी प्रकार परवर्ती सूत्र में पठित चकार के द्वारा पूर्ववर्ती सूत्र में पठित पद का आकर्षण किया जाता है। तीसरे प्रकार का अधिकार वह होता है जो प्रत्येक सूत्र में निर्दिष्ट न होने पर भी प्रत्येक सूत्र में उपस्थित होता है। कातन्त्र-कच्चायन में कालाधिकार समान रूप में देखा जाता है।

कातन्त्रकार ने ४ प्रकार के अधिकार माने हैं—१. गोयूथ, २. सिंहदृष्टि, ३. मण्डूकप्लुति तथा ४. गङ्गास्रोत:प्रवाह—

गोयूथः सिंहदृष्टिश्च मण्डूकप्लुतिरेव च ।
गङ्गास्त्रोतःप्रवाहश्च ह्यधिकारश्चतुर्विधः ।।

(मङ्गला टीका ३/८/५)।

कच्चायन न्यास में भी तीन प्रकार के अधिकार बतलाये गये हैं, जो कातन्त्र से प्रायः साम्य रखते हैं। यथा—"तिविधा हि अधिकारा-यथानुपुब्बिका, मण्डूकगतिका, सीहगतिका च" (पृ० १३७)।

७. सन्धि

सभी व्याकरणों में सन्धि का विधान अवश्य किया जाता है। कातन्त्रव्याकरण की रचना का तो आधार ही सन्धि है। महारानी के द्वारा 'मोदकैर्मां ताडय' या 'मोदकं देहि देव!' यह वचन 'मा+उदकम्' इस सन्धिविच्छेद के अभिप्राय से कहा गया था, परन्तु राजा सातवाहन ने ऐसा न समझकर 'मोदकम्' ही समझा था, जिससे उन्होंने अनवसर में महारानी को जब मोदक भेंट किए थे तो रानी ने इस मूर्खता पर राजा का उपहास किया था—

राजन्नवसरः कोऽत्र मोदकानां जलान्तरे ।
उदकैः सिञ्च मा त्वं मामित्युक्तं हि मया खलु ।।

सन्धिमात्रं न जानासि माशब्दोदकशब्दयोः ।
न च प्रकरणं वेत्सि मूर्खस्त्वं कथमीदृशः ।।

(क० स० सा० ७/११६-१७)।

मुख्यतः व्याकरण में पाँच प्रकार की सन्धियाँ मानी जाती हैं—१. स्वर-सन्धि, २. व्यञ्जनसन्धि, ३. प्रकृतिसन्धि, ४. अनुस्वारसन्धि तथा ५. विसर्गसन्धि—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्वरसन्धिर्व्यञ्जनसन्धिः प्रकृतिसन्धिस्तथैव च ।
अनुस्वारो विसर्गश्च सन्धिः स्यात् पञ्चलक्षणः ।।

जैसे स्वरसन्धि—'मधूदकम्, सेयम्, लाकृतिः' इत्यादि। व्यञ्जनसन्धि—'वागीशः, तद्धितम्, तज्जयति, भवांश्छादयति' इत्यादि। प्रकृतिभावसन्धि—'अहो आश्चर्यम्, अग्नी एतौ, अमी अश्वाः' इत्यादि। अनुस्वारसन्धि—'त्वं रमसे, त्वं करोषि, पुंभ्याम्' इत्यादि। विसर्गसन्धि—'कश्चरति, कस्तरति, कश्शेते, कोऽर्थः' इत्यादि।

पालि व्याकरण के ग्रन्थों में सन्धि के वर्गीकरण का एक अन्य प्रकार भी दृष्टिगत होता है—"सो चायं पुब्बापरो सन्धि चतुब्बिधो—अत्थसन्धि, ब्यञ्जन सन्धि, देसना सन्धि, निद्देस सन्धी ति।

तत्थ अत्थसन्धि छप्पदानि सङ्कासना पकासना विवरणा विभजना उत्तानीकम्मता पञ्ञत्ती ति। ब्यञ्जन सन्धि छप्पदानि अक्खरं पदं ब्यञ्जनं आकारो निरुत्ति निद्देसो ति। देसना सन्धि न च पथविं निस्साय झायति...। निद्देस सन्धि निस्सिनचित्ता अकुसलपक्खेन निद्दिसितब्बा, अकुसल चित्ता कुसलपक्खेन निद्दिसितब्बा (नेत्तिप्पकरण-६)।

कच्चायनवण्णना में कहा गया है कि 'उपचार सन्धि नाम-आगमलोप आदेस-विकारपकतिदीघरस्सवसेन सत्तविधो। अर्थात् 'आगम-लोप-आदेस-विकार-प्रकृति-दीर्घ-ह्रस्व—ये सात प्रकार की उपचार सन्धियाँ होती हैं (पृ० २९)।

सन्धि के लिए 'संहिता' शब्द का प्रयोग अधिक प्राचीन है। संहिता या सन्धि एक पद में, धातु-उपसर्गों में, समास में, सूत्रों में तो नित्य होती है, परन्तु वाक्य में यह स्वैच्छिक है—

संहितैकपदे नित्या नित्या धातूपसर्गयोः ।
सूत्रेष्वपि तथा नित्या सैवान्यत्र विभाषया ।। (क० च० १/१/१३)।

सन्धि वर्णों के परम सन्निकर्ष में ही मानी जाती है—"**परः सन्निकर्षः संहिता**" (अ० १/४/१०९)। परन्तु स्वभावतः प्राप्त अर्धमात्रिक व्यवधान तो रहता ही है। इसलिए संहिता की परिभाषा करते हुए कहा गया है—'स्वभावसिद्धार्ध-मात्रातिरिक्तकालव्यवायशून्यत्वं संहितात्वम्'। कच्चायन-कातन्त्र के सन्धि कार्य में प्रायः समानता दिखाई देती है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

८. विभक्ति

अर्थ का विभाग जिससे किया जाता है, उसे विभक्ति कहते हैं—'अर्थस्य विभञ्जनाद् विभक्तयः'। कातन्त्र में द्व्यादिगणपठित से भिन्न सर्वनामसंज्ञक शब्दों से तथा 'बहु' शब्द से पर में होने वाले 'तस्-त्र' आदि प्रत्ययों की विभक्ति संज्ञा होती है—

विभक्तिसंज्ञा विज्ञेया वक्ष्यन्तेऽतः परं तु ये ।
अद्व्यादेः सर्वनाम्नस्ते बहोश्चैव पराः स्मृताः ।। (कात० २/६/२४)।

पाणिनि ने विभक्तिसंज्ञक ११ प्रत्यय पढ़े हैं (अ० ५/३/१, २), जबकि कातन्त्र में ये १० ही हैं। स्यादि तथा त्यादि प्रत्ययों की भी विभक्तिसंज्ञा होती है—"तस्मात् परा विभक्तयः, नव पराणि" (२/१/२; ३/१/१)। 'सि' आदि २१ प्रत्यय तथा 'ति' आदि १८० प्रत्यय कातन्त्र में गिनाए गए हैं। तस् आदि १० प्रत्यय इस प्रकार हैं—'तस्, त्र, ह, अत्, दा, र्हि, अधुना, दानीम्, था, थमु'। स्यादि या सुप् विभक्तियाँ ७ तो प्रसिद्ध ही हैं, कहीं पर संबोधन को भी जोड़ लेने पर इन विभक्तियों की संख्या ८ हो जाती है। बृहद्देवता में कहा भी गया है—

अष्टौ यत्र प्रयुज्यन्ते नानार्थेषु विभक्तयः ।
तन्नाम कवयः प्राहुर्भेदे वचनलिङ्गयोः ।। (बृ० दे० १/४३)।

इसका प्रयोग पूर्वाचार्यों ने भी किया है। तदर्थ गोपथब्राह्मण, ऋक्तन्त्र आदि ग्रन्थ द्रष्टव्य हैं। नाट्यशास्त्र में इसकी व्युत्पत्ति करते हुए कहा गया है—

एकस्य बहूनां वा धातोर्लिङ्गस्य पदानां वा ।
विभजन्त्यर्थं यस्माद् विभक्तयस्तेन ताः प्रोक्ताः ।। (ना०शा०१४/३०)।

कच्चायन की विभक्तियाँ कातन्त्र से अधिकांश मेल खाती हैं।

९. प्रत्यय

जिससे अर्थों का ज्ञान होता है, उसे प्रत्यय कहते हैं—'प्रतियन्त्यनेनार्थम्'। ये चार प्रकार के होते हैं—१. स्यादि, २. त्यादि, ३. कृत् तथा ४. तद्धित। स्यादि और तद्धित प्रत्यय लिङ्ग (प्रातिपदिक) से होते हैं, जबकि त्यादि और कृत् प्रत्यय धातुओं से किए जाते हैं। कातन्त्रकार ने प्रत्यय की कोई परिभाषा तो नहीं की है, परन्तु २/२/६५; ६/४४; ३/२/१ सूत्रों में उनका प्रयोग किया है। लोकव्यवहार के अनुसार ही अर्थों की प्रामाणिकता होती है और अर्थों का बोध प्रत्ययों से होता है। अतः शब्द-अर्थ में अर्थ का प्राधान्य आचार्यों ने स्वीकार किया है—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

''**प्रधानप्रत्ययार्थवचनमर्थस्यान्यप्रमाणत्वात्**'' (अ०१/२/५६)। प्रत्यय की प्रधानता तथा वाचकता सिद्ध होने पर भी उसका स्वतन्त्र प्रयोग नहीं होता—

'**प्रत्ययो वाचकत्वेऽपि केवलो न प्रयुज्यते**' (वा० प० २/१९४)।

इसी प्रकार केवल प्रकृति का भी प्रयोग नहीं किया जाता। शिष्टजनों की यही मान्यता है कि जब प्रकृति-प्रत्यय दोनों का साथ प्रयोग होता है, तभी अर्थनिष्पत्ति सम्भव हो पाती है। कालिदास ने वरवधूसमागम को प्रत्ययप्रकृतिप्रोग के सदृश कहा है—

ता नराधिपसुता नृपात्मजैस्ते च ताभिरगमन् कृतार्थताम् ।
सोऽभवद् वरवधूसमागमः प्रत्ययप्रकृतियोगसन्निभः ।।

(रघुवंश ११/५६)।

गोपथब्राह्मण आदि ग्रन्थों में पूर्वाचार्यों ने तथा शाकटायन आदि व्याकरणों में अर्वाचीन आचार्यों ने प्रत्ययसंज्ञा का प्रयोग किया है। नाट्यशास्त्र के अनुसार अर्थ की पूर्ति करने वाले को 'प्रत्यय' कहते हैं—

'**यस्मात् पूरयतेऽर्थान् प्रत्यय उक्तस्ततस्तस्मात्**' (ना० शा० १४/२८)।

''प्रत्ययः परः'' (३/२/१) परिभाषा के अनुसार धातु-लिङ्ग से पर में ही प्रत्यय किए जाते हैं। जिन प्रत्ययों के अर्थों का निर्देश सूत्रवचन द्वारा नहीं किया जाता है, वे स्वार्थ में विहित होते हैं—'अनिर्दिष्टार्थाः प्रत्ययाः स्वार्थे भवन्ति'। कच्चायन के स्यादि-त्यादि-तद्धित प्रत्यय कातन्त्र से आंशिक समानता और कृत् प्रत्यय पर्याप्त समानता रखते हैं।

१०. आदेश

यह शत्रुवत् माना जाता है, क्योंकि किसी के स्थान में इसकी प्रवृत्ति होती है। आचार्य आपिशलि ने 'आदेशस्तु प्रसङ्गेन' यह कहकर इस भाव को सूचित किया है। 'षष्ठी स्थानेयोगा, स्थानेऽन्तरतमः' जैसी परिभाषाओं से भी यही सिद्ध होता है। कातन्त्रीय सन्धि-नामचतुष्टय-आख्यात-कृत्प्रकरणों में लगभग २०७ आदेश किए गए हैं। आदेश का विधान पाणिनीय व्याकरण में प्रथमा विभक्ति से तथा कातन्त्रव्याकरण में द्वितीया विभक्ति से किया जाता है। जैसे—''**इको यणचि**'' (अ० ६/१/७७) में यण् आदेश प्रथमान्त है तथा ''**इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः**'' (कात० १/२/८) में द्वितीयान्त। कुछ आचार्य एक वर्ण के स्थान में होने वाले स्थानी के विनाश को विकार तथा शब्द के स्थान में उपपन्न होने

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

वाले प्रकृतिविनाश को आदेश मानते हैं—'ननु विकारादेशयोः को भेदः, द्वयोरेव प्रकृतिविनाशप्रवर्तमानत्वात्? उच्यते—वर्णस्य स्थाने भवन् विकार उच्यते, शब्दस्य स्थाने भवन्नादेश इति' (क० च० १/२/१)। कहीं-कहीं पर स्थानी भी आदेश की तरह माना जाता है। शब्दसाधुत्व के लिए प्रकृति-प्रत्यय-आदेश-आगम आदि की कल्पना करनी पड़ती है, अतः इन्हें पारमार्थिक नहीं कहा जा सकता। ये केवल उपाय के रूप में कल्पित होते हैं। उपाय उसे कहते हैं जिसका कार्यसिद्ध्यर्थ पहले आश्रय लिया जाए और सिद्धि प्राप्त करने के बाद जिसे छोड़ दिया जाए—**'उपादायापि ये हेयास्तानुपायान् प्रचक्षते'**। पूर्व-पर-नित्य-अन्तरङ्ग-अपवाद में उत्तरोत्तर आदेश बलवान् होते हैं। आदेश और आगम में आगमविधि की बलवत्ता सिद्ध होती है। कच्चायन के ८२ आदेशों में से अधिकांश आदेश कातन्त्र से समानता रखते हैं।

११. आगम

इसे मित्रवत् माना जाता है, क्योंकि यह स्वतन्त्र रूप से पूर्व-मध्य-अन्त में उपस्थित होकर शब्द का मित्र की तरह उपकार करता है। 'आगमोऽनुपघातेन' इस आपिशलिवचन से भी यही सिद्ध होता है। कातन्त्रव्याकरण के चार अध्यायों में लगभग २६ आगम किए गए हैं। ये आगम इस प्रकार हैं—१. अ (३/४/२५), २. अट् (३/६/९२; ८/१६), ३. अनुस्वार (३/३/३१-३३), ४. अम् (४/१/२१), ५. इ (३/४/७४), ६. इट् (३/६/८७; ७/१-३७; ४/६/७६-१००), ७. ईट् (३/६/८८-९१), ८. उ (२/२/४६), ९. त् (४/१/३०), १०. त (४/४/४९), ११. तु (२/२/८), १२. थ (३/६/९५), १३. न (३/३/१९-२१; ५/३०-३४), १४. नी (३/३/३०), १५. नु (२/१/७२-७५; २/११, १२; २/१८, ४३), १६. प (३/६/२२), १७. म् (४/१/२२-२८), १८. म् (४/४/७), १९. मु (२/२/७), २०. य् (३/४/२६), २१. रि (३/५/४०), २२. री (३/३/३४), २३. ल (३/६/२३), २४. वृद्धि (२/६/५०), २५. सु (२/१/२९), २६. सुट् (३/७/३८)। उकारानुबन्ध वाले आगमों का स्थान निश्चित करने के लिए दो परिभाषासूत्र हैं—''आगम उदनुबन्धः स्वरादन्त्यात् परः, तृतीयादौ तु परादिः'' (२/१/६, ७)। अन्य आगमों का स्थान प्रायः आगमविधायक सूत्रों में ही निर्धारित किया गया है। आदेश और आगमविधि में आगमविधि को बलवान् माना जाता है। आगमविधि प्रायः अनित्य होती है—'आगमशास्त्रमनित्यम्'। जिसके लिए आगम किए जाते हैं, वे उसी के अङ्ग होते हैं और उसी के ग्रहण से उनका

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

ग्रहण किया जाता है—'आगमास्तद्गुणीभूतास्तद्ग्रहणेन गृह्यन्ते' (का० परि० १४)। कच्चायन के अनेक आदेश कातन्त्र से मेल खाते हैं।

१२. विकरण

धातु तथा त्यादि प्रत्ययों के मध्य में होने वाले प्रत्यय को विकरण कहते हैं—'धातुप्रत्यययोर्मध्यपतितत्वं विकरणत्वम्'। एक तो सामान्य प्रत्यय होता है, इसके बाद अपवाद के रूप में विशिष्ट धातुगणों में प्रवृत्त होने वाले प्रत्यय किए जाते हैं। जैसे पाणिनीय व्याकरण में "कर्तरि शप्" (अ० ३/१/६८) से विहित 'शप्' प्रत्यय औत्सर्गिक है, परन्तु अदादिगण के लिए होने वाला शप् का लुक्, जुहोत्यादि के लिए श्लु, दिवादिगण के लिए श्यन्, स्वादिगण के लिए 'श्नु', तुदादिगण के लिए 'श', रुधादिगण के लिए 'श्नम्', तनादिगण के लिए 'उ' तथा क्र्यादिगण के लिए 'श्ना' प्रत्यय अपवाद के रूप में किए जाने वाले विकरण होते हैं। कातन्त्र में औत्सर्गिक विकरण है—'अन्'। एतदर्थ सूत्र पढ़ा गया है—"अन् विकरणः कर्तरि" (३/२/३२)। अदादि-ह्वादि गणों में इसका लुक् हो जाता है—"अदादेर्लुग् विकरणस्य" (३/४/९२), दिवादि गण के लिए 'यन्', स्वादि गण के लिए 'नु', रुधादि गण के लिए 'न', तनादि गण के लिए 'उ', क्र्यादि गण के लिए 'ना' तथा चुरादि गण के लिए 'इन्' विकरण किया गया है—"दिवादेर्यन्, नुः ष्वादेः, स्वराद् रुधादेः परो नशब्दः, तनादेरुः, ना क्र्यादेः" (३/२/३३, ३४, ३६, ३७, ३८)। विकरणयुक्त धातुएँ सार्वधातुक होती हैं तथा विकरणरहित आर्धधातुक। कातन्त्रटीकाकार दुर्गसिंह के अनुसार विकरणों की योजना पूर्वाचार्यों द्वारा की गई है—"अनि च विकरणे, शानुबन्धे श्नीति न विदध्याद् विकरणस्य पूर्वाचार्यप्रसिद्धत्वात्" (३/२/३२)। पाणिनि ने विकरणसंज्ञा के लिए कोई सूत्र तो नहीं बनाया है, परन्तु विकरणों का प्रयोग किया है, जबकि कातन्त्रकार ने एतदर्थ संज्ञासूत्र भी बनाया है। कच्चायनकार ने विना ही संज्ञा के विकरणों का प्रयोग किया है, जो कातन्त्र से अधिक समानता रखते हैं।

१३. लोकव्यवहार

शिष्टों या वृद्धों के द्वारा शब्द-अर्थ पर निरन्तर विचार-विमर्श (समीक्षा) किया जाता है, उनके द्वारा किए जाने वाले व्यवहार और उस व्यवहार की परम्परा को ही लोकव्यवहार कहते हैं—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

लोक्येते येन शब्दार्थौ लोकस्तेन स उच्यते ।
व्यवहारोऽथवा वृद्धव्यवहर्तृपरम्परा ।।

(म० भा० प्र० उ० ४/१/१)।

शिष्ट उन्हें कहते हैं, जो अपने अनुभवपरक ज्ञान के आधार पर वस्तुतत्त्व का निश्चय करते हैं तथा रागादि के भी अधीन होकर जो अन्यथावादी नहीं होते। किसी एक विद्या में अवश्य ही पारङ्गत होने के साथ ही चरित्रवान् भी होते हैं। उन शिष्टजनों के द्वारा जिन व्याकरणादि शास्त्रों की रचना की जाती है, वे भी प्रमाण माने जाते हैं। इस शिष्टव्यवहार को लौकिकी विवक्षा भी कहते हैं। ऐसी मान्यता है कि व्याकरणशास्त्रीयज्ञानपूर्वक जिन शब्दों का प्रयोग किया जाता है, उन्हीं से अभ्युदयलाभ होता है। शब्द तथा अर्थ के विषय में लोकव्यवहार को प्रमाण माने जाने के कारण जिनका प्रयोग शास्त्र में नहीं देखा जाता है, उनकी प्रतिष्ठा लोकव्यवहार या अभिधान के बल पर ही सिद्ध होती है।

व्याकरणशास्त्र द्वारा जिन साधुशब्दों के लिए लक्षण बनाए जाते हैं, उनके अनन्त होने के कारण किसी एक व्याकरण द्वारा सभी शब्दों को सिद्ध नहीं किया जा सकता। यही कारण है कि सभी शाब्दिक आचार्यों ने अपने ग्रन्थों में कहा है कि जिन शब्दों की सिद्धि के लिए मेरे द्वारा सूत्र नहीं बनाए गए हैं, उनकी सिद्धि शिष्टजनों के व्यवहार तथा अन्य व्याकरणों से कर लेनी चाहिए। यह उद्घोष केवल लौकिक शब्दों के ही विषय में नहीं, किन्तु वैदिक शब्दों के भी विषय में समझना चाहिए। जैसे पाणिनि का सूत्र है—"**पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम्**" (अ० ६/३/१०९)। इसके अनुसार वर्णागम-वर्णविपर्यय-वर्णविकृति-वर्णनाशरूप उपाय (प्रक्रिया) का आश्रय लेकर 'हंस-सिंह-गूढोऽऽत्मन्-पृषोदर' आदि शब्दों को भी प्रमाण माना गया है। कातन्त्र में एतदर्थ सूत्र है—"**लोकोपचाराद् ग्रहणसिद्धिः**" (१/१/२३)। इसकी व्याख्या में वृत्तिकार ने यह भी कहा है कि वैदिक परम्परा के अविच्छिन्न रूप में चलते रहने के कारण वैदिक शब्दों का साधुत्व सम्बद्ध विद्वानों के माध्यम से जाना जा सकता है, अर्थों का भी निर्णय किया जा सकता है, परन्तु अनन्त लौकिक शब्दों की सिद्धि के लिए व्याकरणरचना आवश्यक होती है। यही कारण है कि इस व्याकरण में वैदिक शब्दों का संग्रह नहीं किया गया है—

वैदिका लौकिकज्ञैश्च ये यथोक्तास्तथैव ते ।
निर्णीतार्थास्तु विज्ञेया लोकात्तेषामसंग्रहः ।।

(कात० वृ० १/१/२३)।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायनकार ने शब्दसाधुत्व में लोकव्यवहार के अतिरिक्त बुद्धवचन तथा निपातनविधि को भी प्रमाण के रूप में स्वीकार किया है। उनके इस विषय में छह सूत्र हैं—१. **क्वचि धातुविभत्तिप्पच्चयानं०**; २. **अनुपदिट्ठानं वुत्तयोगतो**, ३. **यदनुपपन्ना निपातना सिज्झन्ति, दस दसकं सतं०, सकनामेहि; पच्चायाद-निद्दिट्ठा निपातना सिज्झन्ति** (३/४/३६; १/५/१०; २/८/४८, ५०, ५२; ४/३/१)।

सारस्वत व्याकरण के अन्त में अनुभूतिस्वरूपाचार्य ने सूत्र पढ़ा है—**''लोकाच्छेषस्य सिद्धिर्यथा मातरादेः''**। जैनाचार्य हेमचन्द्र ने अपने व्याकरण ग्रन्थ के प्रारम्भ में स्याद्वाद के आधार पर शब्दसिद्धि को प्रमाण घोषित कर लोकव्यवहार का भी महत्त्व बताने के उद्देश्य से **''लोकात्''** (१/१/३) सूत्र का पाठ किया है। पाणिनि-शर्ववर्मा आदि ने इसीलिए काल-उपसर्जन-अर्थप्रधानता आदि की व्याख्या के लिए सूत्र नहीं बनाए। महाभारतदीपिकाटीकाकार आचार्य **देवबोध** ने तो यह भी कहा है कि मुनिज़न पूर्व प्रयुक्त शब्दों का स्मरण करते हैं, अतः उनके द्वारा प्रयुक्त शब्दों में यदि लक्षण के अनुसार नवीनता प्रतीत होती हो तो भी उनके साधुत्व के सम्बन्ध में सन्देह नहीं करना चाहिए—

पदज्ञैर्नातिनिर्बन्धः कर्तव्यो मुनिभाषिते ।
अनुस्मरणतात्पर्या नाद्रियन्ते हि लक्षणम् ।। इत्यादि।

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

परिशिष्ट-१

विस्तृत समीक्षात्मक अध्ययन के तीन उदाहरण

१. वर्णसमाम्नाय

कातन्त्र **सिद्धो वर्णसमाम्नायः** (१/१/१)।

कातन्त्र व्याकरण में अकारादि वर्णों का पाठक्रम तथा संख्या लोकव्यवहार के ही अनुसार समझनी चाहिए। 'सिद्ध' शब्द के यद्यपि 'नित्य-निष्पन्न-प्रसिद्ध' ये तीन अर्थ माने जाते हैं, परन्तु व्याख्याकारों ने यहाँ 'प्रसिद्ध' अर्थ ही स्वीकार किया है। इस प्रकार पाणिनि आदि के द्वारा कृत्रिम रूप में उपदिष्ट वर्णसमाम्नाय यहाँ मान्य नहीं होगा। माहेन्द्र परम्परा का अनुसरण करने वाले इस कातन्त्रव्याकरण में संस्करणभेद से ४७, ४९, ५१, ५२ तथा ५३ भी वर्ण स्वीकार किए गए हैं—'अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ, ॡ, ए, ऐ, ओ, औ, ं - ँ (अनुस्वार), ः (विसर्ग), × (जिह्वामूलीय), ஜ - ʊ - ʊ - ω - ◎ (उपध्मानीय)। क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ। ट ठ ड ढ ण। त थ द ध न। प फ ब भ म। य र ल व। श ष स ह क्ष। प्लुत'।

इसमें 'अ' से 'औ' तक १४ स्वर, 'क' से 'क्ष' तक ३४ व्यञ्जन, 'अनुस्वार-विसर्ग-जिह्वामूलीय-उपध्मानीय' ये ४ योगवाह तथा प्लुत वर्ण सम्मिलित हैं—

व्यञ्जनानि चतुस्त्रिंशत् स्वराश्चैव चतुर्दश ।
अनुस्वारो विसर्गश्च जिह्वामूलीय एव च ।।

गजकुम्भाकृतिर्वर्णः प्लुतश्च परिकीर्तितः ।
एवं वर्णास्त्रिपञ्चाशन्मातृकाया उदाहृताः ।।

(कात० रू० मा० १/१/१)

पाणिनीय व्याकरण में 'लृ' को दीर्घ नहीं माना गया है। फलतः त्रयोदशात्मक स्वरचक्र जो शिव-शक्ति का सम्मिलित रूप है वही पाणिनि को मान्य है। कातन्त्रकार ने इसे दीर्घ भी माना है, अतः वे शिवरूप एवं शक्तिमन्त्र के रूप में निर्धारित चतुर्दशात्मक स्वरचक्र के पक्षधर कहे जा सकते हैं। १४ माहेश्वर सूत्रों में पठित वर्णसमाम्नाय पाणिनि ने स्वीकार किया है। यह क्रम और संख्या

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

की दृष्टि से अत्यन्त कृत्रिम है। इसमें ९ स्वर (अच्) तथा ३३ व्यञ्जन वर्णों (हल्) का पाठ है। इन वर्णों की सृष्टि और उनकी सृष्टितत्त्व के रूप में मान्यता का संक्षिप्त वर्णन नन्दिकेश्वरकाशिका में द्रष्टव्य है।

उस ध्वनि को वर्ण कहते हैं, जो कण्ठ-ताल्वादि स्थानों में क्रमशः अभिव्यक्त होने वाली या जिसके उच्चारणार्थ स्वतन्त्र प्रयत्न किया जाता है—**'पृथक् प्रयत्ननिर्वर्त्यं हि वर्णमिच्छन्त्याचार्याः'** (काशिका, मा० सू०-४)। इन वर्णों का समाम्नाय=क्रमिक पाठ ही 'वर्णसमाम्नाय' कहा जाता है। इसके 'अक्षरसमाम्नाय' तथा 'वाक्समाम्नाय' ये दो नामान्तर भी हैं। ऋक्तन्त्र के अनुसार कहा जाता है कि इसका उपदेश सर्वप्रथम ब्रह्मा ने बृहस्पति को, बृहस्पति ने इन्द्र को, इन्द्र ने भरद्वाज को, भरद्वाज ने ऋषियों को और ऋषियों ने ब्राह्मणों को किया था (ऋ० त० १/४)।

कच्चायन **अक्खरापादयो एकचत्तालिसं (१/१/२)।**

कच्चायन व्याकरण का यह द्वितीय सूत्र है। इसके अनुसार त्रिपिटक की भाषा के लिए अकार आदि एकतालीस वर्ण कहे गये हैं। यथा—'अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ओ। क, ख, ग, घ, ङ। च, छ, ज, झ, ञ। ट, ठ, ड, ढ, ण। त, थ, द, ध, न। प, फ, ब, भ, म। य, र, ल, व। स, ह, ळ, ं (निग्गहीत)। मोग्गल्लान-व्याकरण के अनुसार 'अ' आदि तैंतालीस वर्ण बतलाये गये हैं। यहाँ स्वरों के अन्तर्गत ऐ तथा औ वर्ण की गणना भी की गई है। कच्चायन व्याकरण के सूत्र 'अक्खरेहि कारं' (४/४/१५) से अक्षर कितने हैं, यह सन्देह उत्पन्न होता है। उनके निवारण के लिए तथा शिष्यों के ज्ञान के लिए ही यहाँ यह सूत्र 'अक्खरापादयो एकचत्तालिसं' कहा गया है। इस सूत्र को न्यासकार ने बहुत ही विस्तृत रूप से उदाहरण सहित स्पष्ट किया है। (क० न्या०, पृ० १३)। कच्चायन वण्णना में भी इस सूत्र की विस्तृत व्याख्या उपलब्ध है। 'अक्खरा' अर्थात् 'नक्खरन्ती ति अक्खरा', त्रिपिटक में प्राप्त वचनों का अर्थ-क्षीण (क्षरण) नहीं होता जिसके कारण वह अक्षर है। ये 'कण्ठ-तालु-मूर्द्धा-दन्त-ओष्ठ' इन पाँच स्थानों से निष्पन्न होते हैं।

पञ्चन्नं पन ठानानं, पटिपाटिवसा पि च ।
निस्सयादिप्पभेदेहि, वुत्तो तेसमनुक्कमो ।। (क० न्या० १३)

'अपि' शब्द अपेक्षा के अर्थ में निपात है। 'अ' आदि वर्णों की एषणा करने के अर्थ में 'आदयो' है तथा परिमाण एवं विशेषण अर्थ में 'एकचत्तालिसं'

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। इस प्रकार वर्ण संज्ञा करते हुए 'अक्खरापादयो एकचत्तालिसं' सूत्र का विधान किया गया है। कच्चायन वण्णना में यह उल्लेख प्राप्त होता है कि स्थविर महाकच्चायन ने भगवान् बुद्ध से अनुमति लेकर उनके द्वारा भाषित 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' से प्रारम्भ कर आगे के सूत्रों की रचना कर 'कच्चायनपकरण' नाम के ग्रन्थ की रचना की (क० व०, पृ० ११)।

'वर्ण संस्कार-विकार-लक्षण-निर्वाण-नियमविधान' इन पाँच ज्ञान के विषयों में वर्तमान रहने वाले का न क्षय होता है, न हानि होती है, बल्कि सर्वोच्च दिखाई देता है इसलिए 'अक्षर' कहा जाता है।

समीक्षा—कच्चायन के वर्णसमाम्नाय में 'ऐ-औ-विसर्ग-जिह्वामूलीय-उपध्मानीय-श्-ष्-क्ष्-प्लुत' वर्ण नहीं पढ़े गए हैं। अतः कातन्त्रीय वर्णसमाम्नाय की अपेक्षा उसमें वर्णों की अल्पता स्वाभाविक है। वैदिक 'ळ' (मराठी ल) वर्ण कातन्त्र की अपेक्षा कच्चायन में अधिक पढ़ा गया है, यह 'ईडे' आदि पदघटित डकार के स्थान में आदेश के रूप में प्रवृत्त होता है। पालि भाषा में इसे मूर्धन्य वर्ण कहा जाता है। इस प्रकार किसी भी वर्णसमाम्नाय में उत्कर्षापकर्ष नहीं कहा जा सकता है। इस विषय में कुछ विशेष बिन्दु ध्यातव्य हैं—

१. संस्कृतवाङ्मय के ग्रन्थों में वर्णसंख्या प्रायः भिन्न-भिन्न देखी जाती है। जैसे—नित्याषोडशिकार्णवतन्त्र में १६, पाणिनीय व्याकरण में ४२, बौद्ध तन्त्रों में ५०, वेदों में ६३-६४, यजुःप्रातिशाख्य में ६५ तथा वशिष्ठशिक्षा में ६८ वर्ण भी माने गए हैं।

२. आकारादि दीर्घ वर्णों में ह्रस्व अकारादि, ऋगत रेफ, लृघटित ल्, 'ए' में अ-इ, 'ओ' में अ-उ, 'ऐ' में अ-ए तथा औ-घटित अ-ओ वर्णों को वर्णैकदेश नहीं माना जाता है।

३. महाभाष्यकार ने वर्णों के अर्थवत्त्व तथा अनर्थकत्व पर विस्तार से विचार करने के बाद धातु-प्रातिपदिक-प्रत्यय-निपातों में विद्यमान वर्णों को अर्थवान् तथा उनसे भिन्न वर्णों को अनर्थक घोषित किया है। इसे उस लोकव्यवहार के आधार पर प्रामाणिक माना जाता है, जिसके अनुसार समान इच्छा करने वालों तथा समान अध्ययन करने वालों में कुछ तो सफलता प्राप्त करते हैं और कुछ असफल रह जाते हैं—**'समानमीहमानानामधीयानानां च केचिदर्थैर्युज्यन्ते अपरे न'** (म० भा० - आह्निक २)।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

४. वर्णोपदेश के ३ मुख्य प्रयोजन हैं—१. व्याकरणशास्त्रीय प्रक्रिया का निर्वाह, २. कलादि दोषों से रहित वर्णज्ञान तथा ३. अनुबन्धों की योजना। लाघव भी वर्णोपदेश का एक प्रयोजन माना गया है—

वर्णज्ञानं वाग्विषयो यत्र च ब्रह्म वर्तते ।
तदर्थमिष्टबुद्ध्यर्थं लघ्वर्थं चोपदिश्यते ।।

(म० भा० - आह्निक २)।

५. महर्षि पतञ्जलि के अनुसार यह वाक्समाम्नाय शब्दविद्या के ज्ञान से पुष्पित तथा शब्दों के समुचित प्रयोग से फलित होता है। अनादिकाल से सिद्ध चन्द्र-तारकाओं के समान यह सुशोभित ब्रह्मराशि है। इसके ज्ञान से समस्त वेदों के अध्ययन का पुण्य प्राप्त होता है और ज्ञाता के माता-पिता स्वर्गलोक में पूजनीय होते हैं (म० भा० - आ० २)। वर्ण-अक्षर आदि के परिज्ञान से स्वर्ग-यश-आयुष्य प्राप्त होता है, जबकि पदार्थज्ञान को मुक्ति का साधन स्वीकार किया गया है—

'पदार्थज्ञानं तन्मुक्तिसाधकम्। यत् प्रकृतिप्रत्ययादिपरिज्ञानं तत् स्वर्ग-यश-आयुषां साधकम्' (वाज० प्रा०-उव्वट० ८/२९-३४)।

२. स्वरसंज्ञा

कातन्त्र तत्र चतुर्दशादौ स्वराः (१/१/२)।

वर्णसमाम्नाय के प्रारम्भिक १४ वर्णों की स्वर संज्ञा होती है। स्वरसंज्ञक वर्ण हैं—'अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ए, ऐ, ओ, औ'। अनुकरण को साधु माना जाता है। इस आधार पर यदि ह्रस्व ऌकार की सत्ता प्रामाणिक है तो उसी आधार पर यहाँ दीर्घ ॡकार की भी प्रामाणिकता सिद्ध है। जो स्वयं उच्चरित या प्रकाशित होते हैं अर्थात् जो उच्चारण में तथा अर्थप्रतिपादन में अकेले ही समर्थ होते हैं, वे स्वर कहे जाते हैं—**'स्वयं राजन्ते इति स्वराः। एकाकिनोऽप्यर्थप्रतिपादने समर्थाः'** (दु० टी० १/१/२)। इस प्रकार कलाप-व्याकरण की यह संज्ञा अन्वर्थ है। इसके विपरीत पाणिनि ने इन वर्णों के बोधार्थ 'अच्' प्रत्याहार का प्रयोग किया है, जो हस्तचेष्टादि की तरह सांकेतिक है। स्वरों के लिए अक्षर तथा वर्णसंज्ञा का भी व्यवहार किया जाता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कच्चायन **तत्थोदन्ता सरा अट्ठ (१/१/३)।**

सर्वप्रथम अक्षरों का निर्देश करने के अनन्तर स्वर संज्ञा का विधान किया गया है। उनमें अ से लेकर ओ तक के आठ अक्षर स्वर कहे जाते हैं। यथा—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ओ। मोगल्लान व्याकरण में दस स्वर पढ़े गये हैं। (दसाढो सरा) यथा—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए ऐ, ओ, औ।

यहाँ 'तत्थ' निर्धारण अर्थ में है। चार प्रकार के निर्धारणों में जाति-निर्धारण देखना चाहिए। ये सभी अक्षर स्वर जाति के हैं। 'ओ' अन्त में है इसलिए 'ओदन्त' कहा गया है। 'अट्ठ' सङ्ख्यावाची शब्द है।

स्वर की परिभाषा करते हुए कहा गया है कि "सरन्ती ति सरा, गच्छन्ति पवत्तन्ती त्यत्थो; राजन्ति विलसन्ति वासूयमानतं गच्छन्ती ति वा, ब्यञ्जनानि सरापेन्ती ति वा सरा"। (क० व०, पृ० १९)।

समीक्षा—कच्चायन के वर्णसमाम्नाय में 'ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ऐ, औ' इन ६ वर्णों का पाठ न होने से स्वरसंज्ञक वर्णों की संख्या ८ ही रह जाती है। संस्कृत-पालि में प्रयुक्त वर्णों की मान्यता में भेद है। अतः यहाँ संख्याभेद के आधार पर किसी में उत्कर्ष या अपकर्ष नहीं कहा जा सकता है। इस विषय में अन्य कुछ विशेष बिन्दु द्रष्टव्य हैं—

१. ऋक्प्रातिशाख्य (१८/३२) तथा वाजसनेयिप्रातिशाख्य (१/९९-१०१) आदि प्राचीन ग्रन्थों में भी इस स्वरसंज्ञा का प्रयोग हुआ है।

२. सहायता की अपेक्षा न रखने वाले सामर्थ्यसम्पन्न पुरुष भी स्वर कहे जाते हैं, परन्तु जो सामर्थ्य की अपेक्षा रखते हैं, वे व्यञ्जनवत् आचरण करने के कारण व्यञ्जन माने जाते हैं—

एकाकिनोऽपि राजन्ते सत्त्वसाराः स्वरा इव ।
व्यञ्जनानीव निःसत्त्वाः परेषामनुयायिनः ।।

३. ह्रस्व-दीर्घ-प्लुत-उदात्त-अनुदात्त-स्वरित-अनुनासिक-निरनुनासिक के भेद से स्वर के १८ भेद माने जाते हैं। 'ए, ऐ, ओ, औ' इन चार सन्ध्यक्षर-संज्ञक वर्णों का ह्रस्व भेद नहीं होता। अतः उनमें से प्रत्येक के १२-१२ ही भेद होते हैं। इस प्रकार स्वरभेदों की कुल संख्या १३८ हो जाती है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

४. स्वरों का विशेष उपयोग दीर्घ-गुण-वृद्धि-अयादि सन्धियों में देखा जाता है।

५. स्वरसंज्ञक १४ वर्णों में से 'ए, ऐ, ओ, औ' इन ४ वर्णों को छोड़कर १० की समानसंज्ञा, समानसंज्ञक वर्णों में से २-२ वर्णों की सवर्ण संज्ञा, सवर्णसंज्ञक वर्णों के जोड़े में से पूर्ववर्ती वर्णों की ह्रस्वसंज्ञा, परवर्ती वर्णों की दीर्घसंज्ञा, 'अ-आ' को छोड़कर शेष १२ वर्णों की नामीसंज्ञा एवं 'ए, ऐ, ओ, औ' इन ४ वर्णों की सन्ध्यक्षरसंज्ञा होती है।

६. वैदिक शब्दों में जो उदात्त, अनुदात्त, स्वरित की योजना की जाती है, उन्हें स्वर इसलिए कहते हैं कि उनकी प्रवृत्ति स्वरसंज्ञक वर्णों में ही होती है, 'क्-ख्' आदि व्यञ्जन वर्णों में नहीं।

३. व्यञ्जनसंज्ञा

कातन्त्र कादीनि व्यञ्जनानि (१/१/९)।

स्वर वर्णों का अनुसरण करने के कारण अथवा स्वरप्रतिपाद्य अर्थों को द्योतित करने के कारण 'क्' से लेकर 'ह्' या 'क्ष्' तक वर्णों की व्यञ्जनसंज्ञा की जाती है—'व्यज्यन्ते एभिरिति व्यञ्जनानि'। व्यञ्जनसंज्ञक ३४ वर्ण निम्नाङ्कित हैं—

'क् ख् ग् घ् ङ्। च् छ् ज् झ् ञ्। ट् ठ् ड् ढ् ण्। त् थ् द् ध् न्। प् फ् ब् भ् म्। य् र् ल् व्। श् ष् स् ह्। क्ष्'। पाणिनि ने इन व्यञ्जन वर्णों के अवबोधार्थ 'हल्' प्रत्याहार का व्यवहार किया है। कातन्त्रकार ने व्यञ्जन वर्णों के संयोग से निष्पन्न होने वाले वर्णों के निदर्शनार्थ 'क्ष्' वर्ण को भी स्वीकार किया है। महेश्वर मत के अनुसार 'अ' से लेकर 'ह्' तक वर्ण माने जाते हैं, जिसका एक तात्पर्य यह भी स्वीकार किया जाता है कि 'अ-ह' से जो एक प्रत्याहार 'अहम्' बनाया जा सकता है, उससे ही समस्त संसार की सृष्टि होती है, परन्तु भगवत्पाद शङ्कराचार्य नें अन्नपूर्णास्तोत्र में 'अ' से 'क्ष' तक भी वर्णों की मान्यता का समर्थन किया है—'आदिक्षान्तसमस्तवर्णनिकरी शम्भोस्त्रिभावाकरी' (श्लो० ८)। इससे कातन्त्रकार द्वारा 'क्ष्' वर्ण की स्वतन्त्र मान्यता प्रामाणिक सिद्ध होती है।

कच्चायन सेसा व्यञ्जना (१/१/६)।

आठ स्वरों को छोड़कर ककार से निग्गहीत पर्यन्त ३३ वर्ण व्यञ्जन कहे जाते हैं। वे व्यञ्जन वर्ण हैं—'क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ। ट ठ ड ढ ण। त थ द ध न। प फ ब भ म। य, र, ल, व, स, ह, ळ, अं'।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यहाँ 'सेसा' अवशिष्ट अर्थ में है। स्वरों के अतिरिक्त जो तेंतीस वर्ण शेष रह गये, उनके लिए यहाँ 'सेसा' प्रयुक्त हुआ। सेसन्ती ति सेसा। 'व्यञ्जन' शब्द पर विचार करते हुए बतलाया गया है कि 'ह्रस्व-दीर्घ' स्वरों से अवशिष्ट वर्णों की व्यञ्जन संज्ञा होती है। यहाँ 'व्यञ्जन' से तात्पर्य है, 'ब्यञ्जीयति अत्थो एतेहि ति व्यञ्जना, विपुब्ब-अञ्जु-व्यत्तिगतीसुं युप्पच्चयो, योवचनस्साकारो'। (क० व० पृ० २३) व्यञ्जन वर्ण यहाँ स्वतन्त्र रूप में भी माने गये हैं। सद्धर्मनिरुक्तिकार के अनुसार—'सरं जनेन्ती ति व्यञ्जनानी' (सद्द० सु० ७, मिला० क० व० फु० नो० पृ० २३) कहा गया है। अतः स्वरों के प्रतिपाद्य अर्थों को व्यञ्जित करने के अतिरिक्त भी इसका स्वतन्त्र अस्तित्व विद्यमान होता है।

समीक्षा—कच्चायन के वर्णसमाम्नाय में 'श्, ष्, क्ष्' इन तीन वर्णों के न होने तथा 'ळ, अं' इन दो वर्णों के अधिक होने से दोनों की संख्या तथा वर्णों में भेद है। कुछ विशेष बिन्दु द्रष्टव्य हैं—

१. 'व्यज्यन्ते एभिरिति व्यञ्जनानि, अन्वर्थं खल्वपि निर्वचनं स्वयं राजन्ते इति स्वराः, अन्वग् भवति व्यञ्जनम्' (म० भा० १/२/२९-३०) तथा 'व्यञ्जयन्ति प्रकटान् कुर्वन्त्यर्थानिति व्यञ्जनानि' (ऋक्प्रा०-उ० भा० १/६) इन व्युत्पत्तियों के अनुसार स्वर वर्णों का अर्थ निश्चय करने में उपकारक होने के कारण, स्वरों का अनुसरण करने के कारण अथवा स्वरप्रतिपाद्य अर्थों को द्योतित करने के कारण 'क्' आदि वर्णों को व्यञ्जन कहते हैं।

२. ऋक्प्रातिशाख्य, तैत्तिरीय प्रातिशाख्य, वाजसनेयिप्रातिशाख्य, अथर्वप्रातिशाख्य, ऋक्तन्त्र, गोपथब्राह्मण तथा नाट्यशास्त्र आदि प्राचीन ग्रन्थों में भी इस संज्ञा का प्रयोग मिलता है। स्वरों को सत्त्वसम्पन्न (समर्थ) तथा व्यञ्जनों को दुर्बल कहा गया है। व्यञ्जनों की दुर्बलता इसलिए सिद्ध है कि इनका उच्चारण भी विना स्वरों की सहायता के नहीं होता। इस विषय में कुछ वचन प्रसिद्ध हैं—

(१) 'व्यञ्जनानि पुनर्नटभार्यावद् भवन्ति। तद् यथा नटानां स्त्रियो रङ्गं गता यो यः पृच्छति-कस्य यूयं कस्य यूयमिति? तं तं तवेत्याहुः। एवं व्यञ्जनान्यपि यस्य यस्याचः कार्यमुच्यते तं तं भजन्ते' (म० भा० ६/१/२)।

(२) **दुर्बलस्य यथा राष्ट्रं हरते बलवान् नृपः ।**
दुर्बलं व्यञ्जनं तद्वद् हरते बलवान् स्वरः ।।

(याज्ञ० शि०, श्लो० १११)।

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

परिशिष्ट-२

समीक्षात्मक अध्ययन का सिंहावलोकन

१. सञ्ज्ञा

क्र० सं०	व्याकरण	सूत्र	सन्दर्भ	कार्य	समीक्षा
१	कातन्त्र	इदुदग्नि:	२/१/८	अग्निसंज्ञा	अन्वर्थता
	कच्चायन	इवण्णुवण्णाज्झला	२/१/७	'झ-ल' संज्ञाएँ	साङ्केतिकता
२	कातन्त्र	वर्गाणां प्रथमद्वितीया: शषसा०	१/१/११	अघोषसंज्ञा	समानता
	कच्चायन	परसमञ्ञा पयोगे	१/१/९	"	"
३	कातन्त्र	एवमेवाद्यतनी	३/१/२८	अद्यतनी संज्ञा	"
	कच्चायन	अज्जतनी ई-उं, ओ-त्थ०	३/१/२३	अज्जतनी संज्ञा	"
४	कातन्त्र	य आधारस्तदधिकरणम्	२/४/११	अधिकरणसंज्ञा	भिन्नता
	कच्चायन	योधारो तमोकासं	२/६/८	ओकाससंज्ञा	"
५	कातन्त्र	अं इत्यनुस्वार:	१/१/१९	अनुस्वारसंज्ञा	"
	कच्चायन	अं इति निग्गहीतं	१/१/८	निग्गहीतसंज्ञा	"
६	कातन्त्र	यतोऽपैति०, ईप्सितं च०	२/४/८,९	अपादानसंज्ञा	समानता
	कच्चायन	यस्मादपेति०, रक्खणत्थान०	२/६/१,३	"	"
७	कातन्त्र	पूर्वोऽभ्यास:	३/३/४	अभ्याससंज्ञा	"
	कच्चायन	पुब्बोब्भासो	३/३/२	"	"
८	कातन्त्र	पूर्वं वाच्यं भवेद् यस्य०	२/५/१४	अव्ययीभावसंज्ञा	"
	कच्चायन	उपसग्गनिपातपुब्बको	२/७/४	"	"
९	कातन्त्र	नव पराण्यात्मने	३/१/२	आत्मनेपदसंज्ञा	"
	कच्चायन	परान्यत्तनोपदानि	३/१/२	"	"
१०	कातन्त्र	येन क्रियते तत् करणम्	२/४/१२	करणसंज्ञा	"
	कच्चायन	येन वा कयिरते तं करणं	२/६/९	"	"
११	कातन्त्र	य: करोति स कर्ता	२/४/१४	कर्ता संज्ञा	"
	कच्चायन	यो करोति स कत्ता	२/६/११	"	"
१२	कातन्त्र	यत् क्रियते तत् कर्म	२/४/१३	कर्मसंज्ञा	"
	कच्चायन	यं करोति तं कम्मं	२/६/१०	"	"
१३	कातन्त्र	पदे तुल्याधिकरणे विज्ञेय:०	२/५/५	कर्मधारयसंज्ञा	"
	कच्चायन	द्विपदे तुल्याधिकरणे कम्म-धारयो	२/७/९	"	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१४	कातन्त्र	कर्तरि कृत्	४/२/७	कृत् संज्ञा	समानता
	कच्चायन	अञ्ञे कितं	४/१/२३	”	”
१५	कातन्त्र	ते कृत्याः	४/२/४६	कृत्यसंज्ञा	”
	कच्चायन	ते किच्चा	४/१/२२	”	”
१६	कातन्त्र	ह्यादीनि क्रियातिपत्तिः	३/१/३३	क्रियातिपत्ति-संज्ञा	भिन्नता
	कच्चायन	कालातिपत्ति स्सा स्संसु०	३/१/२५	कालातिपत्ति-संज्ञा	”
१७	कातन्त्र	नाम्यादेर्गुरुमतोऽनृच्छः	३/२/१९	गुरुसंज्ञा	समानता
	कच्चायन	दुम्हि गरु, दीघो च	४/४/१३,१४	”	”
१८	कातन्त्र	घोषवन्तोऽन्ये	१/१/१२	घोषसंज्ञा	”
	कच्चायन	परसमञ्ञा पयोगे	१/१/९	”	”
१९	कातन्त्र	तत्पुरुषावुभौ, विभक्तयो०	२/५/७,८	तत्पुरुषसंज्ञा	”
	कच्चायन	उभे तप्पुरिसा, अमादयो०	२/७/११,१२	”	”
२०	कातन्त्र	परो दीर्घः	१/१/६	दीर्घ संज्ञा	”
	कच्चायन	अञ्ञे दीघा	१/१/५	”	”
२१	कातन्त्र	द्वन्द्वः समुच्चयो नाम्नो०	२/५/११	द्वन्द्वसंज्ञा	”
	कच्चायन	नामानं समुच्चयो द्वन्दो	२/७/१४	”	”
२२	कातन्त्र	संख्यापूर्वो द्विगुरिति ज्ञेयः	२/५/६	द्विगुसंज्ञा	”
	कच्चायन	सङ्ख्यापुब्बो दिगु	२/७/१०	”	”
२३	कातन्त्र	क्रियाभावो धातुः, ते धातवः	३/१/९; २/१६	धातुसंज्ञा	”
	कच्चायन	भूवादयो धातवो	३/२/२६	”	”
२४	कातन्त्र	ईदूत् स्त्र्याख्यौ नदी	२/१/९	नदीसंज्ञा	भिन्नता
	कच्चायन	ते इत्थिख्या पो	२/१/८	प-संज्ञा	”
२५	कातन्त्र	पञ्चमी	३/१/२६	पञ्चमीसञ्ज्ञा	समानता
	कच्चायन	पञ्चमी तु-अन्तु, हि-थ०	३/१/१९	”	”
२६	कातन्त्र	अथ परस्मैपदानि	३/१/१	परस्मैपदसंज्ञा	”
	कच्चायन	अथ पुब्बानि विभत्तीनं०	३/१/१	”	”
२७	कातन्त्र	परोक्षा	३/१/२९	परोक्षा संज्ञा	”
	कच्चायन	परोक्खा अ-उ, ए-त्थ०	३/१/२१	परोक्खा संज्ञा	”
२८	कातन्त्र	त्रीणि त्रीणि प्रथम०	३/१/३	पुरुषसंज्ञा	”
	कच्चायन	द्वे द्वे पठममज्झिमु०	३/१/३	”	”

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२९	कातन्त्र	स्यातां यदि पदे द्वे तु०	२/५/९,१०	बहुव्रीहि संज्ञा	समानता
	कच्चायन	अञ्ञपदत्थेसु बहुब्बीहि	२/७/१३	"	"
३०	कातन्त्र	स्यसंहितानि त्यादीनि०	३/१/३२	भविष्यन्ती संज्ञा	"
	कच्चायन	भविस्सन्ती स्सति-स्सन्ति०	३/१/२४	"	"
३१	कातन्त्र	धातुविभक्तिवर्जम्०	२/१/१	लिङ्गसंज्ञा	"
	कच्चायन	लिङ्गञ्च निपच्चते०	२/१/२,५	"	"
३२	कातन्त्र	ते वर्गाः पञ्च पञ्च पञ्च	१/१/१०	वर्गसंज्ञा	"
	कच्चायन	वग्गा पञ्चपञ्चसोमन्ता	१/१/७	"	"
३३	कातन्त्र	सिद्धो वर्णसमाम्नायः	१/१/१	वर्णसमाम्नाय-संज्ञा	"
	कच्चायन	अक्खरापादयो एकचत्तालिसं	१/१/२	"	"
३४	कातन्त्र	वर्तमाना	३/१/२४	वर्तमाना संज्ञा	"
	कच्चायन	वत्तमाना ति-अन्ति०	३/१/१८	"	"
३५	कातन्त्र	विभक्तिसंज्ञा विज्ञेया०	२/६/२४	विभक्तिसंज्ञा	"
	कच्चायन	त्वादयो विभक्तिसञ्ञायो	२/५/१	"	"
३६	कातन्त्र	कादीनि व्यञ्जनानि	१/१/९	व्यञ्जनसंज्ञा	"
	कच्चायन	सेसा व्यञ्जना	१/१/६	"	"
३७	कातन्त्र	आ श्रद्धा	२/१/१०	श्रद्धा संज्ञा	अन्वर्थता
	कच्चायन	आ घो	२/१/९	घ-संज्ञा	सांकेतिकता
३८	कातन्त्र	आमन्त्रिते सिः संबुद्धिः	२/१/५	सम्बुद्धिसंज्ञा	अन्वर्थता
	कच्चायन	आलपने सि गसञ्ञो	२/१/६	ग-संज्ञा	सांकेतिकता
३९	कातन्त्र	सप्तमी	३/१/२५	सप्तमी संज्ञा	समानता
	कच्चायन	सत्तमी एय्य-एय्युं०	३/१/२०	सत्तमी संज्ञा	"
४०	कातन्त्र	नाम्नां समासो युक्तार्थः	२/५/१	समाससंज्ञा	"
	कच्चायन	नामानं समासो युत्तत्थो	२/७/१	"	"
४१	कातन्त्र	यस्मै दित्सा रोचते धारयते०	२/४/१०	सम्प्रदानसंज्ञा	"
	कच्चायन	यस्स दातुकामो रोचते०	२/६/६	"	"
४२	कातन्त्र	षडाद्याः सार्वधातुकम्	३/१/३४	सार्वधातुक संज्ञा	"
	कच्चायन	हीयत्तनी सत्तमी पञ्चमी०	३/१/२६	"	"
४३	कातन्त्र	तत्र चतुर्दशादौ स्वराः	१/१/२	स्वरसंज्ञा	"
	कच्चायन	तत्थोदन्ता सरा अट्ठ	१/१/३	सरसंज्ञा	"
४४	कातन्त्र	कारयति यः स हेतुश्च	२/४/१५	हेतुसंज्ञा	"
	कच्चायन	यो कारेति स हेतु	२/६/१२	"	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

४५	कातन्त्र	ह्यस्तनी	३/१/२७	ह्यस्तनीसंज्ञा	समानता
	कच्चायन	हीयत्तनी आ-ऊ, ओ-त्थ०	३/१/२२	हीयत्तनी संज्ञा	"
४६	कातन्त्र	पूर्वो ह्रस्वः	१/१/५	ह्रस्वसंज्ञा	"
	कच्चायन	लहुमत्ता तयो रस्सा	१/१/४	रस्स संज्ञा	"

२. परिभाषा

४७	कातन्त्र	योऽनुबन्धोऽप्रयोगी	३/८/३१	अनुबन्धों का प्रयोगाभाव	भिन्नता
	कच्चायन	क्विलोपो च	४/६/१६	क्वि-लोप	"
४८	कातन्त्र	अनतिक्रमयन् विश्लेषयेत्	१/१/२२	वर्णवियोजन का निर्णय	समानता
	कच्चायन	पुब्बमधोठितमस्सरं०	१/१/१०	"	"
४९	कातन्त्र	व्यञ्जनमस्वरं परं०	१/१/२१	व्यञ्जन का स्वर से संयोजन	"
	कच्चायन	नये परं युत्ते	१/१/११	"	"

३. विधि

५० (१)	कातन्त्र	ईड्योर्वा	२/२/५४	'अ' का लोप	भिन्नता
	कच्चायन	स्मिम्हि रञ्ञे राजिनि	२/२/१९	रञ्ञे-राजिनि आदेश	"
५० (२)	कातन्त्र	अस्तेरादेः	३/४/४१	अकार का लोप	समानता
	कच्चायन	सब्बत्थासस्सादिलोपो च	३/४/२५	"	"
५० (३)	कातन्त्र	अम्शसोरादिर्लोपम्	२/१/४७	अकार का लोप	"
	कच्चायन	सरलोपोमादेसप्पच्चया०	२/१/३२	"	"
५१	कातन्त्र	पुंसोऽनुशब्दंलोपः	२/२/४०	अन् का लोप	"
	कच्चायन.	पुमस्स लिङ्गादिसु०	२/४/१२	अकार का लोप	"
५२	कातन्त्र	व्यञ्जनाच्च, नपुंसकात्०	२/१/४९; २/६	अम् का लोप	भिन्नता
	कच्चायन	इमस्सिदमंसिसु नपुंसके०	२/२/१०,११	इदं-अदुं आदेश	"
५३	कातन्त्र	आत्मनेपदानि भावकर्मणोः०	३/२/४०-४४	आत्मेनपद-विधान	समानता
	कच्चायन	अत्तनोपदानि भावे च कम्मनि०	३/२/२२,२३	"	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

५४	कातन्त्र	अस्मद्युत्तमः	३/१/७	उत्तमपुरुष का विधान	समानता
	कच्चायन	अम्हे उत्तमो	३/१/७	"	"
५५	कातन्त्र	द्वन्द्वैकत्वम्, तथा द्विगोः	२/५/१६,१७	एकवचन का विधान	"
	कच्चायन	दिगुस्सेकत्तं, तथा द्वन्दे०	२/७/६-८	"	"
५६	कातन्त्र	कतेश्च जस्शसोर्लुक्	२/१/७६	जस् का लोप	भिन्नता
	कच्चायन	पञ्चादीनमकारो	२/२/१५	अकारादेश	लाघव
५७	कातन्त्र	धातुसम्बन्धे प्रत्ययाः	४/५/११३	त्रैकालिक प्रत्ययविधान	समानता
	कच्चायन	णादयो तेकालिका	४/२/१	"	"
५८	कातन्त्र	द्वन्द्वैकत्वम्, तथा द्विगोः	२/५/१६-१७	नपुंसकलिङ्ग का विधान	"
	कच्चायन	दिगुस्सेकत्तं, तथा द्वन्दे०	२/७/६-८	"	"
५९ (१)	कातन्त्र	अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्	२/२/३९	नलोपादेश	भिन्नता
	कच्चायन	तोतिता सस्मिंनासु	२/२/८	तो आदि आदेश	"
५९ (२)	कातन्त्र	लिङ्गान्तनकारस्य	२/२/५६	नलोपादेश	"
	कच्चायन	न्तुस्स तमीकारे०	२/४/३१,३२, ३८	भोत आदि आदेश	"
५९ (३)	कातन्त्र	नस्य तत्पुरुषे लोप्यः	२/५/२२	नकार का लोप	"
	कच्चायन	अत्तन्नस्स तप्पुरिसे	२/७/१८	अकारादेश	"
५९ (४)	कातन्त्र	वनतितनोत्यादि०	४/१/५९,६९	पञ्चम वर्ण का लोप	समानता
	कच्चायन	गमखनहनरमादीनमन्तो	४/३/१६	"	"
५९ (५)	कातन्त्र	रन्जेर्भावकरणयोः	४/१/६६	नकार का लोप	भिन्नता
	कच्चायन	णम्हि रन्जस्स जो०	४/४/१	जकारादेश	"
६०	कातन्त्र	शेषात् कर्तरि परस्मैपदम्	३/२/४७	परस्मैपद-विधान	समानता
	कच्चायन	कत्तरि परस्सपदं०	३/२/२५; ४/३७	"	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

६१	कातन्त्र	नाम्नि प्रयुज्यमानेऽपि०	३/१/५	प्रथमपुरुष का विधान	समानता
	कच्चायन	नामम्हि पयुज्जमाने पि०	३/१/५	"	"
६२	कातन्त्र	युष्मदि मध्यमः	३/१/६	मध्यम पुरुष का विधान	"
	कच्चायन	तुम्हे मज्झिमो	३/१/६	"	"
६३	कातन्त्र	यममनतनगमां क्वौ	४/१/६९	पञ्चम वर्ण का लोप	"
	कच्चायन	गमखनहनरमादीनमन्तो	४/३/१६	"	"
६४	कातन्त्र	आदिलोपोऽन्तलोपश्च० (कात० दु० टी०)	१/२/१२	लोपविधि	"
	कच्चायनं	तेसु वुद्धिलोपागमविकार०	२/८/६१	"	"
६५.	कातन्त्र	अन्यस्माल्लुक्०	२/४/३,४	विभक्तिलुक्	"
	कच्चायन	अञ्ञस्मा लोपो च	२/७/२८	विभक्तिलोप	"
६६	कातन्त्र	तत्स्था लोप्या विभक्तय:	२/५/२	"	"
	कच्चायन	तेसं विभत्तियो लोपा च	२/७/२	"	"
६७	कातन्त्र	वृद्धिरादौ सणे	२/६/४९	वृद्धिविधान	"
	कच्चायन	वुद्धादिसरस्स०	२/८/५७	"	"
६८	कातन्त्र	कतेश्च जस्शसोर्लुक्	२/१/७६	शस्-लोप	भिन्नता
	कच्चायन	पञ्चादीनमकारो	२/२/१५	अकारादेश	लाघव
६९	कातन्त्र	स्वपिवचियजादीनां०	३/४/३	सम्प्रसारण	समानता
	कच्चायन	वचवसवहादीनमुकारो	३/४/६,२२	'उ-इ' आदेश	"
७०	कातन्त्र	अस्तेः सौ	३/६/३९	सकार का लोप	"
	कच्चायन	सिम्हि च	३/४/१५	"	"
७१ (१)	कातन्त्र	व्यञ्जनाच्च, नपुंसकात्०	२/१/४९; २/६	सि-लोप	भिन्नता
	कच्चायन	इमस्सिदमंसिसु नपुंसके	२/२/१०-११	इदं-अदुं आदेश	"
७१ (२)	कातन्त्र	ह्रस्वनदीश्रद्धाभ्यः सिर्लोपम्	२/१/७१	सि-लोप	समानता
	कच्चायन	सेसतो लोपं गसिपि	२/४/१०	"	"
७१ (३)	कातन्त्र	अकारादसंबुद्धौ मुश्च	२/२/७	"	भिन्नता
	कच्चायन	सिं	२/४/९	अं-आदेश	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

७२	कातन्त्र	अव्ययाच्च	२/४/४	स्यादि विभक्तियों का लुक्	समानता
	कच्चायन	सब्बासमावुसोपसग्ग०	२/४/११	विभक्तिलोप	"
७३	कातन्त्र	हेरकारादहन्ते:०	३/४/३३-३५	हि-लोप	समानता
	कच्चायन	हिलोपं वा	३/३/२२	"	"
७४	कातन्त्र	न पादादौ०	२/३/४,५	'ते' आदेश का निषेध	"
	कच्चायन	नाम्हि	२/२/३०	"	"
७५	कातन्त्र	न पादादौ०	२/३/४,५	'मे' आदेश का निषेध	"
	कच्चायन	नाम्हि	२/२/३०	"	"
७६ (१)	कातन्त्र	नान्यत् सार्वनामिकम्०	२/१/३३-३५	सर्वनाम कार्य का निषेध	भिन्नता
	कच्चायन	तयो नेव च सब्बनामेहि	२/१/५९	'आ' आदि आदेश का निषेध	"
७६ (२)	कातन्त्र	नान्यत् सार्वनामिकम्०	२/१/३३-३५	सर्वनामकार्य-निषेध	समानता
	कच्चायन	नाञ्ञं सब्बनामिकं०	२/३/६-७	"	"

४. नियम

७७	कातन्त्र	कर्तरि कृत:	४/६/४६	कृत्प्रत्ययार्थ	"
	कच्चायन	कत्तरि कितं	४/६/१	"	"
७८	कातन्त्र	भावकर्मणो: कृत्यक्त०	४/६/४७	कृत्यप्रत्ययार्थ	"
	कच्चायन	भावकम्मेसु किच्च०	४/६/२	"	"
७९	कातन्त्र	प्रत्यय: पर:	३/२/१	नाम-आख्यात प्रत्ययों का स्थान	"
	कच्चायन	धातुलिङ्गेहि पराप्पच्चया	३/२/१	"	"
८०	कातन्त्र	युगपद्वचने पर: पुरुषाणाम्	३/१/४	पुरुषविधान	"
	कच्चायन	सब्बेसमेकाभिधाने०	३/१/४	"	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

५. अतिदेश

८१	कातन्त्र	ह्रस्वश्च ङवति	२/२/५	नदीवद्भाव	भिन्नता
	कच्चायन	अमा पतो स्मिंस्मानं वा	२/१/१७	आकारादेश	"
८२	कातन्त्र	पुंवद् भाषितपुंस्कानूङ०	२/५/१८-२०	पुंवद्भाव	समानता
	कच्चायन	इत्थियं भासितपुमित्थी०	२/७/१६,१७	"	"

६. अधिकार

८३	कातन्त्र	काले	३/१/१०	कालाधिकार	"
	कच्चायन	काले	३/१/८	"	"
८४	कातन्त्र	द्विर्वचनमनभ्यासस्यैक०	३/३/१,२	द्विर्वचनाधिकार	"
	कच्चायन	क्वचादिवण्णानमेक०	३/३/१	"	"

७. सन्धि

८५	कातन्त्र	मोऽनुस्वारं व्यञ्जने	१/४/१५	अनुस्वारसन्धि	समानता
	कच्चायन	अं व्यञ्जने निग्गहीतं	१/४/१	'अं' आदेश	"
८६	कातन्त्र	अवर्ण इवर्णे ए	१/२/२	एकारादेश	भिन्नता
	कच्चायन	क्वचासवण्णं लुत्ते	१/२/३	असवर्णता-विधान	"
८७	कातंन्त्र	उवर्णे ओ	१/२/३	गुणसन्धि	"
	कच्चायन	क्वचासवण्णं लुत्ते	१/२/३	असवर्णता-विधान	"
८८	कातन्त्र	ङणना ह्रस्वोपधा: स्वरे द्वि:	१/४/७	द्वित्वविधान	समानता
	कच्चायन	वग्गे घोसाघोसानं०	१/३/७	"	"
८९	कातन्त्र	वर्गे तद्वर्गपञ्चमं वा०	१/४/१६; २/४/४५	परसवर्ण सन्धि	"
	कच्चायन	वग्गन्तं वा वग्गे	१/४/२	"	"
९० (१)	कातन्त्र	ओदन्ता अ इ उ आ०	१/३/१-४; २/१८	प्रकृतिभाव	"
	कच्चायन	सरा पकति व्यञ्जने०	१/३/१-२	"	"
९० (२)	कातन्त्र	प्रकृतिश्च स्वरान्तस्य	२/५/३	प्रकृतिभाव	"
	कच्चायन	पकति चस्स सरन्तस्स	२/७/३	"	"
९१	कातन्त्र	इवर्णो यमसवर्णे न च०	१/२/८	यकारादेश	"
	कच्चायन	इवर्णो यन्न वा०	१/२/१०,६	"	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

९२	कातन्त्र	वमुवर्णः	१/२/९	वकारादेश	समानता
	कच्चायन	वमोदुदन्तानं	१/२/७	"	"

८. प्रत्यय

९३	कातन्त्र	समासान्तगतानां वा०	२/६/४१	'अ' प्रत्यय	"
	कच्चायन	क्वचि समासन्तगतान०	२/७/२२	'अ' आदेश	"
९४ (१)	कातन्त्र	वाऽणपत्ये, रागान्नक्षत्रयोगात्०	२/६/१,७	'अण्' प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	वाणपच्चे, णवोपग्वादीहि०	२/८/१,५,९, १०,११	णव आदि प्रत्यय	"
९४ (२)	कातन्त्र	कर्मण्यण्	४/३/१	अण् प्रत्यय	समानता
	कच्चायन	धातुया कम्मादिम्हि णो	४/१/१	ण-प्रत्यय	"
९४ (३)	कातन्त्र	कर्मणि चाण्	४/४/७१	अण् प्रत्यय	"
	कच्चायन	कम्मणि णो	४/६/३१	ण-प्रत्यय	"
९५	कातन्त्र	अत् क्व च	२/६/३२	अत् प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	किस्मा वो च	२/५/५	व-प्रत्यय	"
९६	कातन्त्र	ट्वनुबन्धादथुः	४/५/६७	अथु-प्रत्यय	"
	कच्चायन	वेपुसिदववमुकुदाभू०	४/६/२१	थु-प्रत्यय	"
९७	कातन्त्र	इदमो र्ह्यधुनादानीम्	२/६/६५	अधुना प्रत्यय	"
	कच्चायन	इमस्सा रहिधुनादानि च	२/५/१३	धुना प्रत्यय	"
९८	कातन्त्र	तव्यानीयौ	४/२/९	अनीय प्रत्यय	समानता
	कच्चायन	भावकम्मेसु तव्यानीया	४/१/१७	"	"
९९	कातन्त्र	चरेरमः, प्रथेरमः (कात० उ०)	५/२७,५९	अम प्रत्यय	"
	कच्चायन	पुथस्स पुथु पथामो वा	४/६/४३	"	"
१००	कातन्त्र	शकिशम्विहिभ्योऽलः (कात० उ०)	१/४०-४१; ६/१९	अल प्रत्यय	"
	कच्चायन	पटादीह्यलं	४/६/४२	"	"
१०१	कातन्त्र	स्त्रियामादा	२/४/४९	आ-प्रत्यय	"
	कच्चायन	इत्थियमतो आप्पच्चयो	२/४/२७	"	"
१०२	कातन्त्र	वर्तमाने शन्तृङानशाव०	४/४/२,३	आनश् प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	वत्तमाने मानन्ता	४/२/१६	मान-प्रत्यय	"
१०३	कातन्त्र	शन्त्रानौ स्यसंहितौ शेषे च	४/४/७२	आनश् प्रत्यय	समानता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

	कच्चायन	सेसे स्सन्तुमानाना	४/६/३२	मान-आन प्रत्यय	समानता
१०४	कातन्त्र	कुञ्ञादेरायनण् स्मृत:	२/६/३	आयनण् प्रत्यय	"
	कच्चायन	णायनणान वच्छादितो	२/८/२	णायन-णान प्रत्यय	"
१०५	कातन्त्र	कर्तुरायि: सलोपश्च	३/२/८	आयि प्रत्यय	"
	कच्चायन	आय नामतो कत्तुपमानादाचारे	३/२/४	आय प्रत्यय	"
१०६	कातन्त्र	दयिपतिगृहिस्पृहिश्रद्धातन्द्रा०	४/४/३८	आलु प्रत्यय	"
	कच्चायन	आलु तब्बहुले	२/८/१६	"	"
१०७	कातन्त्र	तेन द्वीव्यति संसृष्टं०	२/६/८	इकण् प्रत्यय	"
	कच्चायन	येन वा संसट्ठं तरति	२/८/७,८	णिक "	"
१०८	कातन्त्र	अर्तिलूधूसूखनिसहि०	४/४/६३-६५	इत्रन् प्रत्यय	"
	कच्चायन	वदादीहि णित्तो गणे	४/६/३४	णित्त प्रत्यय	"
१०९	कातन्त्र	श्याहृञवदृदक्षिभ्य इन: (कातं० उ०)	२/२१-२२	इन प्रत्यय	"
	कच्चायन	जितो इन सब्बत्थ०	४/२/९-१०	"	"
११०	कातन्त्र	तदस्यास्तीति मन्त्वन्त्वीन्	२/६/१५	इन् प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	दण्डादितो इकई	२/८/२३	ई-प्रत्यय	"
१११	कातन्त्र	इन् कारितं धात्वर्थे, धातोश्च०	३/२/९-१०	इन् प्रत्यय	"
	कच्चायन	धातूहि णेणयणापेणापया०	३/२/७,८,११	णय प्रत्यय	"
११२	कातन्त्र	आख्याताच्च तमादय:	२/६/४०-२	इष्ठ प्रत्यय	समानता
	कच्चायन	विसेसे तरतमिस्सिकियिट्ठा	२/८/२०	इट्ठ प्रत्यय	"
११३	कातन्त्र	नदाद्यन्चिवाह्व्यन्स्यन्तृ०	२/४/५०	ई-प्रत्यय	"
	कच्चायन	नदादितो वा ई०	२/४/२८-३०	ई-प्रत्यय	"
११४	कातन्त्र	ईयस्तु हिते	२/६/१०	ईय प्रत्यय	"
	कच्चायन	तदस्सट्ठानमीयो च	२/८/१३	"	"
११५	कातन्त्र	आख्याताच्च तमादय:०	२/६/४०-२	ईयन्सु प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	विसेसे तरतमिस्सिकियिट्ठा	२/८/२०	इय-प्रत्यय	"
११६	कातन्त्र	सनन्ताशंसिभिक्षामु:	४/४/५१	उ-प्रत्यय	"
	कच्चायन	भिक्खादितो च	४/१/१२	रू-प्रत्यय	"
११७	कातन्त्र	श्रृंकमगमहनवृष०	४/४/३४	उकञ् "	समानता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

	कच्चायन	हन्त्यादीनं णुको	४/१/१३	णुक् प्रत्यय	समानता
११८ (१)	कातन्त्र	उणादयो भूतेऽपि	४/४/३७	उणादि प्रत्यय	"
	कच्चायन	काले वत्तमानातीते ण्वादयो	४/६/२७	णु-आदि "	"
११८ (२)	कातन्त्र	भविष्यति गम्यादय:	४/४/६८	इन् आदि प्रत्यय	"
	कच्चायन	भविस्सति गमादीहि	४/६/२८	घिण् आदि प्रत्यय	"
११९	कातन्त्र	मानेरुष: (कात० उ०)	६/११	उष प्रत्यय	"
	कच्चायन	मनुपूरसुणादीहि०	४/६/५०	नुस "	"
१२०	कातन्त्र	मनेरुष्य: (कात० उ०)	६/१०	उष्य प्रत्यय	"
	कच्चायन	मनुपूरसुणादीहि०	४/६/५०	उस्स "	"
१२१	कातन्त्र	खर्जिकृपिमसिपिञ्जादिभ्य: (कात० उ०)	३/६०; ५/५८; ६/४७	ऊर प्रत्यय	"
	कच्चायन	विदादीहूरो	४/६/४७	"	"
१२२	कातन्त्र	स्त्र्यत्र्यादेरेयण्	२/६/४	एयण् प्रत्यय	"
	कच्चायन	णेय्यो कत्तिकादीहि	२/८/३	णेय्य "	"
१२३	कातन्त्र	अव्ययसर्वनाम्न:०	२/२/६४	क-प्रत्यय	"
	कच्चायन	द्वादितो कोनेकत्थे च	२/८/४९	"	"
१२४	कातन्त्र	पटिकमिमुशिकुशिभ्य: कल: (कात० उ०)	६/१	कल प्रत्यय	"
	कच्चायन	पटादीह्यलं	४/६/४२	अल प्रत्यय	"
१२५	कातन्त्र	मन्यते: किरत उच्च० (कात० उ०)	४/३-४	कि-प्रत्यय	"
	कच्चायन	मुनादीहि चि	४/६/४६	इ-प्रत्यय	"
१२६	कातन्त्र	उपसर्गे द: कि:०	४/५/७०-७१	कि-प्रत्यय	"
	कच्चायन	सञ्ञायं दाधातो इ	४/२/२	इ-प्रत्यय	"
१२७ (१)	कातन्त्र	निष्ठा	४/३/९३	क्त प्रत्यय	"
	कच्चायन	अतीते ततवन्तुतावी	४/२/६	त-प्रत्यय	"
१२७ (२)	कातन्त्र	ञ्यनुबन्धमतिबुद्धि०	४/४/६६	क्त-प्रत्यय	"
	कच्चायन	भ्यादीहि मतिबुद्धि०	४/६/२०	"	"
१२७ (३)	कातन्त्र	नपुंसके भावे क्त:	४/५/९३	"	"
	कच्चायन	भावकम्मेसु त	४/२/७	त-प्रत्यय	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१२७ (४)	कातन्त्र	आदिकर्मणि क्तः कर्त्तरि च०	४/६/४८,४९	क्त-प्रत्यय	समानता
	कच्चायन	बुधगमादित्थे कत्तरि	४/२/८	त-प्रत्यय	"
१२७ (५)	कातन्त्र	आदिकर्मणि क्तः कर्त्तरि च	४/६/४८	क्त-प्रत्यय	"
	कच्चायन	कम्मणि दुतियायं क्तो	४/६/३	"	"
१२८	कातन्त्र	निष्ठा	४/३/९३	क्तवन्तु प्रत्यय	"
	कच्चायन	अतीते त्ततवन्तुतावी	४/२/६	तवन्तु प्रत्यय	"
१२९	कातन्त्र	स्त्रियां क्तिः, सातिहेति०	४/५/७२-७४	क्ति-प्रत्यय	"
	कच्चायन	ति किच्चासिट्ठे	४/२/३	ति-प्रत्यय	"
१३०	कातन्त्र	अलंखल्वोः प्रतिषेधयोः०	४/६/१-५	क्त्वा प्रत्यय	"
	कच्चायन	पुब्बकालेककत्तुकानं०	४/२/१५	त्वा प्रत्यय	"
१३१	कातन्त्र	व्रजयजोः क्यप्०	४/५/७५,७६	क्यप् प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	वजादीहि पब्बज्जादयो०	४/६/१५	निपातनविधि	"
१३२	कातन्त्र	क्विप् च	४/३/६८	क्विप् प्रत्यय	समानता
	कच्चायन	क्वि च	४/१/७	क्वि प्रत्यय	"
१३३	कातन्त्र	ईषद्दुःसुषु कृच्छ्रा०	४/५/१०२, १०३	खल् प्रत्यय	"
	कच्चायन	ईसदुस्सूहि ख	४/२/११	ख-प्रत्यय	"
१३४	कातन्त्र	एजेः खश्	४/३/३०, ३१-४६	खश् प्रत्यय	"
	कच्चायन	सञ्ञायम नु	४/१/२, ३-५	अ-प्रत्यय	"
१३५	कातन्त्र	पदरुजविशस्पृशोचां घञ्	४/५/१,३	घञ् प्रत्यय	"
	कच्चायन	विसरुजपदादितो ण	४/१/५,६	ण-प्रत्यय	"
१३६	कातन्त्र	ऋवर्णव्यञ्जनान्ताद् घ्यण्	४/२/३५	घ्यण् प्रत्यय	"
	कच्चायन	ण्यो च	४/१/१८	ण्य प्रत्यय	"
१३७	कातन्त्र	तदाद्याद्यन्तानन्तकारबहु०	४/३/२३	ट-प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	रम्हिरन्तो रादि नो	४/१/१६	र-लोप	"
१३८ (१)	कातन्त्र	डोऽसञ्ज्ञायामपि०	४/३/४७-५०	ड-प्रत्यय	"
	कच्चायन	पारादिगमिम्हा रू०	४/१/११, १५	रू-र प्रत्यय	"
१३८ (२)	कातन्त्र	शमेर्डः, अनुनासिका० (कात०.उ०)	१/३६-३८	ड-प्रत्यय	समानता
	कच्चायन	कड्यादीहि को	४/६/४०	क-प्रत्यय	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१३९	कातन्त्र	नाम्न्यजातौ णिनि०	४/३/७६	णिनि प्रत्यय	समानता
	कच्चायन	तस्सीलादिसु णीत्वावी च	४/१/९	णी प्रत्यय	"
१४०	कातन्त्र	आवश्यकाधमर्णयोर्णिन्	४/५/११	णिन् प्रत्यय	"
	कच्चायन	अवस्सकाधमिणेसु णी च	४/६/१३	णी प्रत्यय	"
१४१	कातन्त्र	तत्वौ भावे	२/६/१३	'त' प्रत्यय	"
	कच्चायन	ण्यत्तता भावे तु	२/८/१७	'ता' प्रत्यय	"
१४२	कातन्त्र	आख्याताच्च तमादयः०	२/६/४०-१	तम प्रत्यय	"
	कच्चायन	विसेसे तरतमिस्सि०	२/८/२०	" "	"
१४३	कातन्त्र	आख्याताच्च तमादयः०	२/६/४०-१	तर प्रत्यय	"
	कच्चायन	विसेसे तरतमिस्सि०	२/८/२०	" "	"
१४४	कातन्त्र	सेन्नसेन्कसेनध्यै० (कात० छ० कृत्)	२/९	तवेन् प्रत्यय	"
	कच्चायन	इच्छत्थेसु समानकत्तुकेसु०	४/२/१२	तवे "	"
१४५	कातन्त्र	तव्यानीयौ	४/२/९	तव्य प्रत्यय	"
	कच्चायन	भावकम्मेसु तब्बानीया	४/१/१७	तब्ब "	"
१४६	कातन्त्र	पञ्चम्यास्तस्	२/६/२८	तस् "	"
	कच्चायन	क्वचि तो पञ्चम्यत्थे	२/५/२	तो प्रत्यय	"
१४७	कातन्त्र	द्वेस्तीयः, त्रेस्तृ च	२/६/१७,१८	तीय प्रत्यय	"
	कच्चायन	द्वितीहि तियो	२/८/४२	तिय "	"
१४८	कातन्त्र	सितनिगमिमसि० (कात० उ०)	२६-२८	तुन् प्रत्यय	"
	कच्चायन	हनादीहि नुणुतवो	४/६/४८	तु-प्रत्यय	"
१४९	कातन्त्र	वुण्तुमौ क्रियायां क्रियार्थायाम्	४/६/६९	तुम् प्रत्यय	"
	कच्चायन	किरियायं ण्वुतवो	४/६/२९	तु-प्रत्यय	"
१५० (१)	कातन्त्र	इच्छार्थेष्वेककर्तृकेषु तुम्०	४/५/१०६-७	तुम् प्रत्यय	"
	कच्चायन	इच्छत्थेसु समानकत्तुकेसु०	४/२/१२-१४	तुं-प्रत्यय	"
१५० (२)	कातन्त्र	इच्छार्थेष्वेककर्तृकेषु तुम्०	४/५/१०६-७	तुम् प्रत्यय	"
	कच्चायन	अरहसक्कादीहि तुं	४/६/१४	तुं "	"
१५१	कातन्त्र	वुण्तृचौ	४/२/४७	तृच् प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	सब्बतो ण्वुत्वावी वा	४/१/४	तु-प्रत्यय	"
१५२	कातन्त्र	त्र ससम्याः	२/६/२९	त्र-प्रत्यय	समानता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

	कच्चायन	त्रथ सत्तमिया सब्बनामेहि	२/५/३	त्र-प्रत्यय	समानता
१५३	कातन्त्र	रातेस्त्रिः, अतेस्त्रिः (कात० उ०)	३/४४; ६/२७	त्रि-प्रत्यय	"
	कच्चायन	मिदादीहि त्तित्तियो	४/६/३५	त्ति-ति प्रत्यय	"
१५४	कातन्त्र	ड्वनुबन्धात् त्रिमक्०	४/५/६८	त्रिमक् प्रत्यय	"
	कच्चायन	वेपुसिदववमुकुदा०	४/६/२१	त्तिम "	"
१५५	कातन्त्र	तत्वौ भावे	२/६/१३	त्व प्रत्यय	"
	कच्चायन	ण्यत्तता भावे तु	२/८/१७	त्त प्रत्यय	"
१५६	कातन्त्र	उषिकुषिगार्तिभ्यस्थः (कात० उ०)	५/६३	थ-प्रत्यय	"
	कच्चायन	कुटादीहि ठो	४/६/४९	ठ-प्रत्यय	"
१५७ (१)	कातन्त्र	रमिकासिकुषिपातृ० (कात० उ०)	२/१०	थक् प्रत्यय	"
	कच्चायन	समादीहि थमा	४/६/५	थ-प्रत्यय	"
१५७ (२)	कातन्त्र	रमिकासिकुषिपातृवचि० (कात० उ०)	२/१०-१३	थक् प्रत्यय	"
	कच्चायन	कुटादीहि ठो	४/६/४९	ठ-प्रत्यय	"
१५८	कातन्त्र	इदंकिम्भ्यां थमुः कार्यः	२/६/३९	थमु प्रत्यय	"
	कच्चायन	किमिमेहि थं	२/८/५६	थं-प्रत्यय	"
१५९	कातन्त्र	प्रकारवचने तु था	२/६/३८	था-प्रत्यय	"
	कच्चायन	सब्बनामेहि पकारवचने तु था	२/८/५५	"	"
१६०	कातन्त्र	काले किं सर्व्वयदेकान्येभ्य०	२/६/३४, ३६	दा-प्रत्यय	"
	कच्चायन	किं सब्बञ्ञेकयकूहि०	२/५/११, १२	"	"
१६१	कातन्त्र	इदमो र्ह्यधुनादानीम्०	२/६/३५-३६	दानीम् प्रत्यय	"
	कच्चायन	तम्हा दानि च, इमस्मा०	२/५/१२-१३	दानि प्रत्यय	"
१६२	कातन्त्र	आख्याताच्च तमादयः०	२/६/४०-१२	धा-प्रत्यय	"
	कच्चायन	विभागे धा च	२/८/५४	"	"
१६३	कातन्त्र	दाभारिवृञ्भ्यो नुः० (कात० उ०)	२/७-९	नु-प्रत्यय	"
	कच्चायन	हनादीहि नुणुतवो	४/६/४८	नु-प्रत्यय	"
१६४ (१)	कातन्त्र	अर्तिहुसुधृक्षिणी० (कात० उ०)	१/५३	म-प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	धरादीहि रम्मो	४/१/८	रम्मो प्रत्यय	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१६४ (२)	कातन्त्र	अर्तिहुसुधृक्षिणी० (कात०उ०)	१/५३, ५४	म-प्रत्यय	समानता
	कच्चायन	समादीहि थमा	४/६/५	म-प्रत्यय	"
१६४ (३)	कातन्त्र	संख्याया: पूरणे डमौ	२/६/१६	"	"
	कच्चायन	संख्यापूरणे मो	२/८/३०	"	"
१६५	कातन्त्र	सर्वधातुभ्यो मन् (कात० उ०)	४/२८	मन् प्रत्यय	"
	कच्चायन	ख्यादीहि मन म च तो वा	४/६/४	मन "	"
१६६	कातन्त्र	तदस्यास्तीति मन्त्वन्त्वीन्	२/६/१५	मन्तु प्रत्यय	"
	कच्चायन	सत्यादीहि मन्तु	२/८/२६	मन्तु "	"
१६७	कातन्त्र	आख्याताच्च तमादय:०	२/६/४०-१४-१६	मयट् "	"
	कच्चायन	तप्पकतिवचने मयो	२/८/२९	मय प्रत्यय	"
१६८	कातन्त्र	स्वराद् य:	४/२/१०	य-प्रत्यय	"
	कच्चायन	ण्यो च	४/१/१८	ण्य-प्रत्यय	"
१६९	कातन्त्र	यण् च प्रकीर्तित:	२/६/१४	यण् प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	ण विसमादीहि	२/८/१६	ण-प्रत्यय	"
१७०	कातन्त्र	सार्वधातुके यण्	३/२/३१	यण् प्रत्यय	समानता
	कच्चायन	भावकम्मेसु यो	३/२/९	य-प्रत्यय	"
१७१	कातन्त्र	नाम्न आत्मेच्छायां यिन्	३/२/५	यिन् प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	ईयुपमाना च०	३/२/५, ६	ईय प्रत्यय	"
१७२ (१)	कातन्त्र	नन्द्यादेर्यु:	४/२/४९	यु-प्रत्यय	समानता
	कच्चायन	नन्दादीहि यु०	४/१/२४, २५	"	"
१७२ (२)	कातन्त्र	क्रुधिमण्डिचलि०	४/४/३०, ३१	यु-प्रत्यय	"
	कच्चायन	सद्दकुधचलमण्डत्थ०	४/१/१०	"	"
१७२ (३)	कातन्त्र	ईषिश्रन्थ्यासिवन्दिविदि०	४/५/८५, ८६	"	"
	कच्चायन	इत्थियमतियवो वा	४/२/४	"	"
१७३	कातन्त्र	दीपिकम्प्यजसिहिंसि०	४/४/५०	र-प्रत्यय	"
	कच्चायन	मध्वादितो रो	२/८/२४	रो-प्रत्यय	"
१७४	कातन्त्र	स्फायितञ्चिवञ्चिशकिक्षिपि० (कात० उ०)	२/१४-१७	रक् प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	रन्जुदादीहि धदिद्दकिरा०	४/६/३८	द-आदि प्रत्यय	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१७५	कातन्त्र	इदमो र्ह्यधुनादानीम्	२/६/३५	र्हि-प्रत्यय	समानता
	कच्चायन	इमस्मा रहिधुनादानि च	२/५/१३	रहि प्रत्यय	"
१७६	कातन्त्र	तदस्यास्तीति मन्त्वन्त्वीन्	२/६/१६	वन्तु "	"
	कच्चायन	गुणादितो वन्तु	२/८/२५	" "	"
१७७	कातन्त्र	तदस्यास्तीति मन्त्वन्त्वीन्	२/६/१५	विन् "	भिन्नता
	कच्चायन	तदस्सात्थीति वी च०	२/८/२१, २२	वी-सी प्रत्यय	"
१७८	कातन्त्र	वुण्तृचौ	४/२/४७	वुण् प्रत्यय	समानता
	कच्चायन	सब्बतो ण्वु त्वावी वा	४/१/४	ण्वु प्रत्यय	"
१७९	कातन्त्र	वुण्तुमौ क्रियायां०	४/४/६९	वुण् प्रत्यय	"
	कच्चायन	किरियायं ण्वुतवो	४/६/२९	ण्वु "	"
१८० (१)	कातन्त्र	वर्तमाने शन्तृङानशा०	४/४/२, ३	शन्तृङ् प्रत्यय	"
	कच्चायन	वत्तमाने मानन्ता	४/२/१६	अन्त "	"
१८० (२)	कातन्त्र	शन्त्रानौ स्यसंहितौ०	४/४/७२	शन्तृङ् प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	सेसे स्सन्तु मानाना	४/६/३२	न्तु प्रत्यय	"
१८१	कातन्त्र	कर्मणि धेटः ष्ट्रन्०	४/४/६०-६२	ष्ट्रन् "	समानता
	कच्चायन	छदादीहि त्त्रण	४/६/३३	त्रण प्रत्यय	"
१८२	कातन्त्र	गुपूतिज्किद्भ्यः सन्	३/२/२-४	सन् "	"
	कच्चायन	तिजगुपकितमानेहि०	३/२/२, ३	स-प्रत्यय	"
१८३	कातन्त्र	इदमो हः, किमः	२/३/३०, ३१	ह-प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	हिं हं हिञ्चनं०	२/५/६, ८	हिं-हं "	"

९. विभक्ति

१८४	कातन्त्र	भूतकरणवत्यश्च०	३/१/१४, २२, २३	अद्यतनी विभक्ति	समानता
	कच्चायन	समीपेज्जतनी०	३/१/१४, १५	"	"
१८५	कातन्त्र	भूतकरणवत्यश्च	३/१/१४	क्रियातिपत्ति विभक्ति	"
	कच्चायन	क्रियातिपन्नेतीते०	३/१/१७	कालातिपत्ति "	"
१८६ (१)	कातन्त्र	शेषाः कर्मकरणसम्प्र०	२/४/१९, २६	चतुर्थी विभक्ति	"
	कच्चायन	सम्पदाने चतुत्थी०	२/६/२३, २४	"	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१८६ (२)	कातन्त्र	तुमर्थाच्च भाववाचिनः	२/४/२८	चतुर्थी विभक्ति	समानता
	कच्चायन	भाववाचिम्हि चतुत्थी	४/६/३०	"	"
१८७	कातन्त्र	शेषाः कर्मकरणसम्प्र०	२/४/१९, २२,२३	द्वितीया विभक्ति	"
	कच्चायन	कम्मत्थे दुतिया	२/६/२७-३०	"	"
१८८	कातन्त्र	शेषाः कर्मकरणसम्प्र०	२/४/१९, २९-३३	तृतीया "	"
	कच्चायन	करणे ततिया, सहादि०	२/६/१६-२२	"	"
१८९ (१)	कातन्त्र	शेषाः कर्मकरणसम्प्र०	२/४/१९	पञ्चमी विभक्ति	"
	कच्चायन	अपादाने पञ्चमी	२/६/२५	"	"
१८९ (२)	कातन्त्र	पञ्चम्यनुमतौ०	३/१/१८, १९	"	"
	कच्चायन	आणत्यासिट्ठे०	३/१/१०	"	"
१९०	कातन्त्र	परोक्षा	३/१/१३	परोक्षाविभक्ति	"
	कच्चायन	अपच्चक्खे परोक्खातीते	३/१/१२	"	"
१९१	कातन्त्र	प्रथमा विभक्तिर्लिङ्गार्थ०	२/४/१७, १८	प्रथमा विभक्ति	"
	कच्चायन	लिङ्गत्थे पठमा०	२/६/१४, १५	"	"
१९२	कातन्त्र	भविष्यति भविष्य०	३/१/१५	भविष्यन्ती "	"
	कच्चायन	अनागते भविस्सन्ती	३/१/१६	"	"
१९३	कातन्त्र	सम्प्रति वर्तमाना०	३/१/११, १२	वर्तमाना विभक्ति	"
	कच्चायन	वत्तमाना पच्चुपन्ने	३/१/९	वत्तमाना "	"
१९४	कातन्त्र	शेषाः कर्मकरणसम्प्र०	२/४/१९, ३५-३७	षष्ठी विभक्ति	"
	कच्चायन	सामिस्मिं छट्ठी०	२/६/३१, ३३, ३४, ३८	छट्ठी "	"
१९५ (१)	कातन्त्र	शेषाः कर्मकरणसम्प्र०	२/४/१९, ३४-३६	सप्तमी विभक्ति	"
	कच्चायन	ओकासे सत्तमी०	२/६/३२-३४, ४३	सत्तमी "	"
१९५ (२)	कातन्त्र	विध्यादिषु सप्तमी च	३/१/२०	सप्तमी विभक्ति	"
	कच्चायन	अनुमतिपरिकप्पत्थेसु०	३/१/११	"	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१९६	कातन्त्र	तस्मात् परा विभक्तय:	३/१/२	विभक्तिविधान	समानता
	कच्चायन	ततो च विभत्तियो०	२/१/३,-४	"	"
१९७	कातन्त्र	भूतकरणवत्यश्च०	३/१/१४, २३	ह्यस्तनीविधान	"
	कच्चायन	हीयोप्पभुति पच्चक्खे०	३/१/१३, १५	"	"

१०. विकरण

१९८	कातन्त्र	अन् विकरण: कर्तरि	३/२/३२	अन् विकरण	"
	कच्चायन	भूवादितो अ	३/२/१४	अ-प्रत्यय	"
१९९	कातन्त्र	तनादेरु:	३/२/३७	उ-विकरण	भिन्नता
	कच्चायन	तनादितो ओयिरा	३/२/२०	ओ-प्रत्यय	"
२००	कातन्त्र	स्वराद् रुधादे: परो नशब्द:	३/२/३६	न-विकरण	"
	कच्चायन	रुधादितो निग्गहीत०	३/२/१५	अ-प्रत्यय	"
२०१	कातन्त्र	ना क्र्यादे:	३/२/३८	ना-विकरण	समानता
	कच्चायन	क्रियादितो ना	३/२/१८	ना-प्रत्यय	"
२०२	कातन्त्र	नु: ष्वादे:	३/२/३४	नु-प्रत्यय	"
	कच्चायन	स्वादितो णुणा उणा च	३/२/१७	णु-प्रत्यय	"
२०३	कातन्त्र	दिवादेर्यन्	३/२/३३	यन् विकरण	"
	कच्चायन	दिवादितो यो	३/२/१६	य-प्रत्यय	"

११. आदेश

२०४/(१)	कातन्त्र	तेषु त्वेतदकारताम्	२/६/२७	अ-आदेश	"
	कच्चायन	सब्बस्सेतस्साकारो वा०	२/४/२१-२३, २५	"	"
२०४/(२)	कातन्त्र	ऋवर्णस्याकार:०	३/३/१६, २२	अकारादेश	"
	कच्चायन	अन्तस्सिवण्णाकारो वा	३/३/८	"	"
२०५	कातन्त्र	युवुञ्झाम्नाक्रान्ता:	४/६/५४	अक-आदेश	"
	कच्चायन	अनका युण्वूनं	४/५/१६; ६/१८	"	"
२०६	कातन्त्र	अद् व्यञ्जनेऽनक्	२/३/३५	अत् आदेश	"
	कच्चायन	इमसद्दस्स च	२/३/१७	अकारादेश	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२०७	कातन्त्र	टौसोरनः	२/३/३६	अन आदेश	समानता
	कच्चायन	अनिमि नाम्हि च	२/३/११	"	"
२०८	कातन्त्र	मनोरनुस्वारो धुटि	२/४/४४	अनुस्वारादेश	भिन्नता
	कच्चायन	नु निग्गहीतं पदन्ते०	४/१/१४; ५/१	निग्गहीत "	"
२०९	कातन्त्र	युवुझामनाकान्ताः	४/६/५४	अन आदेश	समानता
	कच्चायन	अनका युण्वूनं०	४/५/१६; ६/१८	" "	"
२१०	कातन्त्र	अव्ययीभावादकारान्तात्०	२/४/१, २	अम् आदेश	"
	कच्चायन	अं विभत्तीनमकार०	२/७/२६	अं "	"
२११	कातन्त्र	ए अय्	१/२/१२	अय् आदेश	"
	कच्चायन	ए अय	३/४/३३	अय "	"
२१२	कातन्त्र	इदमियमयम्पुंसि	२/३/३४	अयम् आदेश	"
	कच्चायन	अनपुंसकस्सायं सिम्हि	२/३/१२	"	"
२१३	कातन्त्र	अर् ङौ	२/१/६६	अर् आदेश	भिन्नता
	कच्चायन	अञ्ञेस्वारत्तं, ततो०	२/३/४०, ४६, ४८	आर् आदेश	"
२१४	कातन्त्र	ओ अव्	१/२/१४	अव् आदेश	समानता
	कच्चायन	ओ अव सरे	३/४/३२	अव "	"
२१५	कातन्त्र	त्वमहं सौ सविभक्त्योः	२/३/१०	अहम् आदेश	"
	कच्चायन	त्वमहं सिम्हि च	२/२/२१	अहं "	"
२१६ (१)	कातन्त्र	आ सौ सिलोपश्च	२/१/६४	आ आदेश	"
	कच्चायन	सत्थुपितादीनमा सिस्मिं	२/३/३९	आकं "	"
२१६ (२)	कातन्त्र	आकारो महतः कार्य०	२/५/२१	आ-आदेश	भिन्नता
	कच्चायन	महतं महा तुल्याधिकरणे पदे	२/७/१५	महा "	"
२१६ (३)	कातन्त्र	धुटि खनिसनिजनाम्	४/१/७१	आ-आदेश	समानता
	कच्चायन	जनादीनमा तिम्हि च	४/३/१५	" "	"
२१७	कातन्त्र	सामाकम्	२/३/१६	आकम् आदेश	"
	कच्चायन	तुम्हाम्हेहि नमाकं०	२/३/१, २	आकं "	"
२१८	कातन्त्र	आयिरिच्यादन्तानाम्	३/६/२०	आयिं आदेश	"
	कच्चायन	आकारन्तानमायो	४/४/४	आय "	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२१९ (१)	कातन्त्र	घुटि त्वै, ऐ आय्	२/२/२४; १/२/१३	ऐ-आय् आदेश	समानता
	कच्चायन	सखातो चायो नो	२/३/३१	आय "	"
२१९ (२)	कातन्त्र	ऐ आय्	१/२/१३	आय् "	"
	कच्चायन	ते आवाया कारिते	३/४/३४	आय "	"
२२०	कातन्त्र	धातोस्तृशब्दस्याऽऽर्	२/१/६८	आर् "	"
	कच्चायन	अञ्ञेस्वारत्तं	२/३/४०	आर "	"
२२१	कातन्त्र	औ आव्	१/२/१५	आव् "	"
	कच्चायन	ते आवाया कारिते	३/४/३४	आव "	"
२२२	कातन्त्र	औ आव्, गोरौ घुटि	१/२/१५; २/२/३३	आव् "	"
	कच्चायन	गाव से, योसु च०	२/१/२२-२४	आव "	"
२२३ (१)	कातन्त्र	जस् सर्व इः, अल्पादेर्वा०	२/१/३०-३२	इ-आदेश	"
	कच्चायन	सब्बनामकारते पठमो०	२/३/४, ५	ए-आदेश	"
२२३ (२)	कातन्त्र	औरिम्	२/१/४१	इ-आदेश	भिन्नता
	कच्चायन	योसु द्विन्नं द्वे च	२/२/१३	द्वे-आदेश	"
२२३ (३)	कातन्त्र	भृञ्हाङ्माङामित्०	३/३/२४-२६	इकारादेश	समानता
	कच्चायन	अन्तस्सिवण्णाकारो वा	३/३/८	इवर्णादेश	"
२२३ (४)	कातन्त्र	दामागायतिपिबतिस्था०	३/४/२९	ईकारादेश	"
	कच्चायन	याम्हि दाधामाठाहापा०	३/४/२१	"	"
२२३ (५)	कातन्त्र	तिष्ठतेरित्	३/५/४७	ईकारादेश	भिन्नता
	कच्चायन	ठापानमिई च	४/३/१८	इकारादेश	"
२२३ (६)	कातन्त्र	आत्खनोरिच्च	४/२/१२	इकारादेश	"
	कच्चायन	वदमदगमयुजगरहा०	४/१/२१	एय्य आदेश	"
२२४	कातन्त्र	रथोरेतेत्	२/६/२६	इत्-आदेश	"
	कच्चायन	इमस्सित्थन्दानि०	२/४/२४	इ-आदेश	"
२२५	कातन्त्र	इन टा	२/१/२३	इन-आदेश	"
	कच्चायन	अतो नेन	२/१/५२	एन-आदेश	"
२२६ (१)	कातन्त्र	ईदूतोरियुवौ स्वरे०	२/२/५६-५८	इय्-आदेश	समानता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

	कच्चायन	झलानमियुवा सरे वा	२/१/१९	इय आदेश	समानता
२२६ (२)	कातन्त्र	वाम्शसोः	२/२/६२	धातुवद्भाव	"
	कच्चायन	अं यमीतो पसञ्ञातो	२/४/१३	यं आदेश	"
२२७	कातन्त्र	ॠदन्तस्येरगुणे	३/५/४२	इर् आदेश	भिन्नता
	कच्चायन	जरमरानं जीरजिय्यमिय्या वा	३/४/२४	जीर "	"
२२८	कातन्त्र	दामागायतिपिबतिस्था०	३/४/२८	ईकारादेश	समानता
	कच्चायन	ठापानमिई च	४/३/१८	"	"
२२९ (१)	कातन्त्र	अघोषवतोश्च	१/५/८	उकारादेश	भिन्नता
	कच्चायन	एतेसमो लोपे	२/३/२३	ओकारादेश	"
२२९ (२)	कातन्त्र	ॠदन्तात् सपूर्वः	२/१/६३	उकारादेश	समानता
	कच्चायन	उ सस्मिं सलोपो च	२/३/४३	"	"
२२९ (३)	कातन्त्र	भवतो वादेरुत्वं संबुद्धौ	२/२/६३	"	"
	कच्चायन	भो गे तु	२/४/३३	भो–आदेश	"
२२९ (४)	कातन्त्र	अस्योकारः सार्वधातुकेऽगुणे	३/४/३९	उकारादेश	"
	कच्चायन	करस्सकारो च	३/४/३१	"	"
२३०	कातन्त्र	ईदूतोरियुवौ स्वरे०	२/२/५६–५८	उव् आदेश	"
	कच्चायन	झलानमियुवा सरे वा	२/१/१९	उव आदेश	"
२३१	कातन्त्र	गोहेरूदुपधायाः०	३/४/६३, ६४	ऊकारादेश	"
	कच्चायन	गुहदुसानं दीघं	३/४/५	दीर्घ आदेश	"
२३२ (१)	कातन्त्र	धुटि बहुत्वे त्वे	२/१/१९	एकारादेश	"
	कच्चायन	सब्बस्सिमस्से वा	२/३/१०	"	"
२३२ (२)	कातन्त्र	धुटि बहुत्वे त्वे०	२/१/१९–२०	एकारादेश	"
	कच्चायन	सुहिस्वकारो ए०	२/१/५०–५१	"	"
२३२ (३)	कातन्त्र	संबुद्धौ च	३/१/३९	"	"
	कच्चायन	घते च	२/१/६३	"	"
२३२ (४)	कातन्त्र	इरेदुरोज्जसि०	२/१/५५–५६	एकारादेश	भिन्नता
	कच्चायन	योस्वकतरस्सोज्झो	२/१/४५	अँकारादेश	"
२३२ (५)	कातन्त्र	एत्वमस्थानिनि	२/३/१७	एकारादेश	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

	कच्चायन	तुम्हाम्हानं तयि मयि०	२/२/२०; ३/५०	'तयि' आदि आदेश	भिन्नता
२३२ (६)	कातन्त्र	एत्वमस्थानिनि	२/३/१७	एकारादेश	"
	कच्चायन	नाम्हि तया मया	२/२/२६	तया-मया आदेश	"
२३३	कातन्त्र	रथोरेतेत्	२/६/२६	एत आदेश	समानता
	कच्चायन	एत रहिम्हि	२/४/२६	" "	"
२३४ (१)	कातन्त्र	इरेदुरोज्जसि०	२/१/५५, ५६	ओकारादेश	भिन्नता
	कच्चायन	वेवोसु लो च	२/१/४६	अकारादेश	"
२३४ (२)	कातन्त्र	अणि वचेरोदुपधायाः	३/६/९४	ओकारादेश	समानता
	कच्चायन	वचस्सज्जतनिस्मिमकारो ओ	३/३/२०	"	"
२३५ (१)	कातन्त्र	किम् कः	२/३/३०	क-आदेश	"
	कच्चायन	सेसेसु च	२/४/१९	"	"
२३५ (२)	कातन्त्र	चजोः कगौ धुड्०	४/६/५६	ककारादेश	"
	कच्चायन	कगा चजानं	४/५/१७	"	"
२३५ (३)	कातन्त्र	चजोः कगौ धुड्०	४/६/५६	"	"
	कच्चायन	सचजानं कगा णानुबन्धे	४/६/१७	"	"
२३६	कातन्त्र	को कत्	२/५/२४	कत् आदेश	"
	कच्चायन	कदं कुस्स	२/७/२०	कद "	"
२३७	कातन्त्र	का त्वीषदर्थेऽक्षे०	२/५/२५, २६	का-आदेश	"
	कच्चायन	काप्पत्थेसु च	२/७/२१	"	"
२३८	कातन्त्र	तहोः कुः	२/६/३३	कु-आदेश	"
	कच्चायन	कु हंहिंसु च०	२/४/१८, २०	"	"
२३९	कातन्त्र	किमः, अत् क्व च	२/६/३१-३२	क्व आदेश	भिन्नता
	कच्चायन	किस्स क वे च	२/४/१७	क-आदेश	"
२४० (१)	कातन्त्र	चजोः कगौ धुड्०	४/६/५६	गकारादेश	समानता
	कच्चायन	कगा चजानं	४/५/१७	"	"
२४० (२)	कातन्त्र	चजोः कगौ धुड्०	४/६/५६	गकारादेश	"
	कच्चायन	सचजानं कगा णानुबन्धे	४/६/१७	"	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२४१	कातन्त्र	हस्य हन्तेर्घिरिनिचो:	३/६/२८	घकारादेश	भिन्नता
	कच्चायन	हनस्स घातो	४/४/२	घात-आदेश	"
२४२	कातन्त्र	द्वितीयचतुर्थयो: प्रथम०	३/३/११; ६/६९	चकारादेश	समानता
	कच्चायन	व्यञ्जनन्तस्स चो०	३/३/१५	"	"
२४३	कातन्त्र	त्रिचतुरो: स्त्रियां०	२/३/२५	चतसृ आदेश	"
	कच्चायन	तिचतुन्नं तिस्सो चतस्सो०	२/२/१४	चतस्सो आदेश	"
२४४	कातन्त्र	कवर्गस्य चवर्ग:	३/३/१३	चवर्गादेश	"
	कच्चायन	कवग्गस्स चवग्गो	३/३/५	"	"
२४५	कातन्त्र	गमिष्यमां छ:	३/६/६९	छकारादेश	"
	कच्चायन	गमिस्सन्तो च्छो वा सब्बासु	३/३/१९; ४/४१	च्छ आदेश	"
२४६	कातन्त्र	हो ज:	३/३/१२	जकारादेश	"
	कच्चायन	हस्स जो	३/३/७	"	"
२४७	कातन्त्र	जा जनेर्विकरणे०	३/६/८१, ८२	जा-आदेश	"
	कच्चायन	ञास्स जाजन्ना	३/३/१३	"	"
२४८	कातन्त्र	रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्य:	२/४/४८	णकारादेश	"
	कच्चायन	रहादितो नो ण	४/१/२६	"	"
२४९	कातन्त्र	हन्तेस्त:	४/१/२	तकारादेश	भिन्नता
	कच्चायन	हनस्स घातो	४/४/२	घात आदेश	"
२५०	कातन्त्र	तव मम ङसि	२/३/१३	तव-आदेश	समानता
	कच्चायन	तव मम से	२/२/२२	"	"
२५१	कातन्त्र	स्थस्तिष्ठ:	३/६/७३	तिष्ठ आदेश	"
	कच्चायन	ठा तिट्ठो	३/३/११	तिट्ठ "	"
२५२	कातन्त्र	त्रिचतुरो: स्त्रियां तिसृ०	२/३/२५	तिसृ आदेश	"
	कच्चायन	तिचतुन्नं तिस्सो चतस्सो०	२/२/१४	तिस्सो आदेश	"
२५३	कातन्त्र	तुभ्यं मह्यं ङयि	२/३/१२	तुभ्यम् आदेश	"
	कच्चायन	तुम्हं मय्हं च	२/२/२३	तुय्हं आदेश	"
२५४ (१)	कातन्त्र	धुटां तृतीय:	२/३/६०	तृतीयवर्णादेश	"
	कच्चायन	हचतुत्थानमन्तानं०	४/५/५-६	"	"
२५४ (२)	कातन्त्र	द्वितीयचतुर्थयो: प्रथम०	३/३/११	"	"
	कच्चायन	दुतियचतुत्थानं०	३/३/४	"	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२५५	कातन्त्र	त्वन्मदोरेकत्वे ते मे०	२/३/३	ते-आदेश	समानता
	कच्चायन	तेमेकवचने	२/२/२९	"	"
२५६	कातन्त्र	त्रेस्त्रयश्च	२/१/७३	त्रय आदेश	"
	कच्चायन	तिचतुन्नं तिस्सो चतस्सो०	२/२/१४	तयो "	"
२५७	कातन्त्र	त्वमहं सौ सविभक्त्यो:	२/३/१०	त्वम् आदेश	"
	कच्चायन	त्वमहं सिम्हि च	२/२/१	त्वं आदेश	"
२५८	कातन्त्र	समान: सवर्णे दीर्घीभवति०	१/२/१; २/२/१५, १६	दीर्घ आदेश	"
	कच्चायन	योसु कतनिकास्तोपेसु०	२/१/३७, ३८	"	"
२५९ (१)	कातन्त्र	समान: सवर्णे दीर्घीभवति०	१/२/१	"	"
	कच्चायन	दीघं, पुब्बो च	१/२/४, ५	"	"
२५९ (२)	कातन्त्र	घुटि चासंबुद्धौ	२/२/१७	उपधादीर्घ	भिन्नता
	कच्चायन	ब्रह्मत्तसखराजादितो०	२/३/२८, ३०	आनं-आनो आदेश	"
२५९ (३)	कातन्त्र	अन्त्वसन्तस्य चाधातो: सौ	२/२/२०	दीर्घ आदेश	समानता
	कच्चायन	आ सिम्हि	२/२/५	आकारादेश	"
२५९ (४)	कातन्त्र	अस्य वमोर्दीर्घ:	३/८/११	दीर्घ आदेश	"
	कच्चायन	अकारे दीघं हिमिमेसु	३/३/२१	"	"
२६०	कातन्त्र	घढधभेभ्यस्तथोर्धोऽध:	३/८/३	धकारादेश	"
	कच्चायन	धढभेहेहि धढा च	४/३/६	"	"
२६१	कातन्त्र	मो नो धातो:, वमोश्च	४/३/७३-७४	नकारादेश	"
	कच्चायन	गमखनहनादीनं तुं०	४/४/७	"	"
२६२	कातन्त्र	युष्मदस्मदो: पदं पदात्०	२/३/१	नस् आदेश	"
	कच्चायन	पदतो दुतिया-चतुत्थी०	२/२/२८	नो-आदेश	"
२६३	कातन्त्र	दृशे: पश्य:	३/६/७६	पश्य आदेश	"
	कच्चायन	दिसस्स पस्सदिस्सदक्खा वा	३/३/१४	पस्स आदेश	"
२६४	कातन्त्र	प: पिब:	३/६/७०	पिब आदेश	"
	कच्चायन	पा पिबो	३/३/१२	"	"
२६५	कातन्त्र	द्वितीयचतुर्थयो: प्रथमतृतीयौ	३/३/११	प्रथमवर्णादेश	"
	कच्चायन	दुतियचतुत्थानं०	३/३/४	"	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२६६	कातन्त्र	अस्तेर्भूरसार्वधातुके	३/४/८७	भू-आदेश	समानता
	कच्चायन	असब्बधातुके भू	३/४/२६	"	"
२६७	कातन्त्र	तव मम ङसि	२/३/१३	मम आदेश	"
	कच्चायन	तव मम से	२/२/२२	"	"
२६८	कातन्त्र	तुभ्यं मह्यं ङयि	२/३/१२	मह्यम् आदेश	"
	कच्चायन	तुय्हं मय्हञ्च	२/२/२३	मय्हं "	"
२६९	कातन्त्र	तवन्मदोरेकत्वे ते मे०	२/३/३	में-आदेश	"
	कच्चायन	तेमेकवचने	२/२/२९	"	"
२७० (१)	कातन्त्र	इवर्णो यमसवर्णे०	१/२/८	यकारादेश	"
	कच्चायन	पसञ्ञस्स च	२/१/२१	"	"
२७० (२)	कातन्त्र	ङेर्य:	२/१/२४	यकारादेश	भिन्नता
	कच्चायन	आय चतुत्थेक०	२/१/५८	आय आदेश	"
२७० (३)	कातन्त्र	अनेकाक्षरयोस्त्व०	२/२/५९	यकारादेश	समानता
	कच्चायन	यवकारा	२/१/२०	य-आदेश	"
२७१	कातन्त्र	समासे भाविन्यनञ:	४/६/५५	यप् आदेश	"
	कच्चायन	सब्बेहि तूनादीनं यो	४/४/८	य-आदेश	"
२७२	कातन्त्र	ङवन्ति यै-यास्०	२/१/४२	याम्-आदेश	भिन्नता
	कच्चायन	घपतो स्मिं यं वा	२/४/६	यं आदेश	"
२७३	कातन्त्र	हन्तेर्वधिराशिषि०	३/४/८२, ८३	वध् आदेश	समानता
	कच्चायन	वधो वा सब्बत्थ०	४/४/३	वध-आदेश	"
२७४	कातन्त्र	युष्मदस्मदो: पदं पदात्०	२/३/१	वस्-आदेश	"
	कच्चायन	पदतो दुतिया-चतुत्थी०	२/२/२८	वो-आदेश	"
२७५	कातन्त्र	अनेकाक्षरयोस्त्व०	२/२/५९	व्-आदेश	"
	कच्चायन	यवकारा	२/१/२०	व-आदेश	"
२७६	कातन्त्र	जस्शसो: शि:	२/२/१०	'शि' आदेश	भिन्नता
	कच्चायन	तिचतुन्नं तिस्सो चतस्सो०	२/२/१४	तीणि-चत्तारि आदेश	"
२७७	कातन्त्र	सौ स:, तस्य च	२/३/३२, ३३	सकारादेश	समानता
	कच्चायन	अमुस्स मो सं, एततेसं तो	२/३/१३-१४	"	"
२७८	कातन्त्र	सर्वस्मिन् काले इत्यर्थे० (कात० वृ० टी०)	२/६/३६	"	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

	कच्चायन	सब्बस्स सो दाम्हि वा	२/५/१४	सकारादेश	समानता
२७९	कातन्त्र	आ सौ सिलोपश्च	२/१/६४	सि-लोप	"
	कच्चायन	सत्थुपितादीनमा०	२/३/३९	"	"
२८०	कातन्त्र	सदेः सीदः	३/६/८०	सीद आदेश	"
	कच्चायन	सदस्स सीदत्तं	४/५/३	"	"
२८१	कातन्त्र	ङसिः स्मात्	२/१/२६	स्मात् "	भिन्नता
	कच्चायन	स्माहिस्मिन्नं म्हा०	२/१/४८	म्हा आदेश	"
२८२	कातन्त्र	ङिः स्मिन्	२/१/२७	स्मिन् आदेश	"
	कच्चायन	स्माहिंस्मिन्नं म्हाभि०	२/१/४८	म्हि "	"
२८३	कातन्त्र	सर्वनाम्नस्तु ससवो०	२/१/४३	स्याम् "	"
	कच्चायन	घपतो स्मिंसानं संसा	२/३/१९	सं आदेश	"
२८४	कातन्त्र	सर्वनाम्नस्तु ससवो०	२/१/४३	स्यास् "	"
	कच्चायन	घपतो स्मिंसानं संसा	२/३/१९	सा-आदेश	"
२८५ (१)	कातन्त्र	स्वरो ह्रस्वो नपुंसके	२/४/५२	ह्रस्व आदेश	समानता
	कच्चायन	सरो रस्सो नपुंसके	२/७/२७	" "	"
२८५ (२)	कातन्त्र	ह्रस्वः	३/३/१५	" "	"
	कच्चायन	रस्सो	३/३/३	" "	"

१२. आगम

२८६	कातन्त्र	अड् धात्वादिर्ह्यस्त०	३/८/१६	अट् आगम	"
	कच्चायन	अकारागमो हीयत्तनज्ज०	३/४/३८	अकारागम	"
२८७	कातन्त्र	अतोऽन्तोऽनुस्वारो०	३/३/३१-३३	अनुस्वारागम	भिन्नता
	कच्चायन	निग्गहीतञ्च	३/३/९	निग्गहीत का आगम	"
२८८ (१)	कातन्त्र	इडागमोऽसार्वधातुक०	३/७/१-११	इट् आगम	समानता
	कच्चायन	इवण्णागमो वा	३/२/११	इवर्णागम	"
२८८ (२)	कातन्त्र	इडागमोऽसार्वधातुक०	३/७/१	इट् आगम	"
	कच्चायन	इकारागमो असब्ब०	३/४/३५	इकारागम	"
२८९	कातन्त्र	ब्रुव ईड् वचनादिः	३/६/८८	ईट् आगम	"
	कच्चायन	ब्रूतो वा तिम्हि	३/४/३९	ईकारागम	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

२९०	कातन्त्र	अव्ययसर्वनाम्नः०	२/२/६४	क-प्रत्यय	भिन्नता
	कच्चायन	सब्बतो को	२/३/१८	क-आगम	"
२९१	कातन्त्र	अन्तस्थो डे र्षो:	२/६/१९	थ-आगम	"
	कच्चायन	चतुच्छेहि थठा	२/८/४१	थ-ठ प्रत्यय	"
२९२ (१)	कातन्त्र	धुट्स्वराद् घुटि नुः	२/२/११	नु-आगम	"
	कच्चायन	योनन्नि नपुंसकेहि	२/४/७	नि-आदेश	"
२९२ (२)	कातन्त्र	आमि च नुः, चतुरः	२/१/७२, ७४	नु-आगम	समानता
	कच्चायन	नो च द्वादितो नम्हि	२/१/१६	न-आगम	"
२९३	कातन्त्र	अकारादसंबुद्धौ मुश्च	२/२/७	मु-आगम	भिन्नता
	कच्चायन	सिं	२/४/९	अं-आदेश	"
२९४	कातन्त्र	भुवो वोऽन्तःपरोक्षा०	३/४/६२	वकारागम	"
	कच्चायन	ब्रूभूनमाहभूवा०	३/३/१८	भूव-आदेश	"
२९५	कातन्त्र	लोकोपचाराद् ग्रहणसिद्धिः	१/१/२३	वर्णागम	समानता
	कच्चायन	तेसु वुद्धिलोपागमविकार०	२/८/६१	"	"
२९६	कातन्त्र	न य्वोः पदाद्योर्वृद्धिरागमः	२/६/५०	वृद्धि आगम	भिन्नता
	कच्चायन	मा यूनमागमो ठाने	२/८/५८	ए-ओ आगम	"
२९७	कातन्त्र	सुरामि सर्वतः	२/१/२९	सु-आगम	"
	कच्चायन	सब्बतो नं संसानं	२/३/८	सं-सानं आदेश	"

१३. लोकव्यवहार

२९८	कातन्त्र	लोकोपचाराद् ग्रहणसिद्धिः	१/१/२३	शब्दसिद्धि का उपाय=लोक-व्यवहार	समानता
	कच्चायन	क्वचि धातुविभत्तिप्पच्चयानं०	३/४/३६	"=बुद्धवचन	"
२९९	कातन्त्र	लोकोपचाराद् ग्रहणसिद्धिः	१/१/२३	शब्दसिद्धि में प्रमाण= लोकव्यवहार	"
	कच्चायन	अनुपदिट्ठानं वुत्तयोगतो	१/५/१०	"=शिष्टव्यवहार	"
३००	कातन्त्र	लोकोपचाराद् ग्रहणसिद्धिः	१/१/२३	लोकव्यवहार की प्रामाणिकता	"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

	कच्चायन	यदनुपपन्ना निपातना सिज्झन्ति	२/८/४८, ५०, ५२	निपातन की प्रामाणिकता	समानता
३०१	कातन्त्र	लोकोपचाराद् ग्रहणसिद्धिः	१/१/२३	लोकव्यवहार की प्रामाणिकता	"
	कच्चायन	पच्चमादनिद्दिट्ठा निपातना सिज्झन्ति	४/३/१	निपातन की प्रामाणिकता	"

इस सिंहावलोकन का संक्षेप सारणी में द्रष्टव्य है—

व्याकरण	समानता	भिन्नता	अन्वर्थता	साङ्केतिकता	लाघव
कातन्त्र	२८५	७०	३	—	—
कच्चायन	२८८	६७	—	३	२

* * *

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal